जीवंधर चरित्र

(हिन्दी)

शुभचन्द्राचार्य कृत चरित्र

के

आधार पर

पं० नत्थमल बिलाला कृत

और

लालचन्द् जैन B. A. LL. B.

प्रधान प्रकाशन् विभाग जैन

सराय, रोहतक ।

वीर संवत् २४६८

पहला संस्करण १०००]

मूल्य १)

प्रकाशकीय वक्तव्य
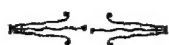
जीवंधर स्वामी का चरित्र संसार पार करने वाली आत्माओंके लिये परम आदर्श है। बालक, वृद्ध, स्त्री, पुरुष सब के लिये यह सुगमता से अपना कर्त्तव्य ज्ञान कराकर मोक्ष मार्ग की ओर ले जाता है यही कारण है कि संस्कृत, कनड़ी आदि भाषाओं में प्राचीन जैन आचार्यों ने जीवंधर स्वामी के चरित्र को कई तरह से वर्णन किया है। कथा ग्रन्थों का समझना और उसमें उपयोग लगाना गृहस्थ के लिये सुगम है।

कविवर नथमल जी विलाला ने इस चरित्र को हिन्दी भाषा में छंदबद्ध करके समाज का बड़ा उपकार किया है। छंदबद्ध कथा ग्रंथों का समाज में महान आदर रहा है। पद्यमें कर्ण और हृदय दोनों खिल उठते हैं और श्रोता वक्ता के सर्वांग से आनन्द का प्रवाह बह उठता है। पं० उग्रसेन जी जैन M.A. LL. B. रोहतक निवासी ने, जो भाषा छंद बद्ध शास्त्रों के अच्छे ज्ञाता वक्ता व रसिक हैं, इस कथा ग्रंथ को शास्त्र सभा में बड़े उत्साह के साथ पढ़ा और श्रोताओं को बड़ा आनंदित किया। यह ग्रन्थ अभी

तक प्रकाशित नहीं हुआ था और उसकी प्रति जो रोहतक में थी प्रायः अशुद्ध थी। पं० उग्रसेन जी ने उस प्रति का संशोधन करने और उसको प्रकाशित कराने का भार अपने ऊपर लिया और बड़े श्रम से उसे संशोधित किया तथा उसके प्रूफ संशोधन किये। इस विषय में पं० उग्रसेन जी का जितना आभार माना जाय थोड़ा है। संशोधन के बाद इसकी प्रति लिपि पं० रवीन्द्रनाथ जी न्यायतीर्थ ने बड़े श्रम के साथ की और उनके हम अति आभारी हैं।

इस ग्रंथ के प्रकाशन में श्रीमती सोनादेवी जी धर्मपत्नि बा० नानकचंद जी जैन एडवोकेट ने २२५) रु० की सहायता सुगंध दशमी व रविव्रत के उद्यापन में प्रदान की। तथा ४०) श्रीमती निर्मल कुमारी सुपुत्री बा० नानकचंद जी ने प्रदान किये। दोनों बहिनें अति धन्यवाद की पात्र हैं। यह ग्रन्थ श्री जैन मंदिर सराय रोहतक के प्रकाशन विभाग द्वारा प्रकाशित किया जा रहा है। हमारी भावना है कि यह ग्रंथ प्रकाशित होकर जिनवाणी और जिनधर्म का जगत में यश फैलावे। और इस ग्रंथ के पाठक अपने स्वपद की प्राप्ति करें।

सुगन्ध दशमी
वीर निर्वाण सं० २४६८
रोहतक

प्रकाशक—
लालचन्द जैन
प्रधान प्रकाशन विभाग
जैन मन्दिर सराय

प्राक्-कथन

जीवंधर स्वामी भगवान् महावीर के सम कालीन थे उनके चारित्र का जैनियों में वही स्थान है जो स्तोत्रों में भक्तामर स्तोत्र का सूत्रों में तत्वार्थ सूत्र का। जिस प्रकार तत्वार्थ सूत्र पर अनेकों आचार्यों के व्याख्यान प्राप्त होते हैं, उसी प्रकार जीवंधर स्वामी के चरित पर भी अनेक आचार्यों के ग्रंथ प्राप्त हैं।

श्री गुणभद्र स्वामी ने उनके चरित्र को उत्तर पुराण में लिखा है वादीभसिंह सूरि ने क्षत्र चूड़ामणि में उनके चरित्र को गूंथा है यह पद्य ग्रंथ है इस ग्रंथ से संतुष्ट न होकर वादीभसिंह सूरि ने गद्य चिन्तामणि बनाया जो मद्रास यूनिवर्सिटी के द्वारा M. A. के कोर्स में नियत हुआ है। यह उत्कृष्ट संस्कृत गद्य ग्रंथ है और कादम्बरी से टक्कर लेता है।

महाकवि हरिश्चन्द्र ने जीवंधर चम्पू संस्कृत में बनाया है शुभचन्द्राचार्य ने जीवंधर चरित पद्य में बनाया है इसके अतिरिक्त कितने ही ग्रंथ कनड़ी, तामिल भाषा में मिलते हैं।

क्षत्र चूड़ामणि की टीकायें हिन्दी भाषा में पं० निद्धामल जी, पं० जवाहरलाल जी, पं० मोहनलाल जी ने लिखी हैं ये सब गद्यग्रंथ हैं। हिन्दी पद्य में मात्र नत्थमल जी बिलाला ने ही शुभचन्द्र आचार्य के जीवंधर

चरित के आधार पर बनाया है, नथमल जी ने अनेक प्रकार के छंदों में सुगम भाषा द्वारा इसको रचकर गागर में सागर भर दिया है, जिसे पढ़ते व सुनते जी नहीं ऊबता।

जैन संप्रदाय में अनेक शुभचन्द्र विद्वान् आचार्य होगये हैं। ज्ञानार्णव के कर्ता १०वीं सदी में, श्रवण बेलगोल के भट्टारक ११वीं सदी में, सागवाड़ा के पट्टाधीश १६वीं सदी में सभी शुभचन्द्र के नाम से अलंकृत थे नहीं कह सकते इनमें से कौनसे शुभचन्द्र जीवंधर चरित के कर्त्ता हैं—ज्ञानार्णव के कर्त्ता शुभचन्द्र जैसी योग शास्त्र की ग्रन्थियां जीवंधर चरित में नहीं पायी जातीहैं। पं० नथमल जी ने इस चरित के कर्त्ता को "पुरानन के कर्त्ता" पद से विशिष्ट किया है। जीवंधर चरित के अतिरिक्त पांडव पुराण और श्रेणिक चरित भी शुभचन्द्र नाम के आचार्य द्वारा रचे हुये हैं। ऐसा जान पड़ता है कि ये तीनों चरित किसी एक ही शुभचन्द्र के बनाये हुये हों। इन तीनों ग्रंथों की संस्कृत भाषा से यह अनुमान करना अत्युक्ति न होगा कि सागवाड़ा के पट्टाधीश शुभचन्द्र ही इनके कर्त्ता हों भाषा ग्रंथ के कर्त्ता पं० नथमल जी ने अपना परिचय ग्रंथ के अन्त में स्वयं दे दिया है।

जीवंधर चरित के सभी पात्र कर्मशील हैं, काष्ठांगार के जीवन में भी उज्ज्वलता के चिह्न देख पड़ते हैं वेश्याओं द्वारा पान की पीक डालने पर उसका भी स्वाभिमान जागता है। वह भी जब वेश्या के यहाँ राजा का भेष बनाकर जाता है तथा वेश्या भी प्रेम भिक्षा चाहती है पर काष्ठांगार अपने व्रत को याद करके अटल रहता है। विजया भी अपने पति के युद्ध में नाश होने पर धैर्य रख पुत्र जनती है और निर्मोहिता से गंधोत्कट को सौंप देती है। जीवंधर स्वामी का तो कहना ही क्या है।

इस चरित को हमें केवल कथा समझ कर और इसके पात्रों की कृति को देख कर ही संतुष्ट नहीं हो जाना चाहिये, इस चरित्र का ध्येय आत्मस्वरूप की जाग्रति करना है। संसार की प्रत्येक आत्मा जीवंधर (जीवधारण करने वाली) है, जिसका पिता सत्यंधर सत्य रूप है। बाल अवस्था में ही जीवंधर के १ ही ग्रास से तृष्णा रूपी भस्म व्याधी रोग नाश हो जाता है। विषय वासना रूपी हाथी निरमद हो जाता है। तत्व परीक्षा का अद्भुत ज्ञान हो जाता है। जीवंधर का जन्म श्मशान में होना अत्यन्त उपयोगी है मृत्यु ही जन्मका कारण है प्रत्येक आत्मा पर कर्मरूपी। काष्ठाँगार का प्रभुत्व है जिस समय काष्ठाँगार जीवंधर को अपने दरबार में बाँध

मंगाता है और उनको मारना चाहता है उस समय उनका मित्र सुदर्शन बंध अवस्था में ही उनको ऊपर उठा ले जाता है और निरभय बना देता है। सुदर्शन ही उसकी हर समय रक्षा करता है। उस ही के प्रभाव से अष्ट कन्यायें रूपी अष्ट सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। सुदर्शन की मित्रता से हाथी, अग्नि, विष, परचक्र आदि के भय से जीवंधर मुक्त हो जाते हैं और अन्त में काष्ठांगार रूपी शत्रु पर विजय पाकर स्वपद पर सुशोभित हो जाते हैं।

सुगंध दशवीं
रोहतक

रवीन्द्र नाथ
न्याय तीर्थ हिन्दी प्रभाकर

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

जीवंधर चरित्र

मंगल स्तुति

* दोहा *

जयवंतौ वरतौ सदा, प्रथम रिषभ अवतार।
धर्म प्रवर्तन जिन कियौ, जुग की आदि मँझार॥

सवैया २३।

वर कनक गात सुन्दर शशि तैं, छविपेख छिपैं रवि की किरनें।
सतपंचचाप उन्नत सुमेरु जिमि, खिरै सुवानि अमी झरनें॥
शिवनाथ कहाँ तक गुण वरणौं, तुम देखत कर्म लगे टरने।
इमदेखि भया निहचै मनमें, नित नाभि तनुज रहिये शरणों॥

॥ चौपाई ॥

श्री सनमति वांछित फलसार। सतपुरुषन को करि उपकार॥
मुक्ति राज को विभव महान। ता करि प्राप्त होत सुख खान॥

॥ रोला ॥

काल अनादि अनंत सार सुख तृप्ति विराजै।
ज्ञान मूर्तिकर जुगति वितनु वसुगुण व्रत छाजै॥

ऐसे सिद्ध महंत करो मोकूं सुबोध वरु।
ता करि छिनमें भस्म होय संसार महातरु॥
वंदौ मैं आचार्य जोर कर शीस नवाई।
पंचाचार उदार आप पालैं सुखदाई॥
औरनकूं आचरन करावैं जग हितकारी।
मोकूं आतम ज्ञान देहु प्रसन्न है भारी॥
द्वादशांग को पाठ करे पाठक छिनमांही।
औरन कूं श्रुतसार पढ़ावें उर हित लाही॥
हैं उत्कृष्ट मुनिराज समुद भव शोषन हारे।
हमरी रक्षा करौ अहो भवतारन हारे॥

॥ चौपाई ॥

दर्शन ज्ञान चरित्र मनोग। सत्पुरुषनि करि ध्यावे योग।
ता करि मंडित साधु महान। देहु मोहि रतनत्रय दान॥

॥ छप्पय ॥

श्री गौतम गणराय धर्म उपदेश कियो वर।
पूज्यपाद मुनिराय बोध करता सुध्यान धर॥
समंतभद्र आनंद और अकलंक गुणाकर।
श्री जिनसेन मुनीश ज्ञान भूषण सुपरमगुर॥
शुभचन्द्र आदि मुनिराज को, करि प्रणाम उर धारकें।
बरनों चरित्र जीवक तनों, निज पर हित सु विचारकें॥

❀ परिचय ❀

॥ चौपाई ॥

प्रथम द्वीप जंबू मनहार। सब दीपन के मध्य उदार।
ज्यों उडुगन में चंद बखानि। त्यों सब द्वीपन में इह जानि॥
ताके मध्य सुदर्शन नाम। मेरु कनक मय अति अभिराम।
ताकी दक्षिण दिशा मँझार। भरत क्षेत्र शोभित मनहार॥
तामैं मगध देश शोभंत। ग्राम नगर पुर विविध लसंत।
वन उपवन सरिता अरु ताल। वापी जल करि भरी विशाल॥
सजल धरा शोभित मनहार। धान्यादिक उपजै जु अपार।
ठौर २ वापी जलभरी। क्रीड़ा करैं तहाँ किन्नरी॥
जामें लोक सुखी अधिकाय। दुखको नाम सुनै न लखाय।
सकल धनाढ्य पुनीत उदार। शास्त्र ज्ञान शुभ चित दातार॥
तहाँ राजग्रह पुर अभिराम। नृपन योग्य तामैं बहुधाम।
चित्रित शोभित हैं अधिकाय। निरखत मन को लेत लुभाय॥

गीतिका छंद

ठौर ठौर सुपौरिये तहँ राजते बहु तोरना।
कांति ते वर चौखने सित सोभिते ग्रह सो घना।
सांझ तैं पुनि भोर लों जहाँ गीत गावैं कामिनी।
जास में बहुदेव कौतुक देखते भर यामिनी॥

॥ चौपाई ॥

कमल पत्र सम नैन अनूप। सकल भामिनी लसै सरूप।
संजम शील विविध गुण युक्त। पति की आज्ञा में सब रक्त॥

तापुर को श्रेणिक भूपाल। धीर वीर सुन्दर गुणमाल।
नारि चेलना पति सोरंच। रूप पुरंदर सम शुभ चित्त॥
श्री धर्मा नामा मुनिराय। एक दिवस आये वन ठाय।
वंदन हेत सहित परिवार। चलो हिये धर हर्ष अपार॥
तहाँ जात मारग में भूप। कहीं इक गुफा विषै जु अनूप।
देखत भयो उद्योत अपार। अति प्रचंड तमको क्षयकार॥
अहो परम यह जोत महान। काहे तैं दीसे अमलान।
कै सुर बैठो गुफा मझार। फैलि रही रवि किरन उदार॥
ऐसो चितवत आयो राय। मुनि को देखत चित हर्षाय।
ध्यान विषै आरूढ़ मुनीस। आतम चितवन करैं मुनीस॥
अहो किधौं यह वृष को रूप। इन्द्र कहा है या सम तूप।
कै धरणेन्द्र भूमितें आय। अथवा है विद्याधर राय॥
किधौं दिवाकर ज्योति अनूप। तथा देह धरि काम सरूप।
अग्नि कुमार किधौं इहिं आय। ऐसी वितर्क करे नर राय॥
तिनिकूं बंदे लखि सिरनाय। आगै चालो नृप हरषाय।
तहाँ सुधर्मा नाम मुनीस। लख बाहन तज गयो महीस॥
वृक्ष अशोक तले थिति करे। आतम तत्व सुध्यावें खरे।
नाना गुण करि भूषित गात। शांत चित्त शोभित अवदात॥
अब अनेक अघ अग्नि समान। ताहि बुझावे मेह महान।
आराधन चारों युत संत। शिव मारग परकाश करंत॥
द्वादशांग श्रुत पायो सार। विषय वासना रहित बिकार।

भव्यनि के हितकारी सदा । वांछा रहित न आलस कदा ॥
निज आतम कूं ध्यान कराय । भव भटकन सूं रहित सु आय ।
इत्यादिक गुण सहित मुनीश । लखे सुधर्माचार्य जगीश ॥
तीन प्रदक्षिणा तिनिकूं दई । अष्ट प्रकारी पूजा ठई ।
विविध भांति थुतिकर नम भाल । भूमि विषै बैठो भूपाल ॥
ता पीछे गुरु मुखतेंधर्म । कहो भेद करि भूषित मर्म ।
भाव शुद्ध करके मुनिराय । नमस्कार कीनो सिरनाय ॥
पुनि पूछें मुनि को कर जोर । यह संसार दावानल घोर ।
ताहि बुझावन मेघ समान । तुमही हो स्वामी गुणवान ॥
हे स्वामी इत गुफा मँझार । कौन जतीश्वर हैं जगतार ।
कांति थकी भेद्यो तमभूर । कायोत्सर्ग ध्यान धर सूर ॥

अडिल्ल

ऐसे नृप के बचन, सुनें मुनिराज जू ।
कहत भये भूपति सुन, चित्त लगाय जू ॥
जीवंधर मुनि गुफा, विषै तप करत हैं ।
मोह कर्म निरवारन, कूं मन धरत हैं ॥

प्रश्न

॥ चौपाई ॥

हे स्वामी जीवंधर कौन । को कुल में उपजो सुख भौन ।
कौन हेत तप करत उदार । कहा विभव भाषौ निरधार ॥

दशन अंशु अमृत बरषाय। सकल सभा ऽस्नान कराय।
धुनि गंभीर थकी मुनिराय। कहत भये गुरु जगहित दाय॥
हे नरेन्द्र थिर चितकर श्रवै। जीवंधर चारित सुनि सबै।
जैसी विधि यह भयो उदार। सब जनकूं अचरज करतार॥
ताहि सुनत मल नसै नरेश। पाप रूप मन होय न लेश।
सकल क्षेम करता सुखकार। यह चरित्र भविजन मनहार॥
आधि व्याधि भय नैकु न होय। नहिं संसार भ्रमै पुनि सोय।
या चरित्र के सुनत महान। निसदिन सुख भुगतै अमलान॥

॥ दोहा ॥

तातें जीवंधर तनो, चरित कहों सुखदाय।
जन्म सुतरु जाके सुनत, सफल फलै अधिकाय॥

अडिल्ल

भरत क्षेत्र रमणीक इही सुखकार जू।
इस भव अर परलोक विषै निरधार जू॥
शुभ फल को दातार तास मधि जानिये।
है मागध वर देश देख सुख मानिये॥

पद्धड़ी छंद

जा देश विषै नर सुर समान। इन कल्प वृक्षसम सघन जान।।
फल भार थकी नय रही डाल। घर घर प्रति शोभित है विशाल॥
लावण्य रूप धारैं अत्यंत। नर धीर वीर गुणवंत संत
सुरनारि तुल्य सब शोभमान। नारी शोभित तहाँ शीलवान॥

सवैया २३

कामिनि डोलत हैं दसहूँ दिस नेवर घोर मचावन लागे।
गावत हैं मधुरे सुर सो पुनि कान कूं ललचावन लागे॥
शीत सुगंध समीर बहै तन लागत खेद बचावन लागे।
हँस फिरैं वन वीथिन मैं तिन देखत ही मन मोहन लागे॥

॥ दोहा ॥

तिन नगरनि के निकट ही, परी धान्य की राशि।
शोभित है गिरवर किधौं, करत देव तँह वास॥

अडिल्ल

दोई ग्राम आराम नगर पत्तन विषैं।
पर्वत शिखर मंझार महल पंकति लखैं॥
ठौर ठौर जिनभवन अधिक शोभा धरै।
ध्वजा शिखर फहराय लखत सुर मन हरै॥
तहाँ मनोज्ञ सरवर निरमल जलसूं भरे।
किधौं संत पुरुषन के मन हैंगे खरे॥
तामैं लषत सरोज भ्रमर गुंजत फिरैं।
करें केलि नर नारि खेद तन के हरैं॥
ठौर ठौर उपवन सोहैं जु सुहावने।
किधौं त्रियन के गुण राजत मन भावने॥
उपजावत हैं काम कमल पग पग विषै।
फल फूलन कर भरे वृक्ष लूमंत लसैं॥

सकल धान ता देश विषैं उपजैं भले ।
फल की भार थकी लूमत भूपर रलें ॥
पंथिनि को सत्कार करत मानौ मुदा ।
सुरनर रहे लुभाय देख कौतुक सदा ॥
विचरत तहाँ मुनीश देख उत्तम धरा ।
केवल ज्ञानी मनपर्यय धारी खरा ॥
अवधि ज्ञान उत्कृष्ट युक्त मुनिराज जू ।
श्रुत ज्ञानी जहाँ ध्यान धरें मन लाय जू ॥
सकल देश को अधिप पनौ यह धरतु है ।
सदा विभूति उदार सकल घर वसतु है ॥
छत्र चमर सिंहासन गहे धरें धरा ।
ताकरि देश मनोज्ञ शोभ धारै खरा ॥
है मागध वर नामा देश विराजई ।
हेम रतन करि भरो सुशोभा साजई ॥
हेम कोश करि भरो देश निर्भय सदा ।
कनक समान महंत वसत नर हैं सदा ॥

॥ चौपाई ॥

तामधि राजपुरी सुमहान । लसत सुचक्री पुरी समान ।
जामें शोभमान नर वसैं । भूपति को अति प्यारी लसैं ॥
नग्र कोट के शिखर मझार । तारागन मोती छवि धार ।
वीथिन में शशि दुति विस्तरे । हेम कुंभ की उपमा धरे ॥

श्री जिन मंदिर अति शोभंत । तिन ऊपर ध्वजगण फहरंत ।
दर्शन हेत भविक समुदाय । किधौं बुलावत हाथ उठाय ॥

कवित

ध्वज दंएडनि में किंकनीक को शब्द होन वर ।
बाजे बजत अनेक नाद तिनको अति सुखकर ॥
पुन्यवंत जीवन सों भाषित इह विधि मानो ।
जैसे हैं हम तुंग होहुगे त्यों तुम जानो ॥
रहित कपट नर तहाँ वसैं ज्ञानी धनवंते ।
दाता धरत विवेक प्रीति सबतैं जु करँते ॥
बड़ी रिद्धि को धरें मान उरमें नहिं धारें ।
सरल चित्र बुधवंत पाप किरिया निरवारैं ॥
जा नगरी में भंग शब्द कहुँ सुनियत नाहीं ।
भँग कुचन के विषै लखै जामें शक नाहीं ॥
तहाँ चपलता नहीं, है जु त्रिय नैन मंझारी ।
तहाँ न जाचै कोय ब्याह में जाचत नारी ॥

॥ चौपाई ॥

ताड़त है न तहाँ नर कोय । ताड़त हैं मृदंग पुनि सोय ।
पड़ि वौ डार पत्र में धार । और कहूँ दीसे न लगार ॥
ईर्षा भाव करें न लगार । धरैं परस्पर दान मँझार ।
चोर तनो दीसे नहिं नाम । कामीजन चित चोरे वाम ॥
तहाँ न भय नर धारे कदा । डरपत हैं कामीजन सदा ।

कृपण कुधि को उर नहिं धरें। मक्खी मधु को सँग्रह करें ॥
नीच शब्द भाषत नहिं जहाँ। नीची नाभि कहावत तहाँ।
हीन बुद्धि दीसे नहिं कोय। जो देखो तो बालक जोय ॥
ज्ञान हीन नर कोई नहीं। शील रहित नारी नहिं कहीं।
अफलवृक्ष कोई न लखाय। फल फूलन कर भरे अघाय ॥
तहाँ भूप सत्यंधर नाम। सत्य वचन बोलत अभिराम।
सत्पुरुषनिकरि माननयोग्य। कलाज्ञान गुण धरत मनोज्ञ ॥
जा प्रताप तें अरि भूपाल। पत्तन आदिक तज सु विशाल।
वसे पर्वतनि गुफा मँझार। करत सर्प तहाँ अति फुंकार ॥
शोभा अर्थ खड्ग कर माहिं। धारत नृप यामें शक नाहिं।
युद्ध निमित्त नृपके अवलोय। कोई न बैरी सन्मुख होय ॥
सुखी तहाँ हैं नर अधिकाय। सुर तरु की वांछा न कराय।
तहां भूप मन वांछित दान। करे सदा शोभित गुणवान ॥
धरे प्रताप ग्यान गंभीर। जीते अखिल देश बलवीर।
सप्त राज के अंग महान। धारत शक्ति अधिक बलवान ॥
ताके विजया रानी लसे। प्राणन सूं प्यारी मन बसे।
पतिव्रता गुणधरत विख्यात। महा विचक्षण है अवदात ॥
सकल त्रियामें विजया नारि। नृप के प्राण वल्लभा सार।
भई विख्यात यही बड़भाग। दुर्लभ है जग में सौभाग्य ॥
सुरपति के इन्द्राणी यथा। शशि के लसै रोहिणी तथा।
कामदेव के ज्यों रतिनारि। लक्ष्मण के ज्यों कमलासार ॥

लसत राम के सीता प्रेम । पार्वती शंकर के तेमि ।
धारत हँस हँसनी सार । तैसे नृप के विजया नारि ॥
निशिदिन विजया सँगरमाय। जाते काल न जाने राय ।
जीते हैं बैरी तिन भूरि । तातैं राजत निर्भय सूर ॥

॥ दोहा ॥

विषय सुखनमें मगन नृप, गुण नहिं धारे ऐन ।
नहिं प्रवीणता उर धरे, भाषत झूठे बैन ॥

॥ चौपाई ॥

पिशुन कर्म तें गुरुता हान । होइ नीच जनतें अपमान ।
इनतें कामी जन निरधार । डरत नहीं जु त्रिलोक मँझार ॥
दान विवेक विभव परमार्थ । ए सब गुण छोड़े नर नाथ ।
कामी पुरुष जगतके मांहि । निज जीवन छोड़े शक नांहि ॥
भयोविषय करि अंध नरेश । राजकाज बुधि तजी अशेष ।
कामी जन की चेष्टा क्रूर । वर्णन कहा करों अब भूरि ॥
धर्मदत्त नामा मंत्रीश । मंत्र कार्य में निपुण गरीश ।
पर के चितको जाननहार । दुर्लभ पंडित गुण सँसार ॥
एक दिवस चारणमुनि दोय। चारित्र कर उद्दीप्त जो होइ ।
तरुवल्ली कर वन मनहार । आवत भये जगत हितकार ॥
ज्येष्ठ ज्ञानसागर मुनि ईश । लघु गुणसागर जान महीश ।
ध्यान अभ्यास विषै परवीन। ज्ञानी कर्म करें बलहीन ॥
सुनिके मुनि आगमन पुनीत। पुरजन हर्षित होय सुनीत ।

अष्ट द्रव्य उत्तम ले संत। युत परिवार चले बुधवंत ॥
जुग मुनिके समीप जनजाय। तीन प्रदक्षिणा दे सिरनाय।
पूजा करि बैठे तिह थान। धर्म सुनन की तृषा महान ॥
ज्ञानजलधिमुनि भाषितसार। उन्नत धर्म सुनो अविकार।
व्रतउपवास भेद जा मांहि। शुभ फलको दाताशक नांहि ॥
मुनिमुखते सुनिधर्म विशाल। लीने उत्तम व्रत तत्काल।
कैयक शील धारते भये। कैयक प्रोषध वर व्रतलये ॥
कैयक निशिको तजो अहार। कंदमूल कैयक परिहार।
किनहू कियो ग्रन्थि परमान। किनहू लीनो उत्तम ध्यान ॥
कैयक दरशन भाव धरंत। कैयक दान विषै रत सत।
कैयक संजमभाव विचारि। करत भये तप भव्य उदार ॥
तहाँ इकभारवाह अघधाम। काष्टांगार जासको नाम।
वित्तरहित क्षुल्लक जुममान। व्रतनिमित्त मुनिकूं नयो आनि ॥

* दोहा *

अहोजतीश्वर देव तुम, व्रतदेवहु शुभहेत।
धर्म शुद्धता जीवकूं, सुरतरु सम सुखदेत ॥

पद्धरी छंद

रमनीक त्रया अतिरुपवान। सुरपति सम सुत लहि पुण्यवान।
पावत तुरंग अति पौनतेम। पर्वत समान गजतुंग जेम ॥
वहु वित्त वस्त्र शुभहर्म्यतुंग। सेवक हित करतारथ सुचंग।
नवनिधि संपति चक्रीसमान। पावत शुभते विद्या महान ॥

बांधव सुभक्ति वत्सल करंत। शुभ अन्य सुजस जग में लहंत।
वपु अति निरोग अर राजमान। चंवरनिकी पंकति विद्यमान॥

* दोहा *

अहो दलिद्री धर्म तें स्वर्ग संपदासार।
लहैं सुभविजन मुक्तके सुख रतन त्रय धार॥
द्रव्यरहित तन रोगमय षंढ दासता अंध।
पराधीन विडरूप तन नसे सकल कुलबंधु॥
कुजन्म कुनारी कुवज तन दोष बहुत अविचार।
पाप जोग ते ये सबै लहै जीव निरधार॥

॥ चौपाई ॥

अहो मित्र तुमअंगीकार। करो अणुव्रत पंचप्रकार।
अष्टमूल गुण शील धरेहु। निशि भोजन हिंसा तजदेहु॥
काष्टांगार भक्ति उरधार। बोल्यो मुनिसेती तिहिवार।
जो मोपै व्रत पले मुनीश। सो हित करता देहु जगीश॥
तब विचारि करके मुनिराय। कह्यो दलिद्री सों इह भाय।
पूरण पूनम शशि युतसार। ता दिन शील पालि निरधार॥
मुनि सेती व्रत ले शुध भाव। पालत भयो शील सुखदाय।
मुनि वचमें रत होय अतीव। उदर पूरना करै सदीव॥
ताही पत्तन में अभिराम। वेश्या रहे प्रभावती नाम।
रूप सु जोबन गर्व धरंत। सुतिय देवदत्ता निवसंत॥
पर ठगवे कूं चतुर सदीव। गीत नृत्य में निपुण अतीव।

अति सुकंठ नृप मानैवरा । नर कुरंग बंधन वागुरा ॥
सातखना तसु भवन उतंग । तिनको शोभित है सर्वंग ।
काटभार तिसनिकट उतारि । खेदित बैठो काष्ठांगार ॥

अडिल्ल

तब जुग गणिका ठई झरोखा आयकै ।
देत भई करताल चित्त हरषायकै ॥
चन्दन वसत सुगन्ध माल उर धार हीं ।
ता करि उठी सुगन्ध भ्रमर झंकार हीं ॥
मुख वारिज तंबोल रँग कर सोह ही ।
अंग मनोहर तिनको लख मन मोहई ॥
लखि तिलोत्तमा रूप सु तिनको राजई ।
उन्नत कठिन अनूप पयोधर राजई ॥

॥ कवित ॥

निज दृग कटाक्षकर विकल किये शशि सूर मनुज अमिताई ।
वय रूप सुगुन को धारत हैं मद निज मनमें अधिकाई ॥
गृह गवाक्ष तल तिनि देखौ तब भारवाह दुख भीनो ।
निन्द्य रूप देखत घिन उपजे पूरव पुन्य विहीनो ॥

* सोरठा *

धरे कोल सम केश, अल्प वस्त्र शतखंड को ।
निन्दित रूप अशेष, कियो न्हवन नहिं जन्मतें ॥

॥ चौपाई ॥

कहत देवदत्ता तिहिं वार। पद्मावती सुनो वचसार।
करिये यह वर है तुम जोग। सुख निमित्त कारण है भोग॥
सुनकर वचन रिसानी सोय। मद धर पान पीक मुख जोय।
गेरी भाखाह पै तवै। कस्तूरी करि वासित जवै॥
परी पीक ता ऊपर जाय। अति मलीन निन्दित अधिकाइ।
तब कौतूहल करिके वाम। करी हास्य ताकी अघधाम॥
जब उगाल ता ऊपर परो। काष्ठांगार कोप तब करो।
दुष्ट कनिष्ट अहो पापिनी। शील रहित अति धारै मनी॥

अडिल्ल

दुरगति पँथ दिखावन दीप समान हो।
कहा अपने मनमें धरत गुमान हो॥
निन्द्य रूप लह वृथा हास किम करत हो।
वित्त निमित्त शरीर वेच अघ भरत हो॥

॥ दोहा ॥

ऐसे बचन तू क्यों कहे, हमसों नीच गँवार।
राजमान सौभाग्यवर, धरैं रूप को भार॥
देह पँच दीनार जो, हम घर करे प्रवेश।
और प्रकार प्रवेश नर, नहिं पावे लवलेश॥
अरे दुष्ट भोजन वसन, घर धन आदिक हीन।
तेरे तन को देखिके, घिन उपजे मति हीन॥

जब वेश्या निर्घाटियो, गयो ग्रेह दुख पाय ।
आप पराभव पाय के, निन्दत कर्म अघाय ॥
ठगों न याकूं जो अवैं, निरघाटों नहिं याहि ।
तो मेरो जीवन वृथा, इमि चिन्तवन कराहि ॥

॥ चौपाई ॥

काष्ठ भार कूं नित प्रतिजाय । कृपण बुद्धि करि वित्त उपाय ।
भेली करी पाँच दीनार । कष्ट कष्टकरि तिहि निरधार ॥
एक दिवस धोवीघर जाय । काठ भारदे वसन लहाय ।
एक वेर पहिरन कै हेत । दिये रजक ने हर्ष उपेत ॥
मंजन विधिसों करि धीमान । माला वसन पहिर अमलान ।
द्रव्य सुगंध तेल लगवाय । भूषण पहिरे बहु अधिकाय ॥
पान खाय मुख कीनों लाल । शोभित कियो सुवर भूपाल ।
इह विधि सेती कर सिंगार । लीला सहित चल्यो तिसद्वार ॥
पद्मावती के गेह मँझार । तिष्ठो जाय हर्ष उरधार ।
घंटा कौतुक नाद कराय । विषयासक्त चित्त अधिकाय ॥
घंटा को सुन शब्द विशाल । आयो नर जानो तिहि काल ।
तब पद्मा हर्षित चित भई । घर में ताहि बुलावत भई ॥
तब वह ताके आंगन जाय । तिष्ठो तहँ पद्मा हरषाय ।
सन्मुख आय कियो प्रणाम । कामवाण पीड़ित अघधाम ॥
तब इन दई पँच दीनार । ताके सुख की इच्छा धार ।
गुण लावण्य रूप संपदा । ताहि देख मोहित भयोतदा ॥

अडिल्ल

अस्ताचल पै सूर्य गयो तब जाय के।
कामी जन की दया कियो उर लायके॥
बड़े पुरुष की चेष्टा है जग माहिं जू।
केवल पर उपकार निमित्त बताय जू॥

॥ दोहा ॥

एक रूप जग कूं करत, फलो नीलतम घोर।
अपनो औसर पायके, कौन धरे नहिं ज़ोर॥

कुसुमलता छन्द

दिशा वधू भई श्याम छिपति रवि, वारिज अंक मलीन भये।
नाथ गये ते कौन जोषिता, आकुलता उर नाहिं लये॥
निशावलोकन हारे निशकरि, करि उद्योत शोभे जु खरो।
दिशा समूह प्रकाशित कीनी, अंधकार को पूर हरो॥
कामीजन के चित्त प्रफुल्ले, कुमुदनी परकाश भई।
उदै भयो शशि पूर्ण तमोहरि, निशि में अति शोभा जुथई॥
लख निशकर उद्योत कहो तब, कहो बाले तिथ आज कहा।
सकल मनोरथ पूरन हारी, तू शोभित सुन्दर जु महा॥

चाल छन्द

हे नाथ आज उजयारी, पूनौ शशि किरण प्रसारी।
सुनि बचन तास उर मांही, शुभचित व्रत याद करांही॥

मैं तो मुनि पै व्रत लीनो, शुभ गति दायक सुख भीनो।
पालों यह जतन कराई, प्राणन तैं भी अधिकाई ॥

कवित्त

भोगन करिके कहा किये दुख अधिक दिखावें।
पाप प्रगट ये करनहार संसार बढ़ावें ॥
जाननहार जे तत्वज्ञान के हैं जग माहीं।
तिनकर साधन जोग कदाचित हैं जे नाहीं ॥

॥ चौपाई ॥

भोगनिविषै विविधि यह जीव। तृप्त न होत कदाच सदीव।
अग्नि काष्ठतें तृप्त न होय। उदधि तृप्त नहिं आवत तोय ॥
ज्यों ज्यों सेवे विषय अघाय। त्यों त्यों चाह बढ़ै अधिकाय।
जैसे अग्नि तापतें खाज। बढ़त अंग में करत इलाज ॥
सपरस इन्द्री राग वसाइ। जैसे गज छिन मांहि नसाइ।
त्यों हू इनके सेवनहार। जग में कहा नसैं न विचार ॥

॥ दोहा ॥

रसना सुख वश होयके, मांस लोलुपी मीन।
कंठ छिदावै बड़िश तें, औंड़े जलमें दीन ॥

अडिल्ल

नासामत्त भ्रमर इन्द्रिय वश होय के।
सांझ समय सुखकार गंध में मोह के ॥

पद्म कोष के विषैं करै थिति जाइ के।
संकोचित भये अंबुज प्राण नसाय के ॥

॥ कवित्त ॥

लख शुभ रँग पतँग नेत्र इन्द्रिय वश होई।
दीपक अग्नि मझारि भस्म कूं प्रापति होई ॥
और पुरुष जो नेत्र विषय धारै अधिकाई।
नाश कहा नहिं लहैं जगत में अति दुखदाई ॥

* दोहा *

देखो मृग वनमें बसत, श्रवण विषय रस लीन।
छोड़ सुखन कूं लालची, तजै प्रान मति हीन ॥
इक इक इन्द्रियके विषय, सेवत जीव अपार।
महा कष्ट सहिके मरें, याही जगत मँझार ॥
जे पाँचों सेवें सदा, कहा तजे नहिं प्रान।
प्रेरे कर्म किसान के, बहैं सुहल जग थान ॥

॥ चौपाई ॥

ऐसे चित में करत विचार। भार वाह कर मिस तिहवार।
आयो उलटि आपने गेह। व्रत रक्षा पर याको नेह ॥
वेश्या ताकी वाट निहार। व्याकुल हो जोवति निजद्वार।
भारवाह आयो नहिं जान। कियो विषाद उदास महान ॥

॥ दोहा ॥

एक दिवस यापुर विषै, राजा महल मझार ।
हास्य करत विजया सहित, अचरज को दातार ॥

॥ चौपाई ॥

सुर दत्तादिक वेश्या सवै । शुभ नाटक आरंभो तवै ।
रानी सब गनिका अवलोय । पद्मावती लखी नहिं कोय ॥
काहूसों रानी इहि भाय । पूछी पद्मा क्यों नहिं आय ।
भारवाह को सब विरतांत । आद्योपान्त भयो तिहि भाँति ॥
जा दिन तें वह वंची मात । ता दिन तें पद्मा अवदात ।
करत शृंगार न नृत्य विलास । रहत निरंतर निज आवास ॥
तासु वचन सुनके नृप जोय । चित्त विषै अचरज अति होय ।
पद्मा को विरतान्त जु सवै । रानी नृपसूं भाषो तवै ॥
रानी वचन सुने जु नरेश । उरमें अचरज कियो विशेष ।
ताहि बुला पूछी नृप तवै । वचन यथार्थ कहो निज सवै ॥
भारवाह के देखन काज । निज सेवक भेजे महाराज ।
बहुत जतनसों कियो तलाश । ताकूं ल्याये भूपति पास ॥
खंड वसन धारे विड़रूप । तासों इह विधि पूछे भूप ।
देके ताहि पंच दीनार । पद्मा छाँडी कौन प्रकार ॥
रूप वसन अरु धनसों हीन । पर औगुण देखन परवीन ।
पद्मामें क्या दोष निहार । सो मोसों सब कहो विचार ॥
राज्यमान धनवान विशेष । हे नृप यह राजत है वेष ।

याको मेरो कौन संजोग । वसन हीन नहिं रूप मनोग ॥
नृप कारन जानो तुम देव । धारो मद मोकूं लख एव ।
नीच जानि इन गेरी पीक । किम इच्छै इम कहत अलीक ॥

कवित्त

भारवाह के वचन सुने वेश्या उर लाई ।
निठुर वचन मैं कह्यो सुमर मनमें थिर लाई ॥
बिलख वदन तब भई देख नृप पूछ्यो ताकूं ।
कहो भद्र विरतंत सकल ऐसो सो याको ॥
भारवाह सों फेर कहो भूपति दुति करता ।
कैसी विधि वह कार्य कियो अचरज को करता ॥
याने गेरी पीक दई दीनार पँच तब ।
तजी कौन विधि याहि कहो सांची जु बात सब ॥
पूनम को व्रत शील लयो पूरव सुखकारी ।
भई हिये मुरझाय देख शशि की उजियारी ॥
गयो आपने ग्रेह वचन कहके हितकारी ।
सुनि करि अचरजवंत भयो नृप आदिक सारी ॥
देखो यह आश्चर्य शील व्रत सार धराई ।
वेश्या के घर जाय तासु रक्षा जु कराई ॥
धन्य पुरुष जग माहिं सार ये ही गुणवंतो ।
या सम धरनी माहिं नहीं कोई बुधिवंतो ॥

॥ चौपाई ॥

उरमें विस्मय धर नरराय । भूषण वसन दिये बहुभाय ।
कला विज्ञान सहित सुखहेत । पद्मा दीनी हर्ष उपेत ॥
राजा सूं पायो सन्मान । करन लगो तब सेव महान ।
व्रतकर इस भव परभव माहिं । उत्तम फलको को न लहाहिं ॥
कोटिक ग्राम वित्त बहु पाय । अनुक्रमते पायो सुखदाय ।
सेवक सेवा करें अनेक । परम रिद्धि लहि धरत विवेक ॥

* दोहा *

एक दिवस अवनीश इमि, करि चिंतवन निज चित्त ।
भूमि भार याकों अवै दूं, सुख सिद्धि निमित्त ॥
होय निराकुल विषय सुख, भोगूं मैं निरधार ।
चिन्ता करि पीड़ित रहें, तिनकूं सुख न लगार ॥

॥ चौपाई ॥

धर्मदत्त आदिक मंत्रीश । नृप इच्छा में हैं जु गरीश ।
कहत भये भूपतिसों तबै । बिनती एक सुनों नृप अबै ॥
है नृप पर नर की परतीत । राजा करें नहीं यह नीति ।
अहि सम परजन को इतवार । करे कहा भूपति निरधार ॥
तीन वर्ग नृप सेवें सदा । करे विरोध न इनमें कदा ।
परंपरा सुख भोग अनूप । क्रमतें होय मोक्ष के भूप ॥

॥ अडिल्ल ॥

भोगनि के अर्थी नरेश जे हैं सही ।
धर्म अर्थ तिन तजवो जुगतो है नहीं ॥
धर्म अर्थ तैं सुख भोगैं चिरकाल जू ।
मूल बिना सुख कहा सुनौ भूपाल जू ॥

॥ चौपाई ॥

सौंप नियोगी कूं भूभार । जे सेवति हैं काम उदार ।
सौंपति पय बिलावकूं तेह । सुखकी इच्छा चाहत जेह ॥
पूर्व अपर सब अर्थ विचार । कीजे कारज कर निरधार ।
और प्रकार करे भूपाल । दीर्घ ताप लहे दरहाल ॥
ऐसे प्रतिबोध्यो सचिवेश । तो भी छोड़ो न हठ लवलेश ।
होनहार सूं कहा बसाय । नर की मत ऐसी ही थाय ॥
तब भूपति ताकूं हरषाय । राज भार दीनो सुखदाय ।
पुन्य उदय तें काष्ठांगार । सुखी भयो ले राज उदार ॥

* कवित्त *

तब राजभार कूं देके नृप तिय युक्त विषय सुखनमें रातो ।
निज इच्छा करि रमणीक विषयमें रमत भयो मदमातो ॥
कबही निज मंदिर जल थल में केलि करत सुखदाई ।
कबही गिरि की दिव्य भूमि लखि रह्यो तहाँ विरमाई ॥
काष्ठांगार तब नृप कर दीनी भूमि पाय सुखकारी ।
व्रत करि उपजो पुण्य महा फल शुभ भोगति अधिकारी ॥

नरपतिगण राजत स्वछंद तिनको प्रताप कर क्षीनो।
प्रबल पुन्य सेती अति अद्भुत विक्रम कर जस लीनो ॥

॥ छप्पय ॥

व्रत करिके सुख होय मिले त्रिया शीलखान वर।
स्वर्ग संपदा लहे लहे चक्रीपद सुखकर ॥
व्रत करिके सब होय सिद्धि बहु यश विस्तारे।
तीर्थंकर पदपाय मोक्षलहि वसुगुण धारे ॥
व्रत कर जीवन कूं वस्तु बहु दुर्लभ होत सुलभ सदा।
यातें शुभ चित्त भविजन करो नहीं प्रमाद धारो कदा ॥

॥ प्रथमोऽध्यायः समाप्तं ॥

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

॥ छप्पय ॥

वंदौं आदि जिनंद धर्म जासों अति शोभित।
धारत लक्षण वृषभ सकल सुरनर मन मोहत ॥
युग की आदि मँझार धर्म उपदेश कियो वर।
सुख अनंत कर तृप्त, मोह मद रागद्वेष हर ॥
महिमा अनंत भगवंत प्रभु, शुक्ल ध्यान धर कर्महन।
युग हाथ जोर 'नथमल' नमत, राख मोह निजपद शरण ॥

❀ कुन्डलिया ❀

परम देव इस जगत में प्रथम ऋषभ अवतार ।
जयवंतो जग में रहैं भविजन तारनहार ॥
भविजन तारनहार कर्म भू विधि दरसाई ।
दया सिंधु जगतात सकल जीवन सुखदाई ॥
सुखदाई सँसार में कथित एक जिनको धरम ।
ता करि शिवपुर जायके वरै मुक्ति रमनी परम ॥

॥ चौपाई ॥

एक समय निश अन्त विचार । अल्प नींद युत सेज मँझार ।
विजया सोवत सुप्न लखाय । भयके जे सूचक अधिकाय ॥
फेर प्रभात समय अवलोय । बंदी जन जस गावत सोय ।
बाजन को सुनि नाद महान । जागी मृगनैनी सुखदान ॥

॥ जलज छंद ॥

तब उठ उदार कर न्हवनसार तन वसनि धार वर कर शृंगार

॥ चौपाई ॥

गई शीघ्र भूपति ढिग वाम । विस्मय सहित कियो प्रणाम ।
अर्धासन पर बैठत भई । स्वपनों का फल पूछत भई ॥
पहिले पहिर विषै भूपाल । सुपने मैं देखे [illegible] ।
इनको शुभफल अशुभअतीव । जानत हो वर उत्तम [illegible] ॥
लखो अशोक वृक्ष मैं सार । कोमल [illegible] छाँह उदार ।
फेरि पवनतें भूपर परो । यों लख [illegible] उरमें [illegible] ॥

पुनि वाही तरुमें भूपाल । आठ लखी जु अनूपम माल ।
तिनकी पास रही महकाय । तिनमें भ्रमर रहे लुभ याय ॥
हे भूपति ये सुपने तीन । तिनको फल तुम कहो प्रवीन ।
इनको फल नृप जान विरूप। कछू दुखित चित बोले भूप ॥

* मरहठा छंद *

तुम लखो अशोक वृक्ष अति छोटो वसु शाखा युतवाला ।
सुनो तास फल सुत हो तिहारे भोगे राज बिशाला ॥
पुनि लखी आठ शाखा में लटकत माला आठ सुखकारी ।
फल सुनो तासु तुमरे सुत सुंदर परनेगो वसु नारी ॥
वर तरु अशोक पहिले मैं देखो अहो नाथ सुखदाई ।
पुनि पवन योगतें गिरो भूमि पै सो फल मोहि बताई ॥
अब ताको फल पूछै मत बाला है खोटो अति भारी ।
तुम सुनो नार काल यह मेरो सूचत है दुख भारी ॥

* चौपाई *

सुनत वचन नृपके तिहिकाल। हाय नाथ इम कह तत्काल ।
मूर्छित होय पड़ी भू माहिं । सुधिबुधि ताहि रही कछु नाहिं ॥
रानी को मूर्छित लखराय । आप अचेत भयो अधिकाय।
दुख समीप आये तैं सही । होत अनिष्ट को नर कै नहीं ॥
तब शीतल कीनो उपचार । भये सचेत भूप तिहि वार ।
सावधान भूपति जब भयो । रानी कूं प्रतिबोधत ठयो ॥
सुपने को भल कह तिहिवार । प्रान रहित तूं मोहि निहार ।

सुपने देखत हैं बहु लोय । फलदाई कोई कहुँ होय ॥
विपति नाश कूं शोक अपार । कहा करे नर जगत मँझार ।
अति दुख नाशन के हे हेत । कहा अग्नि इच्छे शुभ चेत ॥
शोक करे होय रोग अतीव । पुन उपजत है पाप सदीव ।
पाप होय अरु दुक्ख अपार । यातें शोक तजो परनार ॥
सब अनिष्ट नाशन के हेत । एक धर्म साधो शुभ चेत ।
जैसे गरुड़ आवते देख । नशै सर्प इम जानि विशेष ॥
शोक वृक्ष कूं छेदन हार । एक धर्म जानो निरधार ।
जैसे दीप बले तम भूर । होय छिनक ही माहिं दूर ॥
या प्रकार संबोधन पाय । चिन्ता शोक खोय थिरथाय ।
रमण सँग निज रमती भई । सुखमय है दुखकूं विसरई ॥

॥ कवित्त ॥

कछु यक बीतो काल तबै विजया सुखदाई ।
दिवतें चयो सु जीव गर्भ धर हर्ष बढ़ाई ॥
पड़त सीप में बूंद महाघन की सुखकारी ।
उज्ज्वल मोती होय जेम विजया सुतधारी ॥

॥ चौपाई ॥

पुनि रानी के चित्त मझार । भयो दोहला इक निरधार ।
क्षीणगात मुख पीत लखाय । उदासीनता किधौ बताय ॥
दोहलो सहित लखी निजनार । नृप पूछी हठ कर तिहवार ।
"क्योंही क्योंही" ऐसे कही । दीरघ स्वांस लेत सो वही ॥

धर्म क्रिया करिवे की चाह। मो उर वरतत है नरनाह।
पुनि मयूर यंत्र के माहिं। बैठ भ्रमूं नभ यह चित माहिं॥
ऐसो दोहलो सुनत प्रमान। खोटे स्वप्नों के फल जान।
करत भयो तब पश्चाताप। निज रक्षा तत्पर चित आप॥

अडिल्ल

सार वचन सचिवन के ये माने नहीं।
भाग्यहीन हों मैं निश्चय कीनी सही॥
रहित विवेक पुरुष जे जगमें हैं महां।
कर्म उदय संतन के वच मानैं कहां॥

॥ चौपाई ॥

निकट विपति आवे अधिकाय। तव मूरख कहा जतन कराय।
अग्नि प्रचंड लगे घर जले। खोदत कूप काज कहा सरै॥
पश्चाताप चिन्ता अति शोक। मोकूं अब करनो नहिं योग।
अपनो वंश तनो मोहे सार। जतन सदा करनो निरधार॥
निज कुल रक्षा हेत नरेश। के की यंत्र करायो वेश।
भावी काल तने अनुसार। होत बुद्धि जीवन की नार॥
केकी यंत्र कियो भूपाल। रानी बैठाई दर हाल।
कियो गमन आकाश मझार। पूजा दिक कीनी तिहवार॥
दोहला पूर्ण लखे नृप नारि। जानो हाल महाँ फलसार।
सुख कर सहित भई तब सोय। निश्चय त्रिय मूरखनी होय॥
चित्त में खेदित होय नरेश। शल्य सहित तिष्ठौ वर भेष।

सदा धर्म को करत विचार । दीरघ दरशी है नृपसार ॥
लख २ सहित गर्भ निजवाम । उरमें हर्ष धरे अभिराम ।
दुख के पीछे सुख उद्योत । अतिशय सहजै नर के होत ॥
महा कृतघ्नी काष्टांगार । और कृतघ्नी लीने लार ।
नृपके मारन को सु उपाय । सदा विचारे चित्त अधिकाय ॥
पराधीन पुनि होय जु जीव । भूमि विषै जीवे जु सदीव ।
तिनको जीवो ऐसो जान । कटी पूंछ के वृषभ समान ॥
जो पुरुषारथ धरे महान । सोई है जग में बलवान ।
सिंह सदा बन माहिं वसंत । किन मृगेन्द्र पद दियो महंत ॥
मैं ही आप शक्ति बहु धरों । पराधीनता कैसे करों ।
अपने हाथ करों इहराज । तातें सरें सकल मो काज ॥
ऐसे चित्त में करत विचार । सचिवन सों भाषे तिहवार ।
राज द्रोह मैं करों सुचेत । नृप पद सुख पावन के हेत ॥
सुनो सचिव मेरी इक बात । स्वप्न लखौ मैं पिछली रात ।
राक्षस एक दुष्ट भयकार । मैं देख्यो संशय न लगार ॥
तिह मोसूं यह वचन उचार । मोहि जान राक्षस निरधार ।
जो मेरो बच माने नहीं । सचिवन जुत दुख पावे सही ॥
मैं भाषो तेरे बच कहा । सो पुनि बोलो निरलज महा ।
नृप को मार लेय तू राज । सचिवन जुत भोगो सुखसाज ॥
सुनके धर्मदत्त मंत्रीश । मनमें कियो विचार गरीश ।
दुष्ट जीवको चरित विख्यात । वचन द्वार किम वरनो जात ॥

इह पापी निज चित्त मँझार। नृप मारन कूं करत विचार।
मोही वचन कहत जु बनाय। निहचै मूढ़ लखो दुखदाय॥

॥ अडिल्ल ॥

मनमें तो कछु और कहत कछु और है।
करत कछू सूं कछू जान नहीं परत है॥
पापी जन की चेष्टा कैसे कर कहूँ।
सौ रसना कर कथन करत अंत न लहूँ॥
दुष्ट जनन की रीति वचन सीतल कहैं।
कारज करत कठोर प्रगट अपजस लहैं॥
ज्यों थूहर को दूध स्वेत दीसै सही।
फल जाको दुखकार जान संशय नहीं॥
करो बहुत उपगार दुष्ट नरकूं सदा।
सो मानें नहिं किंचित् हू मन में कदा॥
दूध पिलावे बहुत सर्प कूं ल्याय के।
प्राण हरे तत्काल सु विष उपजाय के॥

॥ चौपाई ॥

जो ऊँचे आसन आरूढ़। तो भी खलसों खल ही मूढ़।
कनक सिंघासन पै थिति जोय। बैठो वायस हँस न होय॥
आत्म मानहारी वच तास। धर्मदत्त सुनि वचन प्रकाश।
निज स्वामी की भक्ति उदार। को चाहत नहीं जगत मँझार॥
जो तुम सुपनो देखो मित्र। तो भी मो वच सुनो पवित्र।

भूपति है जीवन के प्राण । तिन जीवन सब जीवें जान ॥
इष्ट अनिष्ट राय के होय । तो सब जन सुख दुख अवलोय ।
नृप द्रोही जो होय अतीव । पंच पाप सो लहे सदीव ॥
पर को शिक्षा देय नरेश । तातें वे गुरु जान विशेष ।
तिनसों द्रोह किये अवलोय । गुरु द्रोही सों कहा न होय ॥
नृप देवन के देव महान । सबकी रक्षा करें सुजान ।
नृप सबमें दीपति है जोय । देवघात तिनि मारत होय ॥
चोर शत्रु भय छेदत भूप । जीवन कूं सुख करत अनूप ।
यातें भूप पिता सम जानि । ता मारे पितु घात प्रमान ॥
गुरु आदिक पातक पुन जेह । मनुषन कूं उपजत हैं तेह ।
नृप के घात करन तें वीर । यातें यह कारज तज धीर ॥
ता नर को अपजस जग होय । दुरगति लहे हाथ में तोय ।
राजद्रोह सम पाप महान । हुओ न होय जगतमें आन ॥
ऐसे न्याय वचन इन चये । ताकूं मरम छेद सम भये ।
जग परकासन हार दिनेस । घूघू कों न रुचै सो लेश ॥
स्वामी द्रोह निज निन्दा दोष । गुरु आदिक पातक अघपोष ।
इनकूं देखति भयो न सोय । अर्थी दोष लखे न कोय ॥

* दोहा *

साल्यो काष्ठांगार को, मदन नाम मतिवान ।
कहत भयो खल ये वचन सुनवे जोग न कान ॥

अडिल्ल

तैं मन कियो विचार नृपति कूं मारि के।
सबकी रक्ष्या करूँ सु हिये विचार के॥
यह विचार मत करो मित्र मन में कदा।
नृप की रक्षा किये होत शुभ ही सदा॥
पुनि तैं कियो विचारि भूप मारौं नहीं।
तो सबको होय घात जान निश्चय सही॥
सचिवन की रक्षा जु करे नृप मार के।
कौन कार्य लक्ष्मी तू लहै विचारि के॥
साले के सुनि वचन जु काष्ठांगार जू।
कियो कोप अधिकाय मूढ़ अविचार जू॥
तृण समूह के विषै अग्नि कूं डारिये।
कहा न प्रज्वलित होय हिये सु विचारिये॥

॥ चौपाई ॥

धर्मदत्त मंत्री अविकार। नृप उपदेश तनो दातार।
वंदीग्रह में दीनो ताहि। दुष्ट कहा चेष्टा न कराइ॥

* दोहा *

दुष्टन सूं मसलत करी, पापी काष्ठांगार।
भूपति के मारन विषै, बुद्धि करी तिह वार॥

॥ चौपाई ॥

सो पापी नृप मारन काज । चलो सँग ले सेना साज ।
भुजग बदन में जो पय परे । सो विष रूप तुरत अनुसरे ॥

॥ दोहा ॥

सेना काष्ठांगार की गई, नृपति के द्वार ।
मर्यादा कूं लोपती, ज्यों समुद्र को वारि ॥

॥ चौपाई ॥

द्वारपाल लखि सेन विशाल । व्याकुल चित्त भयो दरहाल ।
सिंहासन थिति लखि नरनाथ । विनती करी जोर निजहाथ ॥
महा दुष्ट मंत्री भूपाल । मारन कूं आयो इह हाल ।
ऐसे वच सुनि क्रोधो राय । युद्ध करन कूं उठो सुधाय ॥
अर्धासन बैठी नृप नार । गर्भवती देखी तिह वार ।
किधों प्रान कर रहत अतीव । अतिशय भय त्रियधरत सदीव ॥

मरहठा छन्द

ज्ञान को प्राप्त भये तब राजा, रानी कूं प्रतिबोध करें ।
संत पुरुष आरत के माहिं, तत्वज्ञान उर माहिं धरें ॥
पाप उदय मनुषन के आवे, कहा अनिष्ट तब होय नहीं ।
तातें शोक करो मत रानी, सूर्य छिपे निशि होत सही ॥
पाप उदय सेती जीवन कूं, महा विपत्ति न होय कहा ।
ता अनिष्ट के प्रगट करन कूं, श्रीमुनिवर है निपुण महा ॥
यह तन जल बुद २ समजानो, इन्द्र जालवत् लच्छि सबे ।

जोबन चपला सम अति चंचल, विनसत अचरज कौन अबे ॥
है संयोग वियोग सहित सब, साता दुखकर महित बनो।
हर्ष विषाद सहित है निहचै, जीवन मरन समेत मनो ॥
कमला दारिद सहित सबै ही, तन निरोग गद सहित सबै।
इनके आगम में संतन को, शोक दशा कबहूँ न अबै ॥
भये तात सँसार विषै जे, वेही वैरी भाव लहैं।
जग संजोग विचार इसो है, हित अर्थी नर कहा न कहैं ॥
जिन कर चंदन बसत अनूपम, त्रिया रूप कर सुक्ख परा।
भोगे इस संसार विषै जे वेही, मारत क्रूर नरा ॥
यातें सुख दुख विषै जु प्यारी, हर्ष विषाद कहा करनो।
सकल शोक छोड़ो अब निश्चय, धर्म सदा उरमें धरनो ॥

॥ दोहा ॥

भूप कथित इम धर्म, वच रानी हृदे न धार।
बोयो बीज न ऊपजे, ऊसर भूमि मँझार ॥

॥ चौपाई ॥

अब निज अन्य परीक्षा हेत। भूप उद्यमी भयो सचेत।
सत्पुरुषनि की बुद्धि उद्योत। आरत विषै अल्प नहिं होत ॥
गर्भ सहित रानी को राय। केकी यंत्र विषै बैठाय।
पहुँचायो तिन गगन मँझार। विधिन्न और रची निरधार ॥
गयो यंत्र अंबर में जबै। उद्यत भयो युद्ध को तबै।
सेना अल्प सहाई न कोइ। बिन अंकूरा बीज सुजोय ॥

॥ दोहा ॥

पटहादिक बाजे न को, होत भयो अति शोर ।
दुहूँ ओर के सुभट जहं, करत भये रण घोर ॥
मुदगर कुंतल चक्रसर, लिये हाथ में वीर ।
रुद्र भाव उरमें धरे करत, युद्ध अति धीर ॥

छन्द भुजंगी

तबै बानके घातको ही विदारे । कहें क्रूर बानी मनो सैल मारे ।
जबै कोप हो जीवके चित्त मांही । तबै कौनसा पाप जोहोत नांही
खड़ो अग्रजो वीर ताकूं पछारे । तबै जायके तासकूं वेग मारे ।
करें बाहु से युद्ध केई जुधीरा । लरें खड्ग सूं ध्याय केई सु वीरा
धरें हाथको दंडको वीर कोई । तजैं बान वाणी कहें क्रूर जोई

॥ चौपाई ॥

गज घोड़े रथ प्यादे भूर । पड़त ही तहाँ भये चकचूर ।
भरो नृपति को आंगन सबै । महा भयंकर रण लख तबै ॥
निज भट मरे देख सब ठौर । गज घोड़े आदिक सब और ।
जगत अथिर जब जानो राय । विरकत चित्त भयो अधिकाय ॥
वृथा घात जीवन को होय । ता कर मोहि प्रयोजन कोय ।
राज थकी पुन कारज कहा । मरें जीव अघ उपजे महा ॥
विषय निमित्ततें जीव सदीव । दुख अनेक सो सहे अतीव ।
बिषय सुखन सूं दोष महान । परभवमें जु लखो दुख खान ॥

अडिल्ल

पूरब तैंने जीव भोग भुगते घने ।
प्रानी और अनेक भोग माहिं सने ॥
सो अब सबकी भूठ सुधी सुख होत जू ।
भोगे जगत मभार कहा जु सुचंत जू ॥
होयन तृप्ति कदाच विषय सुख भोगतें ।
उपजत हैं निज गात खेद के जोगतें ॥
ऐसे दुखदायक भोगन कू लख सदा ।
बुधजन इनसों प्रीति करे नाहिं कदा ॥

॥ चौपाई ॥

सेवत सुख उपजे अधिकाय । अंत विषै जु महा दुखदाय ।
विषफल खाते मीठो जान । पीछे निहचे हरे सुप्रान ॥
हो न विषय सुख चिर थिरकाल । आप ही सूं विनसैं तत्काल ।
कैसे त्याग करे नहीं संत । त्याग किये शिव होय तुरंत ॥
सुरपुन असुर चक्रधर सोय । इनसों तृप्त भये नहिं कोय ।
नरदेही के भोग असार । सो मैं त्रप्त किमहों निरधार ॥
अंवुध नीर करे अवलोय । बड़वानल त्रासे नहिं कोय ।
ओस बूंद करके निरधार । कैसे तृप्त तृषा निरवार ॥
अंतकाल ये भोग असार । भोगे अब वांछा न लगार ।
आतम सुखमें तृप्ति महान । अब मैं भयो भिन्न तन जान ॥
ऐसो चितमें कर सुविचार । भावत भयो भावनासार ।

जगसूं भयो उदास प्रवीन । संतन को मन मति आधीन ॥
आंगन तैं उलटो फिर भूप । थिर आसन बैठो सुख रूप ।
अशनरु भोगनको करि त्याग । मुक्ति हेतु चित धरे विराग ॥
भारवाह की सेना महाँ । अघ समूह कर आई तहाँ ।
कर नृप के घर में प्रवेश । धन धान्यादिक हरो विशेष ॥
पद्मासन बैठो लखराय । भारवाह तहाँ कोप्यो जाय ।
हनो नृपतिको तिन अविचार । पंच पाप भाजन निरधार ॥
शुद्धभाव करिके धीमान । त्यागे भूप तबै निज प्रान ।
प्रापति भयो देव गति जाय । कल्पसुमन करि अति सो भाय ॥
पुरजन घर घरमें तिहवार । करत भये सब शोक अपार ।
इष्ट वस्तु जब विनसै सही । शोक कौन के उपजे नहीं ॥

अडिल्ल

नृप के शोक थकी पुरजन पीड़ित भये ।
देह भोगते उदासीन उरमें थये ॥
नयो शोक जीवन कूं उपजत है सदा ।
अतिशय कर बैरागभाव उपजे तदा ॥
अहा भूप ने यह कारज कीनो कहा ।
वनिता सेवन हेतु राग वश है महा ॥
अद्भुत राज महान तुच्छ सुख हेत जू ।
भारवाह को दीनो हर्ष उपेत जू ॥
त्रिया प्रेम वश होय अंध प्रानी जिके ।

राज प्राण उत्कृष्ट सबै खोवे तिकं ॥
महा पाप भागी रागी नर देहजू ।
काज अकृत्य कहा जु करे नहिं तेहजू ॥

* जोगी रासा *

नारिन को मुख कफ करि पूरित ढीड़ भरे जुग नैना ।
नासा पुट दुर्गंध दरब सब धरे कहूँ किम बैना ॥
ऐसे निन्द वचन सों मूरख भाषै चंद्रमुखी है ।
तिमर सहित द्रग निरख सीप कूं मानत रजत यही है ॥
केश समूह सहित तिय वेणी ताको चमर कहे हैं ।
ऐसे मूरख दुष्ट अज्ञानी ता पर मोह धरे है ॥
पिंड मांस के कुच युग तिनसूं सुधा कुंभ इम भाषै ।
जैसे आमिष कूं अति हितकर वायस ही अभिलाखै ॥
नारि योनि मूत्रमल थानक कामी जहाँ सुख माने ।
विष्टा रुधिर विषै जिमि शूकर कहा प्रीति नहिं ठाने ॥
नारिन को सुख है कितनो इक करहु विचार जु ऐसो ।
खोटी थिति याकी जग माहीं कर्दम धोत्रो जैसो ॥
नारिन को तन सप्त धातु मय बहुविध कष्ट धरे है ।
राग अंध नर तिनसो रत है कैसे प्रीति करे है ॥
मनै करत हू संतन की मति लगे कुकारज माहीं ।
भले काज कूं तजत अज्ञानी करत नहीं मन माहीं ॥
संतन की मति विषय सुखन को मानत है अघकारी ।

तो भी विषयन में वरते सो मोह महातम भारी ॥
खोटी वस्तु विषै मोहित है भले बुरे कर प्रानी ।
मोह कर्म बैरी कर वंचे सुध बुध भूले अयानी ॥
केवल वनिता ही के कारण रावण आदि नरेशा ।
राज विनाश मरण करिके पुन कीनो नरक प्रवेशा ॥
कहाँ जाय हम कहा करें पुन कहाँ थिति कर सुख वेहुँ ।
कहाँ ते लक्ष्मी की है प्रापति कौन नृपति मैं सेऊँ ॥
भोग कौनसूं भोगवै अब रूप सहित को नारी ।
कारज कारी कौन वस्तु है अन्य किसो हितकारी ॥
कहा कहूँ सोऊँ किह थानक यह प्रकार उर माही ।
बड़े मोहकर चिंतवन करते दुर्गति जाय लहाही ॥
विकलप रूपी बैरी करिके वंचे नर बहुतेरे ।
नाना कष्ट सहे निशि वासर मोह कर्म के प्रेरे ॥
ऐसी विधि निर्वेद भाव धरि पुरजन सोच करंते ।
संत विपति में निहचै करिके उर वैराग धरंते ॥

* दोहा *

यह तो कथन रहो अबै, और सुनो उर धार ।
नभतें केकी यंत्र पुनि, आयो भूमि मँझार ॥
याही पुर के प्रेतवन, महानिंद्य भयदाय ।
यंत्र सहित नृप नार कं, तहाँ दई बैठाय ॥

॥ चौपाई ॥

मुरदन की जु चिता जिहठाम । दीखत भय करता दुखधाम ।
रानी के दुख कूं जु निहार । कियौं परे जे चिता मझार ॥
तहाँ नचत हैं प्रेत समाज । भारवाह को देख सुराज ।
प्रगट बात है जगमें येह । दुर्जन को दुर्जन सों नेह ॥
मांस अहारी गीध वराह । करत भये मन माहिं उछाह ।
डाकिन साकिन अरु बेताल । डोलत हैं जहाँ अति विकराल ॥
मृतकन के मस्तक के केश । भ्रमत पवन कर गगन अशेष ।
सत्यंधर को गयो उद्योत । पापी कहा निशंक न होत ॥

अडिल्ल

ता मसांन की भूमि विषै नृप की त्रिया ।
परी सुमूर्छित होय शोक उरमें किया ॥
देत जीव अघ कष्ट अनेक प्रकार जू ।
कहा नहीं यह करहि जान निरधार जू ॥
काल चक्र के ज्ञाता हैं जे नर सवै ।
ते निहचै करि इहि उर में जानो अवै ॥
राज विभव आदिक क्षण भंगुर हैं सही ।
मेघ महल सम विनशत वार लगे नहीं ॥

॥ चौपाई ॥

प्रात समै नृप की वर नारि । पूजनीक थी जो निरधारि ।
भई साँझ सो मृतक समान । इम लख अघसूं डरो सुजान ॥

अडिल्ल

गई रैन जो रानी पलंग में सोवती ।
सो अब अगली रैन विषै दुख भोगती ॥
सोवत भई मसान भूमि बनमें मही ।
कर्म पराभव करें यही सँशय नहीं ॥

॥ चौपाई ॥

मूर्च्छा के वश रानी होय । दुख प्रसूत का लहे न कोय ।
पूरनमास भये तब जबै । सुत उपजायो रानी तबै ॥
पुत्र पुन्य संती निरधार । सिद्धारथा सुरी तिहिवार ।
धाय रूप कर तिष्ठी सोय । कहा पुन्य तें दुर्लभ होय ॥
ताहि देख जागो नृपनार । उमड़ो शोक समुद्र अपार ।
सुजन निकट जब आवे कोय । ताहि देख अधिको दुख होय ॥

* रोटक छंद *

रानी कूं रोवती देख देवी गुणवंती ।
संवोधी तिहवार पुत्र सों नेह धरंती ॥
बालक के गुणसार कछुयक वर्णन करती ।
बोली गद गद वैन हर्ष उर मांहि जु धरती ॥
हे बाले तू वृथा रुदन मति करे जु बनमें ।
यह तेरा सुत पुण्यवंत है जानो मनमें ॥
कभी तो सुख है सार कभी है दुःख अपारा ।
इस संसार असार विषै लखिये निरधारा ॥

॥ चौपाई ॥

हे रानी सुत पालन हेत। चिन्ता तू मत करे सुचेत।
याके पुण्य तने परभाव। कोई पालेगो हित लाय॥
बड़ो होय बालक निरधार। अरि हनि राज करेगो सार।
पुण्य उदय जे जन्मे सही। कौन वस्तु ते पावें नहीं॥
यह तो कथन रहो इह थान। आगे और सुनो जु वखान।
तापुर में इक सेठ प्रधान। करत सेव ताकी धनवान॥
गंधोत्कट है ताको नाम। पुण्यवंत सज्जन गुणधाम।
नारि सुनंदा ताके सही। शीलवंत गुणगण की मही॥
मृतक पुत्र सो जने सदीव। पूरव अघ को उदय अतीव।
सुत को मरण महा दुखदाय। कोके दुख निमित्त नहिं थाय॥
एक समय जोगीन्द्र गरीश। वनमें थित लख सेठ सुधीश।
भगति सहित कर युग धर भाल। करि प्रणाम पूछो गुणमाल॥
स्वामी मेरे पुत्र प्रसत्थ। गेह भार धारन समरत्थ।
हो यक नहीं कहो निरधार। हे मुनीश तुम हो जग तार॥
तब मुनि सेठ प्रतें इम कही। तेरे पुत्र होयगा सही।
वैन सुनै मुनिके इह भाय। सेठ तबै बोलो हरषाय॥
हे मुनीश होगो तो कबै। सुनि के मुनिवर भाषो तबै।
काष्ठांगार नीति तजि सबै। भूपति कूं मारेगो जबै॥
मृतक पुत्र ताही दिन मांहि। तेरे होय सेठ शक नांहि।
ताके धरबे हेत सुजान। जैहै तू मसान भू थान॥

तासु मसान विषै थितधार । राजपुत्र पासी गुणकार ।
ताके पुण्य थकी तो गेह । पुत्र एक होसी शुभ देह ॥
ऐसी सुनकर हर्ष बढाय । तिष्ठत भयो गेह निज आय ।
जावत भारवाह अज्ञान । नृपकूं पहुँचा यो जम थान ॥
ताही दिवस सुनंदा नारि । जायो मृतक पुत्र दुखकार ।
पिता आदि परिजन जन सबै । मृतक देख रोवत भये तबै ॥
गंधोत्कट तबही मृत बाल । आप उठाय लियो दर हाल ।
प्रेत विपन माहीं जब गयो । भूमि खोद बालक धर दयो ॥
पुनि पुनि बचन सुमर सुखकार । बालक ढूंढन कूं तिहिवार ।
महा भयानक बनमें वीर । ढूंढत भयो वणिक पति धीर ॥
बाल मात युत लख बनथान । मुनि के वचन किये परवान ।
सत्य बचन परगट अविलोय । अचल बचन को निश्चय होय ॥
रानी लखो सेठ गुणवान । देवी के वच करि परवान ।
हर्ष विषाद सहित नृप नारि । रानी होत भई तिहवार ॥
सेठ तबै बोलो तिहिवाल । कोतू कितते आई हाल ।
या मसान में आधी रात । क्यों तिष्ठत सो कह तू बात ॥

॥ दोहा ॥

भ्रात सत्यंधर भूप की, मैं रानी निरधार ।
आई यंत्र प्रयोग तें, पुत्र जनो सुखकार ॥
हे भ्राता तू कौन है, किस कारन यहाँ आय ।
आधी रात मसान में, मोसूं कहु समझाय ॥

॥ चौपाई ॥

मैं गंधोत्कट सेठ उदार । नार सुनंदा मेरे सार ।
मृतक पुत्र सो जने सदीव । अशुभ कर्मको उदय सदीव ॥
हे रानी ताने इस काल । प्राण रहित उपजायो बाल ।
ताके धरवे को बन माहिं । आयो या अवसर शक नाहिं ॥

* पद्धड़ी छन्द *

रानी उपाय का लख अभाव । देवी की प्रेरी धर सुभाव ।
राजा की मुदरी सहित बाल । दीनो जु सेठ गोदी विशाल ॥
तब सेठ लियो बालक महान । रोमांचित हूवो हर्ष आन ।
ईंधन ढूंढत नर मणि सुदेख । हर्षित किम होय नहीं विशेष ॥
बालक ले सेठ चलो उदार । 'चिरजीव' मात इम बच उचार ।
अमृतवच सुन यह विधि ललाम । जीवक याको धर है सुनाम ॥

॥ चौपाई ॥

सेठ गयो निज घर सुखमान । श्रेष्ठ क्रिया में निपुण महान ।
निज नारी सूं क्रोध कराय । युक्ति वचन सो कहे बनाय ॥
हे बाले जीवित सुत येह । जन्म कष्टतें मूर्छित देह ।
पूर्व पुत्र तब याहि निहार । कैसे मृतक कहो वर नार ॥
इम निन्दा कर पुत्र अनूप । दियो सुनंदा को वर भूप ।
सर्व सुलक्षण पूर्ण गात । अवयव अंग सकल अवदान ॥
नंदन लियो सुनंदा नारि । लख कीनो आनंद अपार ।
प्राण समान पुत्र है महा । मृतक जियो ताको पुन कहा ॥

बाजे बाजत विविधि प्रकार। नारी गावें मंगलाचार।
इह विधि सुतको जन्म उछाह। करत भये सो नाम जनाय॥
प्रथम जीव वच माता चयो। मृतक माण धारक पुन भयो।
यातें जीवंधर तसु नाम। धरो सुजनमिलि सब अभिराम॥

॥ दोहा ॥

यह वर्णन इस थल रहो, आगे सुनो सुजान।
लीनो काष्ठांगार ने, राज महा सुखखान॥
ताही दिन वा दुष्ट ने, मनमें कियो विचार।
हर्ष विषाद सुकौन के, कर लावे निरधार॥
नगर माहिं घर २ बिषै, लखो शोक तिन जाय।
गंधोत्कट के हर्ष बहु, कहो नृपति सों जाय॥
विमल चित्त है सेठ को, ताको भूप बुलाय।
मूरख फिर पूछत भयो, है आकुल अधिकाय॥

॥ सोरठा ॥

सेठन के सरदार आज रयन किस अर्थ तें।
उत्सव कियो अपार दीनन कूं बहु तृप्त कर॥

॥ चौपाई ॥

नृप के अंतरंग की जान। तब श्रेष्ठी बोलो बुधिवान।
राज्य लाभ तुमको अविलोय। कहो कौन के हर्ष न होय॥
पुन मेरे सुत उपज्यो सही। कैसे हर्ष करों मैं नहीं।
किसके कनक न है सुख हेत। बहुरि लसै सो रतन समेत॥

बचन सेठ के सुन इम जबै। हर्षित चित हो बोलो तबै।
मानत भयो सुनिज पर अर्थ। मोह कर्मवश भयो कदर्थ॥
मन वांछित वर सेठ सुचेत। मांगो तुम अब निजहित हेत।
कियो राज को उत्सव सार। यातैं मन हरषो निरधार॥

अडिल्ल

नृप के बच सुन के उर में हर्षित भयो।
उरमें कर सु विचार तबै ऐसे चयो॥
शुभ कुल के बालक उपजे पुर में जिते।
बढ़त हेत परवार सहित दीजे तिते॥

॥ चौपाई ॥

तब राजा की आज्ञा पाई। पंच सतक बालक सुखदाई।
माता पिता मित्रन युतसार। पाए सेठ तबै निरधार॥
सब बालक परवार समेत। प्रीति सहित ल्यायो सुख हेत।
अपने घरके निकट वसाई। घर धन आदि देय बहु भाई॥
तिनकर अतिहि लडायो बाल। दिन २ बढ़त भयो गुणमाल।
मात पिता को हर्ष बढ़ाय। दुतिया शशि ज्यों उदय बढ़ाय॥
चलै सिथिल गति वच तुतलाई। सकल बालकन सहित रमाई।
जैसे राजत नाग कुमार। तैसे शोभित बालक सार॥
आप हँसे सबको हँसवाई। कबहुँक पीठ रहै सुख पाई।
करे बालकन सों अति प्रीत। कबहुँक लड़ै करै विपरीति॥

* दोहा *

ऐसे सुखसों निवसतै, जनौ सुनंदानंद ।
नंद नाम सब सुतनकों, उपजावत आनन्द ॥
निकट सुवर्ती नन्द युग, तिन करि सेठ महान ।
महा सोभ धरतो भयो, उरमें बहु सुख मान ॥
जैसे शशि सूरज थकी, शोभित मेरु उदार ।
अति दुर्लभ सौभाग्य है, जगत विषै निरधार ॥

* मरहठा छंद *

दोनों पुत्र पाँचसौ बालक सहित सेठ गुणवंतो ।
शुभ वसन और नाना विधि भूषण तिनकर अति शोभंतो ॥
निर विघ्न भोग भोगत सुखकारी जातो काल न जानै ।
'जय नंद वृद्ध' ऐसे वचनन कर वंदी जन थुति ठानै ॥

॥ द्वितीयोऽध्यायः समाप्तं ॥

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

॥ गीतिका छंद ॥

श्री अजितनाथ जिनेन्द्र के, युग चरण कमल सु उर धरौं ।
कर जोर युग धर शीश पै, मैं भावसों प्रणमन करौं ॥
जीते अजीत सु कर्म बैरी, अखिल मन पुनि वश किया ।
शोभित सलक्षण गज तनो, तिन देखतें हुलसे हिया ॥

* दोहा *

अब आगे विजया तनो, सुनो कथन उर धार।
तिष्ठत प्रेत सुवन विषैं, धारत शोक अपार॥
देवी तब सिद्धारथा, भने वचन जु अशेष।
तिन कर प्रतिबोधत भई, हित धर हिये विशेष॥

॥ चौपाई ॥

हे सुन्दर तो भ्रात महान। देश विदेश तनो पति जान।
नृप गोविन्द अबै विख्यात। प्रभुता सकल धरैं अवदात॥
चलो सँग तुम हर्ष उपेत। ता घर धरों तोहि सुख हेत।
अतिशय करि त्रियनकूं जोय। पितागेह में शरनो होय॥
तास वचन सुन रानी तबै। बड़ी बुद्धि करि बोली जबै।
भक्ति सहित भ्राता अभिराम। हे देवी मेरे किन काम॥
गई सबै लक्ष्मी पुनि देश। विविध प्रकार गये सुख वेश।
पाप उदय से सबको नाश। रहैं कहा अब भैया पास॥
जौलों पाप उदय को घात। मेरे होय नहीं विख्यात।
तौ लग निरजन बनके माहि। मोकूं रहना है शक नाहि॥

अडिल्ल

पाप भार वेढित जे जीव जहान में।
निज सुख हेत विचार जाहि जिहि थान में॥
तहाँ अनेक प्रकार अंश मिल ही सही।
बैठे ज्यों खल्वाट नारियल तल मही॥

॥ चौपाई ॥

पाप सहित जे नर जग मांहि। तिनकूं शर्म एक छिन नांहि।
जैसे मृग बन में निरधार। सिंह थकी पीड़ित दुखधार॥
अशुभ उदय प्राणी के आय। सब सुख सहजै विनशही जाय।
हे देवी तुम जानो जहाँ। रावण आदि पराभव लहा॥
पाप बंध तें सब जग जीव। दुख अनेक विधि लहे सदीव।
फेर पाप ही ठाने तेह। देखो जग विचित्रता येह॥
कोई किसीका नहिं जगमांहि। सुख दुख आप सहे शक नांहि।
यातें भ्रात आदि की आश। कहा करो मोसूं प्रकाश॥
ज्ञान सहित वच सुनिके सुरी। अति संतुष्ट भई तिही घरी।
हे रानी मेरे सुन वैन। राखों बन आश्रम तोहि ऐन॥
ऐसे कह विमान बैठाय। दंडक बन मांही ले जाय।
तापसीन के आश्रम पास। रानी कूं थापी सुख राश॥
गई सुरी निज घर हर्षाय। रानी तापस वेष धराय।
तापसीन के आश्रम पास। तपको मिसकर करत निवास॥
रानी निज मन मंदिर विषै। जिन पद पंकज राखे अखै।
श्रुत विवेक चित्त जिनको थाय। दुखमें तिनको तत्व जगाय॥
निर्मल व्रत पालत हित आन। जपत मंत्र नवकार महान।
रानी मिथ्या भाव न जाय। तापस आश्रम निकट रहाय॥
हँसतूल की सेज मझार। आगे सोवत थी नृप नारि।
सो अब कठिन डाभकी शयन। तापर सोवत है सब रयन॥

मोदक आदि अन्न सुख हेत । भोजन करती हर्ष उपेत ।
वनके पत्र हाथ तैं ल्याय । विधि वशतैं सब अशन कराय ॥
कोमल वस्त्र अमोलक सदा । आगे जे पहिरे थी मुदा ।
विधि विपाकतैं सो नृपनारि । जीरन फटे वस्त्र तन धार ॥
ऐसे रानी काल वितीत । करत धर्म सेती अति प्रीति ।
कर्म शुभाशुभ कीनो जोय । भोगे विनते जाय न सोय ॥

॥ दोहा ॥

इह तो कथन यहाँ रहे, आगे सुनो बखान ।
लोक विषै अति प्रगट है, रूपाचल द्युति मान ॥
अपनी शोभा करहि ज्यों, चंदकिरण अमलान ।
ताकी उपमा कहन कूं, समरथ को बुधवान ॥

॥ चौपाई ॥

पूरव अपर उदधि में जाय । दोऊ अनी समुद्र मिलाय ।
भरत क्षेत्र नापन कूं जान । मानूं शोभे दंड समान ॥
भरत क्षेत्र के बीच उदार । है पचास योजन विस्तार ।
उन्नत जोजन है पच्चीस । शोभित है मानूं अवनीश ॥
गंगा सिन्धु नदी सुमनोज्ञ । तिन निकसनकूं गुफा नियोग ।
युग मुखजुत नीचे युतकरी । किधों जगत निगलै वै खरी ॥

॥ अडिल्ल ॥

भूतल तें दश जोजन उन्नत लसत है ।
युग श्रेणी दुहुं ओर विद्याधर बसत हैं ॥

सुरग गमन के हेत कियो ये सार जू।
धारत है युग पंख महान उदार जू॥

॥ दोहा ॥

दोनों श्रेणी के विषै, खेचर नगर उदार।
एक शतक दश बसत हैं, ज्यों गल मोती हार॥

॥ पद्धरी छन्द ॥

इनसूं दश योजन और तुंग। श्रेणी युग राजत है अभंग।
किल्विष देवन के पुर बसंत। दिवके नगरन को मनु हसंत॥
इनसूं उन्नत जोजन सु पाँच। पर्वत मस्तक पर लसत साँच।
नौ कूट तहाँ शोभित अभँग। मानौ पर्वत के करि उतंग॥
जोजन सु सवाछह व्यास मूल। उन्नत इतनें ही जान मूल।
इनतैं आधो है व्यास भाग। ऊपर के भाग कहो विचार॥
पहिलो जु कूट है सिद्ध नाम। ता मांहि सिद्ध प्रतिमा ललाम।
आवत जहाँ चारणमुनि समाज। सुरनर आवत जिनदर्श काज॥
पर्वतको कंद सुनो सुजान। जोजन सुसवाछै तसु प्रमान।
अवनी पर्वत शोभत अतीव। खेचरगन विचरत तहाँ सदीव॥
ताकी दक्षिण श्रेणी मझार। पुर मेघ नाम शोभित उदार।
खाई प्राकार सहित दिपंत। उन्नत अति ही नभको क्षिपंत॥

॥ चौपाई ॥

द्रव्य मिथ्याती तहां न कोय। द्रव्य कुलिंगी तहां न होय।
मिथ्यादेव भ्रांति करतार। तहां कहूँ दीसे न लगार॥

तीन वरण की परजा वसै। तीन पदारथ साधन लसै।
धर्म ध्यानमें रत सब लोक। त्रिभुवन के सुख भोगत योग ॥
जहां के उपजे सज्जन परम। मूर्तवंत साधत जिनधर्म।
और धर्म सेवे नहिं कबै। स्वप्नांतर में भी नर सबै ॥
लोकपाल तहाँ लसत महीश। खेचरगण नावत निज शीस।
सन्तन को आनन्द करतार। लोकपाल मनु देव कुमार ॥
पर की रक्षा करत नरेश। सुर पुर की जैसी अमरेश।
सभा विषै बैठे बुधिवान। लसत भूप सो इन्द्र समान ॥
ताके त्रिया गोमती नाम। गंगा गुण सब धरत ललाम।
भले गुणनिके गण करि भरी। ज्यों कंदर्प के रति अति खरी ॥
तिनके पुत्र सुमति बुधिवान। सत्पुरुषन को बुद्ध समान।
सकल कलामें अति परवीन। महा प्रतापवंत गुण लीन॥
लोक पाल भूपाल विनीत। सकल प्रजा पाले करि नीति।
भोगत भोग अनेक प्रकार। युग इन्द्री मन सुख करतार ॥
इक दिन बैठे झरोखे राय। दशूं दिशा देखत हर्षाय।
बादल को इक महल अनूप। देखो जगत विषै बर रूप ॥
सुन्दर वरन किसो इस सार। उन्नत है अति ही मनुहार।
कैसी इह की कांति विशेष। ऐसे विस्मय करत नरेश ॥
इस बादल गृह के आकार। श्री जिन भवन कराऊँ सार।
जौलों इम चिन्तो भूपाल। तौलौं विनश गयो दर हाल ॥
ताकूं विनशो देख नरेश। जगतें भयो उदास विशेष।

देह भोग अरु इह संसार । है अनिष्ट अति महा भयकार ॥
देखत देखत ही जिम एह । नाश भयो बादर को गेह ।
तैसे सुत नारी परवार । क्षण भँगुर सबही निरधार ॥
जोबन गगन नगर आकार । पंडित जन भाषैं निरधार ।
लक्ष्मी विद्युत वेग समान । इन्द्र चन्द्र चक्री की जान ॥
जल के फुलका सम है देह । समय मध्यान छांह सम नेह ।
विषय सुख जल भवर समान । विनसत वार न लगे सुजान ॥
तड़ित समान विभूति उदार । श्याम नागवत भोग निहार ।
मेघ समूह तुल्य यह राज । क्षण भँगुर सब जान समाज ॥
दूनो नृप वैराग्य बढ़ाय । सुमति पुत्रको निकट बुलाय ।
धरत भानु सम कांति अपार । ताकूं राज दियो निज सार ॥
ज्ञान उदधि मुनि निकट महीश । बनमें जाय नाय निज शीस ।
द्विविधि परिग्रह त्याग प्रमान । जिन दीक्षा धारी अमलान ॥
सुगुण सुभाव महित तप करे । कोमल भाव हृदय में धरे ।
याते गुरु आदिक मिल सबै । आरज नंद नाम धर तबै ॥

॥ दोहा ॥

पँच महाव्रत पुन समिति, तीन गुप्ति सुखकार ।
तेरह विधि चारित्र शुभ, हर्ष सहित तिन धार ॥

॥ चौपाई ॥

आर्य नंदि मुनि करत विहार । पहुंचे पद्म नगर इक बार ।
वसुदत्त सेठ ग्रेह बुधिवंत । अशन निमित्त गये मुनि संत ॥

वसु कांता तियजु तिहिवार । आये देखे मुनिवर द्वार ।
'तिष्ठ २' इम वचन कहाय । पड़िगाहे श्री मुनि हर्षाय ॥
ऊँचे आसन बैठे ठाय । चरण कमल धोये सुख पाय ।
आठ द्रव्य ले पूजा करी । नमस्कार करि ऽस्तुति करी ॥
मन बच काया त्रयकर शुद्ध । दोष रहित पुनि अशन जु शुद्ध ।
इह विधि नवधा भक्ति कराय । करत भयो वसुदत्त सुआय ॥
सरधा दिक गुण सात उपेत । मुनिको दियो अशन शुभ हेत ।
तवही महा विघन करतार । आयो विलाव एक तिहिवार ॥
वसु कान्ता विलाव कूं देख । तवही महा भयधार विशेष ।
नये ग्रेह में मूंद सुदयो । बिन जाने मुनि भोजन ठयो ॥
भोजन कर मुनि बनको गये । ध्यान विषै चित धारत भये ।
मुंदो विलाव विसर सोगयो । भूख वेदना तिनि अति भयो ॥
क्षुधा वेदना कर दुख पाय । पाप उदय ताको भयो आय ।
दग्ध उपल को चूनो लखो । दही जान ताने सो भखो ॥
ताकी गरमी कर दुख लह्यो । उदर भस्म ताको तब भयो ।
सहित अकाम निर्जरा सोय । मरो विलाव सु आकुल होय ॥
अकाम निर्जरा योग पसाहि । भई विंतरी तिस बन माँहि ।
अंतर्मुहूर्त विषै तिहिवार । भई विभंगा अवधि अपार ॥
अवधि विभंगा तें तिन तबै । पूर्व वृत्तान्त जान के सबै ।
ता मुनि के ऊपर तिहकाल । कियो कोप तिहने ततकाल ॥
दग्ध उदर इन कीनो तबै । याको उदर जराऊँ अबै ।

इह विधि मनमें करत विचार। मुनिके निकट गई तिहिवार ॥
रे मुनि तैं विलाव गति माँहि। पीड़ा मोहि करी अधिकाय।
सो प्रति वैर लेहुंगी अबै। कही विंतरी ऐसे तबै ॥
भस्म व्याधि कर मुनि की देह। गई विंतरी अपने गेह।
कियो कर्म जीवन कूं सही। अवश्य भोगनो संशय नहीं ॥
अल्प सु तप करके अवलोय। कर्म विनाश न समरथ कोय।
आलो काठ बावरी माँहि। अग्नि कन: किम भस्म कराय ॥
भस्म व्याधि के वशतें मुनी। तृपति कहा धारै नहिं गुनी।
सनमुख सेन समूह जु होय। सुख इच्छा कर सोवे कोय ॥
सब श्रावक के घर आहार। ता करि तृप्त न होय लगार।
बहुत नदीन को लेकर तोय। सिन्धु कहां सु तृप्तता होय ॥
तब चिन्ता करि दुखित अपार। ऐसे मनमें करत विचार।
कहा करों तिष्ठौ किहि थान। कहाँ जाऊँ अघ ठगो महान ॥
जो मैं मुनि को वेष धराय। स्वेच्छाचारी होय अघाय।
तो पापिन को मैं सरदार। होहूँ मैं संशय न लगार ॥

* दोहा *

कियो पाप परमत विषै, जीव कपट धर भूर।
जो शुभ जिन मतके विषै, निह्चै होहैं दूर ॥
जिन शासन में अघ कियो, सो परमत के माँहि।
छूटत नहीं कदापि वह, वज्र लेप हो जाँहि ॥

अडिल्ल

पाप उदय जौलौं जीवन के अनुसरै ।
तौलों इष्ट तपस्या कैसे विधि धरै ॥
धर्म कार्य के विषै अनेक प्रकार जू ।
होत अनेक विघन संशय न लगार जू ॥

॥ दोहा ॥

निरमल जिन शासन विषै दोष न लगे लगार ।
सो कारज करनो मुझे पाप पंक भग्न धार ॥

॥ चौपाई ॥

जौलों भस्म नाम इम रोग । मिटै नहीं मेरे अमनोग ।
तौलूं जिन मुद्रा तज सार । उदर भरों अपनो निरधार ॥
करि विचार ऐसे चिरकाल । अल्प राज सम तपतज हाल ।
विधि आधीन जीव अनुसरे । ताकूं कर्म कहा नहीं करे ॥
परिव्राजक को धरके भेष । विचरत भयो सु भूमि अशेष ।
कभि इक भिक्षुक रूप धरंत । कभि इक नग्न होय विचरंत ॥

अडिल्ल

वर्णी को धर भेष देश पुर ग्राम में ।
करवट खेट मटंब द्रोण शुभ ठाम में ॥
पट्टन वाहन आदिक जे जेंहैं सबैं ।
अन्न हेतु सो तिनमें जात भयो तबैं ॥

॥ चौपाई ॥

पाखंडिन के रूप अशेष । घर घर पुर पुर भ्रमै विशेष ।
पक्क अपक्क अन्न सुख हेत । भक्षण करे सुशाक समेत ॥
इच्छा भोजन करतो फिरै । भस्म व्याधि सूं तृप्ति न धरै ।
धर्म रहित नहिं तृप्ति लहाय । ज्यों समुद्र जलसों न अघाय ॥
देश अनेक विषै भरमंत । इक दिन आरजनंदी संत ।
आयो राजपुरी के पास । निज अघकर्म करत परकाश ॥
एक दिवस अति भूखो भयो । गंधोत्कट के मंदिर गयो ।
भस्म रोग है अति दुखदाय । ताके नाश हेत उमगाय ॥

अडिल्ल

धर्मवंत पुरुषन कूं धर्मीजन सही ।
शरणा है निरधार अपर कोई नहीं ॥
स्व स्वभाव कर धर्मवंत नर को सदा ।
कुलवंती नहिं दोष धरैं मन में कदा ॥

॥ चौपाई ॥

गयो सेठ के आंगन धाय । जप नवकार थयो सुख पाय ।
भोजन देहु मोहि इम कही । जिनमत को मैं भोजक सही ॥
तब घरमें जीवंधर नाम । सकल सुतनमें अति अभिराम ।
द्रग विशाल देखो अवदात । जानत सो पर मन की बात ॥
जीवंधर याकूं तब देख । साधर्मी जानो सु विशेष ।
ताकी भूख हरन के हेत । उदित भयो सु हर्ष उपेत ॥

याके भोजज हेत कुमार। माता दिक कूं वचन उचार।
बहुत दिवस को भूखो एह। याकूं अशन वेग ही देय॥
हर्ष उपेत सुनंदा मात। बैठायो थानक अवदात।
तृप्ति हेत पूवा भरथार। दीने याकूं कर मनहार॥

❀ अडिल्ल ❀

मांडे अरु पक्वान्न विविध घृत के भले।
मोदक मिश्री दाल भात घृत सों रले॥
दही दूध पुनि व्यंजन विविध बनाय के।
सुत की प्रेरी ताहि परोसी ल्याय के॥

॥ सोरठा ॥

तृप्त न लखो लगार, घोटक ऊंटन के सबै।
दाना लाय कुमार, धर दीनौ ताकूं तबै॥

॥ दोहा ॥

दानो सब खायो तउ, तृप्ति न भयो लगार।
तब उर में अचरज कियो, जीवंधर सुकुमार॥

॥ गीतिका छंद ॥

फिर सकल अन्न जु लाय याकूं दियो घरको लाय के।
तो भी अतृप्त निहार ता को जीवंधर पुन जाय के॥
पन शतक घरतें दियो भोजन भयो तृप्त सो वह नहीं।
जिमि उदधि अखिल नदीन के जलतें अघावत है कहीं॥

॥ चौपाई ॥

सर्व अन्न खातो तिस देख । सकल त्रिया तब हँसी विशेष ।
पूवा आदिक और मंगाय । दिये सुनंदा ने उमगाय ॥
अहो कृतान्त यहै निरधार । कै पिशाच राक्षस सरदार ।
कै व्यंतर खग विद्या धरै । भस्म रोग युत कै यह फिरै ॥
यातें नहीं मनुष यह जीव । सकल घरनको अन्न अतीव ।
खायो तृप्त भयो नहीं तबै । ऐसे कहत त्रिया मिल सबै ॥
सर्व घरन भोजन कर लिये । 'और देहु' इम भाषत भये ।
अघ कर जो नर पीड़ित होय । आशा उदधि भरे नहिं कोय ॥
देहु देहु इम बचन भनंत । निकट आय जब कुमर तुरंत ।
अपने करसूं ग्रास उठाय । दीनो भिक्षुक कूं सुख पाय ॥

* दोहा *

एक ग्रास के स्वाद तें, भूख गई पुन ताहि ।
अहो पुन्य अतिशय लखो, आशा उदधि भराय ॥

॥ चौपाई ॥

पुन्यवंत के कर संजोग । भस्म रोग नासो अमनोग ।
पुन्यवंत की संगत पाय । शुभ कारज कूं को न लहाय ॥
नाश भयो मुझ रोग अवार । तपसी ने कीनो निरधार ।
कुमर पुण्य को कारण येह । महा चतुर गुण भूषित येह ॥
व्याधि नाशतें मैं तप घोर । पूरववत करिहों अघ तोर ।
साधोंगों मैं अब निरधार । पद निर्वाण अखिल सुखकार ॥

कुमर महातम है यह सबै। मैं निहचै कीनो मन अबै।
इन मोपै कीनो उपकार। कारण विना कर्म क्षयकार॥
यह कुमार उत्तम गुण खान। यातैं प्रत्युपकार महान।
कहा करों मैं हौं धन हीन। ऐसे चितवन करत प्रवीन॥
उपकारी हम महा प्रमान। इनकूं विद्या देऊँ महान।
नृपन जोग बहु फल दातार। निरभै महा योग निरधार॥
विद्या देउं याकूं मैं अबै। दुद्धर तप आराधों तबै।
मित्र भाव यासूं उपजाय। ऐसो मनमें करूँ उपाय॥
आरजनंद पलट निज भेष। उरमें धार सनेह विशेष।
गंधोत्कट के घर तब गयो। सार बचन पुनि कहतो भयो॥
सुनो सेठ बुधिवंत महंत। जीवंधर आदिक सब संत।
पनसत हैं जे सुत जु मनोज्ञ। पाठ पढावे भये सुयोग्य॥
पुत्रन के सुपढ़ावे काज। वाँछा होय जु वाणिज राज।
तो मोहि आज्ञा दीजे अबै। पुत्र पढाऊँ तेरे सबै॥

मुनि के बचन सुने हितकार। बोलो सेठ हर्ष उर धार।
पित्त सहित जो होय शरीर। क्यों न पिये मिश्री पय क्षीर॥
जीवें विद्या बिन जे जीव। ते हैं मरण समान सदीव।
बिना सुगंध सुमन केहि काज। भयो न भयो सुनो मुनिराज॥
विद्या मनुषन को निरधार। सुख सौभाग्य मान करतार।
चंद्र चाँदनी सूं जिमि रैन। अति शोभित मन हर्ष सुदेन॥
मेरे पुत्रनिकूं मुनिराय। अर्थ सहित सब शास्त्र पढाय।

इन मुनि सों दीनों उपदेश। प्रीति भार धर हिये विशेष ॥
शुभ दिन जिन मंदिरमें जाय। भक्ति सहित जिन पूज कराय।
भले सुतन कूं पढ़ने हेत। सौंपे इनको हर्ष उपेत ॥
विघन रहित शुभ सिद्धि निमित्त। सिद्ध भक्ति करके शुभ चित्त।
ॐ नमः सिद्धं पाठ सुखकार। प्रथम पढ़ावत भयो उदार ॥
मात्रा विद्या प्रगट ललाम। वरणन की पुनि लिपि प्रधान।
लक्षण छंद भेद शुभ नाम। एकादिक गिनती अभिराम ॥
अलंकार अरु तर्क पुराण। ज्योतिष वैद्यक शास्त्र महान।
बाजी रत्न परीक्षा सार। सामुद्रक नृप नीत उदार ॥
और परीक्षा गज की सबै। जीवक आदि सुतन कूं सबै।
उरमें अधिक सनेह बढ़ाय। विद्या विविध प्रकार सिखाय ॥
सुश्रूषा पुन विनय अपार। भोजन आदि सनेह उदार।
सेवा आर्यनंदि गुरु योग। जीवक करत भयो सुमनोज्ञ ॥
प्रीति शिष्य की जान विशेष। पूर्व कथित विद्या सु अशेष।
ताहि पढ़ावत भयेजु तेह। कामधेनु सम है गुरु नेह ॥

॥ कवित्त ॥

जीवंधर सुकुमार शोभतो भयो अवनि में।
विद्या पढ़ो अनेक अर्थ सब जानत मन में ॥
श्री जिनधर्म अनूप ताहि जानत हितकारी।
भोगत भोग सदीव बुध सुरगुरु सम भारी ॥
आर्यनंद को मोह अधिक जानो जीवंधर।

तातैं गुरु पर स्नेह अधिक कीनो सु कुंवर वर ॥
जगमें जान विशेष मोह गुरुजन को भारी ।
करे मोह नहिं कौन तास पै जगत मंझारी ॥

* सवैया *

कबही तो लक्षण की चरचा करै कुमार,
कबही गणितकार छंद को रचे विचार ।
कबही तर्क ग्रंथ पढ़त पुराण सार,
कबही सुराज नीति नाटक नाना प्रकार ॥
कबही गावत राग मधुरी सुवाणि कर,
रचत संगीत सार बाजेहु बजाय वर ।
पिता गुरुजन भ्रात सबही सूं प्रीति धर,
दिन दिन प्रमोद कूं करत विस्तार पर ॥

॥ इति तृतीय सर्गः ॥

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

❀ श्री संभवनाथ स्तुति ❀

॥ लीलावती छंद ॥

संभव जिनंद हैं जगत चंद, शोभा अमंद अघ ताप हरो ।
महिमा अनंत भगवत महंत, ध्यावत सुसंत उर ध्यान धरो ॥
करुणा निधान उचरी सुवाणि, परकाश ज्ञान मिथ्यात हरो ।
अरि कर्म नाश वसुगुण प्रकाश, करि अचलवास शिव नार वरो ॥

॥ चौपाई ॥

एक दिवस आरज मुनि संत । जीवंधर मुनि निज विरतंव ।
कहतौ भयो सही समुझाय । अति प्रमोद उरमें सरसाय ॥
लोकपाल नामा भूपाल । था मैं पुत्र सुनो गुणमाल ।
हो उदास जिन दीक्षा लई । अघतें भस्म व्याधि पुन भई ॥
व्याधि योग दीक्षा तज सार । मैं आयो तो ग्रेह मझार ।
तेरे कर को ग्रास अनूप । खाते व्याधि गई दुख रूप ॥
प्रत्युपकार हेत उपकार । विद्या तोहि दई सुखकार ।
विद्यमान विद्या सुखदाय । चोरादिक सूं हरी न जाय ॥
विद्या है जगमें सुखकार । और प्रशंसा जोग उदार ।
क्षीर पानवत पुष्ट करंत । विद्या भूषण सम शोभंत ॥

॥ दोहा ॥

विद्या तें आचार सब, कृत्य अकृत्य सुराज ।
हित अनहित जाने सबै, हो सब वांछित साज ॥
सुन गुरु को वृत्तान्त सब, जीवंधर सुकुमार ।
विनय सहित कहतो भयो, विनय सु शुभ दातार ॥

* रोटक छंद *

गुरु की जानी निर्मल ताई । तिनसूं प्रीति करी अधिकाई ।
रतन लहे तें हर्ष बढ़ाय । शुद्ध लहे तें अति सुख पाय ॥
हे स्वामी तुम गुरु हितकारी । रतनत्रय दाता गुण सारी ।
निर्मल आतम व्रत तुम धारी । तुम प्रवीण जगके हितकारी ॥

पात्र देख तुम प्रीति करो हो। निर्मल आतम ध्यान धरो हो।
सब जीवन पै करुणा धारो। भवसागर तें पार उतारो ॥
धर्मवंत बुधिवंत प्रवीना । आप सुशोभित हो गुण भीना।
निर आलसी डरे भव सेती। सो शिष्य गुरु सेवे हित सेती ॥
गुरु सेवा तें शिव पद लाधै । अल्प वस्तु सो कहा न साधै।
रतन अमोलक तें जग मांही। काष्ठभार आवै छिन मांही ॥

॥ अडिल्ल ॥

गुरु द्रोही सुकृतघ्नी पुरुषन के सबै।
ऐसे गुण सो कोई नसै नाहीं अबै ॥
क्षिणमें विद्या जाय न संशय जानिये।
जड़ बिन तरु किम रहे नाथ उर आनिये ॥
गुरु के जे घाती अज्ञानी जीव हैं।
सो जगके घाती निहचै अघलीन हैं ॥
तिनको नहिं विश्वास द्रोह गुरु सों करै।
औरन सों करते जु द्रोह कैसे डरै ॥

॥ चाल छंद ॥

यातें तुम शरन सहाई । हित करता तुम सुखदाई।
तुम पिता बहुत उपकारी। तुम सम नहीं जगमें भारी ॥

॥ चौपाई ॥

शिष्य वचन इमि सुनके सबै। आर्यनंद मुनि बोले तबै।
सबसों तुम हित कीजो सदा। अहित कार्य कीजो मत कदा ॥

पंच उदंबर तीन मकार । आठ मूल गुण ये सुखकार ।
पुन गृहस्थ को धर्म महान । जीवक कूं दीनो सुख खान ॥
पुनि जीवंधर ऐसे कही । अहो प्रभो मैं वानिज सही ।
तोष रोष कर कारज कहा । सिद्ध होय मैं परवश महा ॥
क्षत्रिय कुलमें मोहि समान । होते जे नर अति बलवान ।
तिनकूं दुर्लभ जगत मंझार । कहा वस्तु होवे निरधार ॥
ऐसे वच सुनि आरजनंद । शुभ वच कर संबोधो नंद ।
अब तू भय मत करे महंत । तू न वैश्य क्षत्रिय है संत ॥
जीवंधर तब बोले एम । मैं क्षत्रिय कुल उपजो केम ।
सो तुम कहो नाथ समझाय । तातें मेरो संशय जाय ॥
सुनो वत्स सत्यंधर भूप । जाके विजया नारि सरूप ।
तिनके तूं जीवंधर नाम । पुत्र भयो गुणगण को धाम ॥
भारवाह कर कपट अपार । राज खोस भूपत को मार ।
पुत्र बुद्धि कर सेठ विनीत । तोही उठायो धरके प्रीति ॥
गुरु मुखतें जानो निरधार । नृप को घाती काष्ठांगार ।
ता मारन के हेत कुमार । पहिर कवच कर क्रोध अपार ॥
बार बार गुरु मनै करंत । तो भी शांत होय नहीं संत ।
प्रगटे क्रोध हिये अधिकाय । तवै विचार कछू न लहाय ॥
दुसह क्रोध जानो मुनिराय । कहत भयो तासूं समझाय ।
क्षमा करो इक वर्ष कुमार । मेरे बच तें अब निरधार ॥
ये ही देउ दक्षिणा शुद्ध । मारो मति तुम पुत्र सु बुद्धि ।

गुरु ने मनै कियो इम सोय। गुरु आज्ञा बुध लंघै न कोय ॥
कोप समै ताको मुनिराय। परवश देख चित्त में लाय।
देत भयो तब शिक्षा येन। हित करता है गुरु के वैन ॥

अडिल्ल

कोप धनंजय प्रथम जलावे आपको।
औरन को पुनि एह उपावे पाप को ॥
वंशअग्नि जिम दाहत है निज को सही।
पीछे भस्म करे बन कूं संशय नहीं ॥
करि के क्रोध सु जीव नरक में जात हैं।
दुखका भाजन होय अधिक विललात हैं ॥
तू नहि जानत वत्स नरक गति में गये।
द्वीपायन मुनि आदि विविध दुख कूं लये ॥
हेया हेय विचार चित्त में जो नहीं।
शास्त्र पढ़न को खेद वृथा संशय नहीं ॥
तंदुल रहित धान का खंडन जो करे।
हाथ न आवे कछू वृथा श्रम को धरे ॥
वैर विषैं जे जीव प्रवरते धर मुदा।
तत्व ज्ञान सब तिनको निरफल है सदा ॥
दीपक हाथ लिये तें कारज को सरै।
जानि पूछि मति हीन कूप मांही परै ॥
तत्वज्ञान अनुसार सार कारज करो।

और प्रकार असार कार्य चित ना धरो ॥
मोहादिक जु प्रचंड चार जगमें सही।
व्याधि रूप धन तिनपै जात हरौ नहीं ॥
लोक विषै जे उत्तम सज्जन हैं जिके।
कही इक जतन थकी ढूंढ लहिये तिके ॥
जैसे रतन अमोलक कहीं इक पाइये।
ठौर ठौर है लोह कहा हित ल्याइये ॥

॥ चौपाई ॥

सत्पुरुषनि की संगति पाय। क्षमा आदि शुभ भाव धराय।
गुण उपजें नाना प्रकार। इस भव परभव फल दातार ॥
संतन के वचनन तें जान। सज्जनता तत्वन को ज्ञान।
होय अधिक उपजे आनन्द। सुनो वचन मेरे सुखकंद ॥
कइयक नर जोबन मद धार। नाश भये जगमें निरधार।
ईश्वरता को गर्व धराय। कैयक नष्ट भये दुख पाय ॥

॥ दोहा ॥

कइ इक बहु समुदाय कर, नष्ट भये जग थान।
तातैं तजो विकार तुम, अहो कुमर बुधवान ॥

॥ चौपाई ॥

देश काल के बल कूं पाय। जब बैरी हतयो दुखदाय।
राहु काल के वशते सही। कहा चंद्र छवि नाशत नहीं ॥

॥ दोहा ॥

देश काल बल पाय के, बुध अरि नाश कराय ।
जैसे औषध योग तें, छिनमें व्याधि नशाय ॥

॥ चौपाई ॥

क्षीण पुण्य प्राणी को होय । शिक्षा वचन रुचै नहिं कोय ।
फूटे पात्र विषै सुविचार । कहाँ तेज ठहरे निरधार ॥
कारज अंध सुनै नहिं कान । लगै नहीं प्रतिबोध महान ।
भले मार्ग में चाले नांहि । जोबन अंध जगत के मांहि ॥

अडिल्ल

यातें देख सुकाल उपाय करीजिये ।
निज कारज की सिद्धि विषै चित्त दीजिये ॥
और भाँति कारज को नाश लहे सही ।
निश्चय सुत बुधवंत जान संशय नहीं ॥

॥ चौपाई ॥

आप आप में आप ही जान । आप काज निज करे सुजान ।
तातें अपनो गुरु इह जीव । है निरधार सु आप सदीव ॥
इस प्रकार प्रति बोध कुमार । छमा कराई तब ही सार ।
मोह जु पाश काट के मुनी । तप निमित्त उद्यत भयो गुणी ॥
जाय विपन में आरजनंद । गुरु ढिग दीक्षा लई अमंद ।
विघन रहित सामग्री सार । निज कारज कर है निरधार ॥

॥ अडिल्ल ॥

गुरु वनमें जब गयो तबै सुकुमार जू।
करत भयो उर शोक अधिक विस्तार जू॥
गर्भ धारने तैं माता गुरवी सही।
पिता और गुरु शिक्षा तें पूजित मही॥

॥ चौपाई ॥

उत्तम कुल वर वंश मझार। उपज्यो जीवंधर सुकुमार।
गुरु कूं गये सुखन में प्रीति। कहूँ न धारत भयो विनीत॥

॥ कवित्त ॥

पुनि जीवंधर शोक रूप दावानल मांही।
तपत भयो अधिकाय काज कछु नाहि सुहाही॥
तत्वज्ञान जल थकी क्षणिक ही मांहि बुझाई।
अति शीतलता जोग कहा आताप न जाई॥

॥ चौपाई ॥

नक्षत्र माल आदिक वर हार। बाजू बंध कड़े मनहार।
कुंडल करि मेखला लसंत। तिनसों कुमर अधिक शोभंत॥
चतुर त्रियन के चित्त मंझार। बुद्धि पुंज सम शोभित सार।
मूरति धर मानो है काम। बुद्धि रूप गुण युत अभिराम॥

कवित्त

ऐसी त्रिया जगत में को जो देख कुमर को रूप अपार।
पीड़ित मदन पाँच शर संती वेधी गई नाहिं निरधार॥

महा सुभग मन मोहन मूरति ता आगे लाजत है यार ।
पूरव पुण्य कियो अति भारी तातैं पायो शुभ आकार ॥

॥ दोहा ॥

कबहूँ जल क्रीड़ा करे, मित्रन सहित उदार ।
रमै रम्य थानन विषै, सुरपति वत निरधार ॥

॥ चौपाई ॥

कबही रथ में है असवार । कबही शिविका बैठ कुमार ।
कबही घोड़े चढ़ै बुधिवंत । राज मार्ग में गमन करंत ॥
अब आगे याही पुर पास । गोकुल तहाँ वसै सु निवास ।
उत्तम गोकुल युत शोभंत । चौपद विविध तहाँ निवसंत ॥
नंद गोप तहाँ ग्वाल महान । सकल ग्वालन में परधान ।
गोदावरी तास घर नार । तिनके सुत गोपाल उदार ॥
गोविन्दा तिनके वर सुता । शुभ लक्षण भूषित गुण युता ।
सकल कुटुंब के मन कूं हरे । कमला सम ते शोभा धरै ॥
एक दिवस मिल भील अशेष । आन हरी तिनि गाय विशेष ।
मद कर अंध होय जो जीव । कहा पाप कर है न सदीव ॥
गये भील गोधन ले सबै । व्याकुल भये गोपगण तबै ।
आय भूप के सदन मझार । सबही करत भये सु पुकार ॥
अहो भूप हमरी सब गाय । हर ले गये भील बहु आय ।
ऐसे ग्वालन करी पुकार । सुनके तबै जु काष्ठांगार ॥
कियो क्रोध उरमें विख्यात । ताकर कंपित भयो सुगात ।

दुरजन करि कीनो अपमान। कैसे सहे पुरुष पर धान ॥
भीलन के जीतन के हेत। सेना भेजी नृपत सु चेत।
वेढि लियो भीलन को साल। करन भये जु युद्ध चिरकाल ॥
गिरि के ऊपर तें जु किरात। बानन की वर्षा जु करात।
तिन कर भारवाह की सेन। भई जर्जरी लहौ अचैन।

अढिल्ल

छोड़े बाण समूह भील धनु तान के।
लगे शीस मुख चरण नाक उर कान के ॥
तिनकर पीड़ित होय फेर भूपर परे।
भारवाह के वीर महा दुख ते भरे ॥
गेरत भये पाषान भील हुंकार के।
वीरन के सिर छिदे परे मन मार के ॥
डारे वृक्ष उपाड़ भूप के नरन पै।
तिन कर टूटी पीठ गिरे पुनि धरन पै ॥
इह विधि सबही सेन चित्त व्याकुल सबै।
भीलन को परचंड जान भाजे तबै ॥
उर में भये उदास महा दुख पाय के।
आये उलट सिताब आप पुर धाय के ॥

* चौपाई *

नृप सेना की हार निहार। नंद गोप उर माँहि विचार।
अपने थानक को बल ठान। कुंजर सूं डरपै नहिं स्वान ॥

उदर पूर्णा गई मो सबै । कहा करूँ कारज मैं अबै ।
बिना द्रव्य नर है जग माँहि । जीरण तृण सम संशय नांहि ॥

कवित्त

द्रव्य उपारज काज कुशल प्रानी जे होई ।
सुख धन को नहिं पार क्षेम संशय नहिं कोई ॥
दिन दिन बढ़ै सु रिद्धि होइ आनन्द अपारा ।
दुख को होय विनाश द्रव्य करि के निरधारा ॥

* दोहा *

द्रव्य बिना प्रानीन को, जीवन निर्फल जान ।
अब मेरे धन क्षय भयो किम जीऊँ जग थान ॥

॥ चौपाई ॥

वृथा शोक करके अब कहा । शोक पाप उपजावत महा ।
पाप थकी दुख होय अतीव । तातैं तजनो पाप सदीव ॥
गायनि को उपाय पुनि सार । यथा शक्ति कीनो निरधार ।
कियो उपाय सरै सब काज । ऐसे कहत पूर्व ऋषि राज ॥
ऐसे करि विचार तत्काल । करत भयो उपाय दर हाल ।
निज कारज अर्थी नर जान । दीरघ दर्शी होत महान ॥
नंद गोप पुनि नगर मझार । दई घोषणा इस विधि सार ।
जाय भील जीते जो सबै । ताको देऊँ सुता निज अबै ॥
यही घोषणा सुनी महान । कई इक छत्री उठौ सुजान ।
ऐसो भूमि विषै नहिं कोय । मरने कूं जो प्रापत होय ॥

पुर में जे क्षत्री बलवान। भील नाथ कूं दुर्गम जान।
आपस में मुख रहे निहार। सब छत्रिय बल पौरुष हार॥
सुनि सिताब जीवंधर तबै। कीनी मनै घोषणा जबै।
जो सूरमा धरै बल सार। सो उत्साह करे निरधार॥

❀ अडिल्ल ❀

नौबत तबला भेरी कुमर बजवाय के।
सावधान वर सुभट किये हर्षाय के॥
लिये भ्रात शतपंच सँग अपने सबै।
भीलन सूं रण हेत भयो उद्यत तबै॥

॥ चौपाई ॥

रथ अनूप पुनि चपल तुरँग। बहु मतंग अति उन्नत अंग।
गोप सेन वर सुभट अमान। तिन जुत कुमर चलो मतिवान॥
क्रमतें जीवंधर सुकुमार। गयो भील पुर निकट उदार।
पटहादिक बाजे बजवाय। तिनकूं निज आगमन जनाय॥
जीवंधर कूं आयो जान। युद्ध करन की मनसा ठान।
किल किलाट रवकर भयदाय। मिले सकल टीड़ीवत आय॥
काले वरण नेत्र अति लाल। शीश लपेटे वेल विशाल।
दीर्घ दंत सब क्रूर सुभाय। भाल बानतैं अति भय दाय॥
किल किलाट अति शब्द करंत। पुनि दंतन कर अधर डसंत।
लिये उपल करमें विड रूप। धावैं सन्मुख धर यम रूप॥

जीवक अपनी मति कर ऐन। भीलन की वेढ़ी सब सेन।
खड्गबान मुदगर पुन गदा। तिनकर करत भये रण तदा॥

॥ अडिल्ल ॥

मार बहुत किरात कुमर निज बाण तें।
कितेक भये उदास डरपि निज प्राण तें॥
जैसे सिंह निहार मतंगज भय करे।
तैसे कुमर विलोक शवर अति ही डरै॥
फेर संभल के भीलन रण कीनो जबै।
छोड़े शर पाषाण भजी सेना तबै॥
निज सेना लख भंग लाल लोचन किये।
उठो कोप कर भ्रात पंचशत सँग लिये॥
किये खड्ग कर खंड शवर कंई जबै।
प्राण छोड़ छिन मांहि गये जमग्रह तबै॥
गदा घात कर चूर्ण शवर कंई भये।
वज्रपात कर किधौं अचल खंडित भये॥
होय अधोमुख परे भूमि कंई नरा।
कइयक आकुल होय गरे लोटैं धरा॥
कइयक मूर्च्छा खाय अवनि ऊपर परे।
जैसे गरुड़ निहार भुजंग भाजैं खरे॥
पुनि करिके चिरकाल युद्ध जीवक सुधी।
कर उपाय बहु भाँति भील नायक कुधी॥

जाको नाम कुरँग विदित सब खलक में ।
निज मति बलतें बाँध लियो जिन पलक में ॥

॥ चौपाई ॥

जीवंधर की सेन मझार । हर्ष सहित जय शब्द उचार ।
पुण्यवान पुरुषन को लोय । दुर्लभ वस्तु कौनसी होय ॥
भील कुरंग नाम सरदार । ताकूं छोड़ दियौ सुकुमार ।
बड़े नरन को कोप महान । जल रेखा सम रहे प्रमान ॥
तासु चरण प्रणामो शिर नाय । विनय सहित बोल्यो वनराय ।
मैं तेरो किंकर महाराज । आज्ञा देऊ करों सो काज ॥
जीवंधर बोले तिहिवार । रे कुरंग गोकुल कुलसार ।
ग्वालन कूं सौंपो तुम सवै । पालो मो आज्ञा तुम अबै ॥
ऐसे सुन ग्वालन कूं लाय । गो समूह दीने हर्षाय ।
हेम वसन भूषण सब सार । जीवक कूं दीने तिहिवार ॥

* पद्धड़ी छन्द *

हे नाथ आज सेती जु मान । जीवन तुम तें मानूं पुमान ।
तुम नरन मांहि होगे नरेश । करुणा सागर सज्जन विशेष ॥
तुम सम नांही जगमें कृपाल । वृष भाजन तुमही सुगुण माल
तुम विन कारण जग बंधु देव । नित पर उपकार विषै सु एव ॥
यातें मैं किंकर हों अधीश । निज परिजन युत जानो सुधीश
इह विधि कुरंग विनती अपार । सो करत भयो मतिसार धार ॥

॥ चौपाई ॥

भीलनाथ कूं ले निजलार। आये निजपुर कुमर उदार।
बाजे विविध सु बाजत भये। धुनि सुनि पुरजन भय जुतथये॥

॥ अडिल्ल ॥

विनय सहित परणाम कियो निज तात कूं।
कहत भयो हर्षाय विजय की बात कूं॥
बार बार जननी चरणन सिर नाय के।
करि प्रणाम पुनि आँगन बैठो आय के॥
अंबा सुत कूं गोद विषै बैठाय के।
मस्तक चूमत भई सनेह उपजाय के॥
कहत भई भीलन कूं तुम जीते अबै।
विजय सुपाई कैसे मोहि भाषो सबै॥
पुत्र कहाँ तेरे कर हैं कोमल अबै।
कहाँ दुष्ट वे भील जये कैसे सबै॥
कौतुक मो उर माँहि बड़ो वरतै सही।
सो मोसो समभाय कहो संशय नहीं॥

* कवित्त *

हितसों चिरकाल सु जीवक कों करके बहु आदर नेह कियो।
पुनि वारहिवार हिये सु लगाय महा सुख पाय प्रमोद लियो॥
"जयजीव" इसो वरवाक् चये उरमें हर्षाय अशीस दियो।
तिहि औसर जो सुख मात लियो,अब मोपै सो नहि जाय कहो॥

॥ रोला छंद ॥

निज गोकुल कूं पाय नंद गोपाल हिये वर ।
कियो बहुत आनन्द कहो नहि जाय सुमुख कर ॥
पुरुषन के जग माहि मान तें धन निरधारौ ।
गरवो है अधिकाय कहो संशय न लगारो ॥

॥ चौपाई ॥

भारवाह यह सुन विरतंत । उरमें भयो उदास अत्यंत ।
रवि को उदय जगत हितकार । घु घू कूं कहा रुचै विचार ॥
यह तो कथन रहो इह थान । औेर सुनो आगे मतिवान ।
नंद गोप अपनी वर सुता । रति समान नाना गुण जुता ॥
देवे की इच्छा उर ल्याय । कीनी अर्ज़ कुंवर पै जाय ।
करण योग कारण जो होय । संत तहां चूके नहिं कोय ॥
जीवंधर तन काँति विभास । दशन अंशु कर है परकाश ।
सकल सभा को दान करंत । नंद गोप सों बचन कहंत ॥

कवित्त

अहो गोप पद्मा सुभ्रात मेरो हितकारी ।
ताहि सुता तुम देहु आपनी अति सुखकारी ॥
उत्तम मत के धरनहार नर जे जग मांही ।
वस्तु अयोग्य विषै सुधरैं वांछा वे नाँही ॥

॥ चौपाई ॥

फेर नंद बोलो सुनि देव । दई सुता तुम कूं मैं एव ।
कैसे याकूं दीनी जाय । तुम विचार देखो बुधिराय ॥

॥ दोहा ॥

गोत्र मात्र ही भिन्न हूँ, निश्चै करि यह जान ।
क्रिया चलन करतूत करि, भिन्न नहीं प्रधान ॥
ऐसे बचन प्रबंध करि, नंद गोप तिहवार ।
हर्ष बढ़ायो कुंवर कूं, बहुत कियो सुख सार ॥

॥ चौपाई ॥

लगन देख शुभ नंद गोपाल । विनय दान सन्मान विशाल ।
आनन्द सहित व्याह उत्साह । करत भयो सो कर चित चाह ॥

अडिल्ल

गोविन्दा नामा जुसुता गुन की मही ।
गोदावरी त्रिया तें उपजी सो सही ॥
आनन कमल समान कुंवर जीवक तबै ।
तात बचन तें पाणि ग्रहण कीनो जबै ॥

* सवैया *

जाको मुख चंद्र देख चंद्र हु लजात भयो,
लोचन निहार मृगी जाय बसी बन में ।
जाके शुभ बैन सुन कोकिला भई है स्याम,
अलि मंडलात हैं सुगंध लेत तन में ॥

ऐसी वर नारी सार रति कैसो रूप धार,
तन को उद्योत जैसे दामिनी सु घन में।
पुण्य के प्रभाव ऐसी नार पाई जीवक ने,
भोगत है भोग सार पाप नहीं मन में॥
सत्यंधर को कुमार जीवंधर बलधार,
भीलन को समुदाय जीतो जाय क्षण में।
भीलन को गाय बांध बाजी धन आदि पाय,
गोकुल छुड़ाय मद धारो नहिं मन में॥
आय निजपुर माँहि भ्राता सब संग लिये,
इन्द्र कैसी शोभा धरें गाढ़ौ निज पन में।
पूर्व कियो है पुण्य नाना फलकारी तिन,
जानो बुध यातें अब राजत सुजन में॥
राजत मयंक मुख जीवक को प्रकाश मान,
देख जुवती जन कमल दल नैन सों।
शोभित प्रताप जाको भान को उद्योत मानो,
धारत भय वैरी भूप रहत अचैन सों॥
करैं प्रतिपाल निज कुल को उदार मत,
करैं सन्मान दान बोलें मधुर वैन सों।
शोभित अवनि विषै पुण्य के प्रभाव सेती,
भोगत हैं भोग सुख अपने धाम चैन सों॥

॥ इति चतुर्थ सर्गः ॥

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

❀ अभिनन्दन स्तुति ❀

॥ छप्पय ॥

अभिनन्दन आनन्द कंद जगजन सुख दायक ।
जगत शिरोमणि ज्येष्ठ जगत भरता जग नायक ॥
जगत तात जग ईश जगत गुरु हे जग नामी ।
शिव रमणी भरतार देउ शिव सुख शिव गामी ॥
जगत पाल जग बंधु तुम अशरण हो जग के शरण ।
युग हाथ जोर नथमल्ल कहत तार तार तारन तरन ॥

॥ पद्धरी छन्द ॥

इस आगे पुर या ही मझार । श्रीदत्त नाम श्रेष्ठी उदार ।
ताके घर लक्ष्मी है महान । सो दीनन कूं बहु देय दान ॥
इक दिवस सेठ इम कियो विचार । लक्ष्मी पैदा करिये सुसार ।
अतिशय करके इस जगत माँहि । धन की वाँछा काके जु नांहि ॥
लक्ष्मी को फल दीजे जु दान । ता कर फैले कीरति महान ।
सुख होय धरम करके अतीव । सोई उपाय कीजे सदीव ॥
है विपुल लच्छि मम तात गेह । तापर मेरो नाही सनेह ।
जो धरत शक्ति अपनी महान । सो परधन नहिं वाँछे सुजान ॥
जो लक्ष्मी घरमें हो अतीव । खरचे बिन,उद्यम जो सदीव ।
भूपत हू भोगत भोग सार । सो क्षीण होय दिन दिन मझार ॥

धन नाश भये दालिद्र अतीव । आवत निजघर मांही सदीव ।
दालिद्र समान दुख नांहि कोय । तिस नाम लिये मन क्षुभितहोय
सिंहन कर सेवित विपिन जेह । बसवो वर तरु तल सुचि सुगेह ।
विष फल भक्षण करवो मनोग । धन रहित प्राण धरवो न योग ॥
जैसे दलिद्र ते दुखित होय । ऐसे मरने तें नाहि कोय ।
प्रानन के छूटे मरण होत । युत प्राण मरण धन बिन उद्योत
निर्धन को जस फैले न कोय । पुनि गुण समूह नहिं प्रगट होय ।
पुनि विद्यमान विद्या अतीव । धन बिन जु कहा शोभित सदीव
धन बिन जगमें उपजो न जान । जीवत ही जानो मृत समान ।
धनहीन अफलतरु सम असार । थितहु अनथित है जग मँझार ॥
धन बिन नरको आदर न होय । ता करि कारज सर है न कोय ।
तैसे धन बिन या जगत माँहि । किंचित कारज कछु सरत नाहिं
धनवंत मानियत सकल थान । कुल हीन हू पूजत सब जहान ।
अब बहुत कहन तें काज कोय । देखत ताको मुख सकल लोय ॥
संपति पाये को फल महान । संतन को पोषै प्रेम ठान ।
सहकार फले सो जगत लोय । भोगे यामें संशय न कोय ॥
जीवन कूं संपत जग मँझार । सो विपत सहित जानो विचार ।
ज्यों कूप कुंभ तें जल भरंत । पुनि निकस निकट आवे तुरंत ॥
धन होय ग्रेह तो नर महान । मुनि आदिक कूं बहु देत दान ।
तातें हो जगमें जस उदार । भव भव में सुख पावे अपार ॥
जो नीचन कूं धन लाभ होय । सो शुभ मारग लागे न कोय

जिमि नीम वृक्ष फल लगत भूर। तिनकूं वायस ही खात क्रूर ॥
उपजइये विधि तें धन महान। तासों निजहित करिये महान।
सुखके निमित्त बुद्धिवान जीव। को जतन करे नांही सदीव ॥

॥ दोहा ॥

यह विचार चिरकाल कर, कियो सेठ प्रस्थान।
बहुजन युत व्यापार कूं, ले निज वित्त अमान ॥

॥ चौपाई ॥

बैठ जहाज चलो सो जबै। पोतवाह लीने सँग तबै।
धन को अर्थी जो नर मही। कहा उदधि अवगाहे नहीं ॥
और जहाज़न में सुख पाय। व्योपारी चाले अधिकाय।
रतन द्वीप की इच्छा धार। पहुँचो उदधि बीच तिहिवार ॥
तब सब अर्थ उपार्जन हेत। उरमें कर विचार शुभ चेत।
सब जन सहित उदधि के तीर। पहुँचे निकट विषै धर धीर ॥
तब वारिधि के तीर महान। चली पवन अति ही भयवान।
सघन जलद छायो आकाश। सब जन व्याकुल भये उदास ॥
महा प्रचंड पवन तें जबै। भये जहाज चलाचल सबै।
सबै वणिक दुखतें "हा" कार। करत भये उर में भयधार ॥

॥ अडिल्ल ॥

नावन के इम नाश को कारण देखकें।
करत भये सब वणिज जु शोक विशेषकें ॥

कारण लख निज नाश तनों निरधार जू।
कष्ट कौन के होय नहीं सु विचार जू॥
श्रीदत्त सेठ जहाज तनों दुख देख के।
औरन कूं संबोधित भयो विशेष के॥
तरत महान सु पुरुष आप संसार सों।
औरन को तारे निहचै भव वारिसों॥

॥ चौपाई ॥

श्रीदत्त शोक कियो न लगार। तत्वज्ञान को जानन हार।
लख दुख सुधी विकारन करे। मूरख शोक महा उर धरें॥

॥ दोहा ॥

होनहार आपद निरख, तुम क्यों होहु उदास।
सर्प वदन में मेल कर, अहि शंका किम तास॥

॥ चौपाई ॥

विपति विषै इक है उपचार। शोक और भय को परिहार।
तत्वज्ञान प्राणी जो धरें। ते इस भव पर भव सुख करें॥
ध्यावत भयो सेठ भगवान। लियो दुविधि सन्यास महान।
तत्वज्ञान के जानन हार। तिनकूं तत्व शरण निरधार॥
पवन योग तें उठी तरंग। ता कर भयो पोत को भंग।
पूरब भव में पाप अपार। कियो उदय सो भयो अवार॥
जपो सेठ नवकार महान। ता करि उपजो पुण्य प्रधान।
काष्ठ खंड इक लखो उदार। दुर्लभ कहा जपत नवकार॥

नाशत पोत वणिक जे सबै । डूबत भये उदधि में तबै ।
कोइ यक काष्ठ खंड कूं पाय । गये तीर ते पुण्य पसाय ॥
धर्म प्रभाव सेठ श्रीदत्त । काष्ठ खंड पायो शुभ चित्त ।
पूर्ण आयु धारें जे जीव । तिनकी रक्षा होय सदीव ॥
चढ़ो काठ पर सेठ महंत । सुखसूं तट पै गयो तुरंत ।
जैसे राज भ्रष्ट भूपाल । प्राण रहें तो होय खुशाल ॥

❀ अडिल्ल ❀

मूढ़ आतमा वृथा नेह तू करत है ।
तृष्ना अग्नि प्रचंड थकी क्यों जरत है ॥
इस भव पर भव मांहि महा दुख धरत है ।
तृष्णा नहिं सुखदाय जिनेश्वर कहत हैं ॥
धार सदा वैराग्य भाव निज उर विषै ।
इस भव परभव माँहि होय संपति अखै ॥
कर तू धर्म सदीव जीव सुख हेत जू ।
पर की आशा छोड़ पाप फल देत जू ॥
छोड़ धर्म कूं मनुष जगत में धर मुदा ।
सुख कीरति की इच्छा धारत हैं सदा ॥
सो नर तरु को मूल थकी सु उपार कें ।
फल समूह चाहें सुख हेत विचार कें ॥
अहो प्रगट संसार महा दुख खान है ।
यामें कछु नहिं सार यही निरधार है ॥

प्राणी करत विचार और उरमें सही।
विधि वशतें पुनि होय और तैं और ही॥
याही तैं योगीन्द्र सकल इन्द्रिय विषै।
राज संपदा छोड़ जाय बनके विषै॥
मुक्ति हेतु तप तपैं सार तजकें मदा।
धन्य धन्य त्रैलोक्य विषै वे नर सदा॥

॥ कवित्त ॥

तात मात सुत भ्रात और कान्ता सुखदाई।
तथा सकल परिवार विविधि संपति अधिकाई॥
सब झूठं व्यवहार प्रीति उरमें क्यों धारे।
पंथी जन को नेह जेम यह जग थिति धारै॥
तत्वज्ञान वेत्ता जु सेठ अपने चित्त माँही।
ऐसं करत विचार छिनक बैठो तिह ठाही॥
तत्वज्ञान युत जीवन कूं सुख दुख मंझारा।
जागत है उर,ज्ञान रूप संपत निरधारा॥

* मरहठा छंद *

तब श्रीदत्त सेठ के सु पुण्य को प्रताप कोई इक नर तहाँ आयो
मनुष्यन के निज पुण्य उदयतें बनमें मिलो मित्र मन भायो॥
पुनि आप सेठ के आगे बैठो अधर नाम नभचारी।
सो बिना विचारे लाभ भयो शुभ मन वांछित सुखकारी॥
तब सेठ अधर विद्याधर आगे आदर युत हित भीनो।

जब सकल वृतान्त आपनो तासों कहवे कूं मन कीनो ॥
तब ही खेचर पूछी हो तुम कौन कहाँ तैं आये।
तुम उदधि तीर क्यों बैठे अकेले कहो कहा दुख पाये ॥

॥ चौपाई ॥

नभचर आगे सब विरतंत। निजपुर आदि उदधि पर्यन्त।
धन जहाज़ नाशे जनसार। सो सब कहो सेठ तिहिवार ॥
अधर नाम विद्याधर संत। सुनो सेठ को सब विरतंत।
है जु सेठ को वाँछक सही। कपट सहित कछु भाषो नहीं ॥
कोइ इक मिसकर नभचर तबै। धर विमान में ताकूं जबै।
नभ मारग हांके बुधवंत। रूपाचल को चलो तुरंत ॥

॥ दोहा ॥

सो विद्याधर मीत करि, श्रेष्ठी को तिहिवार।
तरु मनोज्ञ विस्तार जुत, बन दिखलायो सार ॥

॥ पद्धड़ी छंद ॥

नभचर तहं इक गिरिवर उतंग। दिखलायो वांसन युत अभंग।
मानूं खगवंश उदार सार। ताकूं सु बतायो मीत धार ॥
कहिं पुर पट्टन करवट महान। बहु देश नदी अति शोभमान।
कहुँ हरि मर्कट क्रीड़ा करंत। दोऊ देखत नभ में चलंत ॥
क्रीड़ा करते दोऊ उदार। अनुक्रम तें रूपाचल मझार।
सुख सेती पहुंचे जाय संत। उरमें प्रमोद धारो अत्यन्त ॥

विजया चल ऊपर बन महान। तरु बल्ली फलकर शोभमान।
लख उतर विमान थकी गिरीश। बैठे दोऊ हर्षित सुधीश॥

॥ दोहा ॥

विद्याधर सो सेठ ने, तब पूछो हर्षाय।
क्यों तूं मोहि लायो यहां, सो बोलो निरधार॥

॥ चाल छंद ॥

यह विजयारधगिरि सोहै। सो रजत वरन मन मोहै।
इकसौ दश पुरी विराजैं। सुर पुर सम शोभा साजैं॥

* रोटक छंद *

अति विस्तार समेत इहाँ है दक्षिण श्रेणी।
रहै सास्वतो धर्म सदा उत्तम सुख देनी॥
तामधि पुरी पचास कोटि खाई अति राजै।
इक इक कोडि सुग्राम पुरी प्रति शोभा साजै॥

॥ चौपाई ॥

तहाँ देश गंधार उदार। बन उपवन कर शोभ अपार।
साधर्मी जन वसत अतीव। दया दान व्रत करत सदीव॥
तामें नित्या लोकापुरी। नाना गुण कर शोभित खरी।
वलयाकार लसै प्राकार। खाई कर शोभित मनहार॥
उन्नत भवन अनेक लसंत। तिनपै ध्वजा विविधि फरहंत।
देवनि कूं वसने के हेत। किधों बुलावत हर्ष उपेत॥

गरुड वेग तहाँ है खग ईश। गुण गणकर शोभै सु गरीश।
रिपु अहि मद मर्दन कूं जान। कियों तृप इह गरुड़ समान ॥
ताके त्रिया धारणी नाम। प्राणन तें प्यारी अभिराम।
हाव भाव विभ्रम सुविलास। इन आदिक गुण गण परकाश
तिनके गंधर्वदत्ता नाम। कन्या है अति ही अभिराम।
जैसे गंधर्व सुर की सुता। तैसे यह शोभित गुण जुता ॥

कवित्त

मुख चंद्र अमंद मनोहर देखत इंदु सदा उरमें भटकें।
शुभ वेनी श्याम तमा अलकें युग मानो नागन सी लटकें ॥
युग द्रग विशाल चंचल कुरंग सम बांकी भौंहन करि मटकें।
नासा शुक दर्पण वत कपोल विद्रुम सम अधर सुधा गटकें ॥
दाड़िम दशन धरत शशि की द्युति कोकिल बैन सुधा गटकें।
जुग भुजा कलप शाखावत मांहैं कर पल्लव कोमल लटकें ॥
युग कुच कुंभ कठिन उन्नत शोभित हैं दोऊ नट कें।
नाभि लसत सरसी वत गहरी केहरि सम कृश तट कटिके ॥

॥ मरहटा छन्द ॥

अति शोभित नितंब कटनी के तट पग थूल पुष्ट छवि धारें।
काम फील आलान बंध जुग उरु मनोहर किधौं समारे ॥
युग जंघा शोभित है कदली वत चरन कमल छवि न्यारे।
गति सम गयंद चालत अति धीमी तब आभूषण तन छवि धारे

॥ चौपाई ॥

गुण सरूप गति वचन उदार । लावनता पटुता अधिकार ।
जैसे याके तनके माँहि । तैंम और त्रियन के नाँहि ॥
गान कला में अधिक प्रवीण । किधौं किन्नरी यह गुणलीन ।
श्री देवी मम है अवदात । रूपाचल पै यह विख्यात ॥
गरुड़ वेग खग ईश उदार । एक दिवस लख कन्या सार ।
ब्याह योग यौवन युत देख । उग में चितवन कियो विशेष ॥
कन्या ब्याह हेत खग राय । निमिती लीनो वेग बुलाय ।
पूछत भयो तवै हर्षाय । दशन अंश करि सभा न्हवाय ॥
हे मति सागर मेरी सुता । यौवन सहित कलागुण युता ।
कौन होय सो कहो तुरंत । होनहार याको वर संत ॥

॥ दोहा ॥

जन्म लग्न अवलोक के निमिती बोले वैन ।
हे नृप याको वर सुभग, कहूँ सुनो सुख दैन ॥

॥ चौपाई ॥

हेमांगद नामा शुभ देश । राजपुरी नगरी तह वेश ।
भूपति के गेहनि करि लसै । अलकापुरी किधौं इह वसै ॥
ताही राजपुरी में जान । बीन वाद कर रूप निधान ।
जीतेगो याको निरधार । सो होसी याको भरतार ॥
निमित करि विदा नरेश । त्रिया धारणी सहित विशेष ।
तासु पुरुष की प्रापति हेत । गूढ़ मंत्र तिनि कियो विशेष ॥

कहाँ राजपुर है बरनार। कित यह गिरि रूपाचल सार।
भूमंडल पर रचना कहाँ। होय गमन मेरो अब तहाँ॥
यह कारज दुद्धर है वाम। कैसे होय सुनो गुण धाम।
कीजे कौन विचार अवार। मो कहु भ्रांति न रहे लगार॥
जावे राजपुरी जो अबै। तो यह राज रहे किम अबै।
व्हाँ को भी निश्चय नहीं कोय। कब तांई वर प्रापत होय॥
तहाँ उपाय एक है सार। रुचै तोहि तो कीजे अवार।
सबके बढ़े प्रमोद महान। यामें संशय नेक न जान॥
राजपुरी में श्रीदत्त नाम। वैश्य मित्र मेरो गुण धाम।
मेरो हितकारी जु अतीव। हमसों धारत प्रीति सदीव॥
हम कुल उन कुल माँही प्रीति। क्रमतें आई चली सुरीति।
तातें ब्याह हेत अब जान। वाकूं ल्यावे याही थान॥
रानी युत इमराय विचार। मोहि बुलायो ताही वार।
तेरे लावन काज तुरंत। मोसों अज्ञानी को संत॥
आयसु पाय राजपुर जाय। मैं ढूंढ़ो वणिक पतिराय।
तोकूं लखो नहीं तिहि ठाम। जैसे मूरख आतम राम॥
काहू नरतें ऐसे सुनी। बैठि जहाज़ गयो सो गुनी।
तब मैं आय समुद्र मंझार। तेरो कियो तलाश अपार॥
दैव योग तें तोहि निहार। भृष्ट जहाज़ सहित निरधार।
फिर लायो तोकूं इस थान। या कारण तैं है मतिवान॥
ऐसे सुन श्रीदत्त सुचेत। भयो सुमन में हर्ष उपेत।

कहीं दुख कहीं सुख अतीव। जीवन को जग माँहि सदीव ॥
खेचर अधर सेठ को थाप। गयो भूप के ढिग पुनि आप।
सकल वृतान्त सेठ कूं सबै। कहत भयो हर्षित सो अबै ॥

अडिल्ल

मित्र आगमन सुनत भूप हर्षाय के।
दयो धनादिक ताहि प्रीति सरसाय के ॥
ले परिवार खगेस सँग अपने जबै।
गयो सेठ के निकट भूप हर्षित तबै ॥

* चौपाई *

बार बार मिलके भूपाल। कुशल क्षेम पूछी गुणमाल।
प्रीति धार उर माँहि विशेष। निजपुर लायो ताहि नरेश ॥
भयो जहाज़ उदधि में नाश। कहो भूप सों सकल प्रकाश।
नृप ने खेचर लये बुलाय। उदधि तीर भेजे हर्षाय ॥

* दोहा *

जाय उदधि के तीर तब, धन जनकादि ल्याय।
राजपुरी में सबन कूं दीने सो पहुंचाय ॥

॥ चौपाई ॥

तब श्रीदत्त आपनो तात। आयो लखो नहीं विख्यात।
दुखित होय तब उनसूं कही। कहो सेठ क्यों आयो नहीं ॥
सागर आदि सकल विरतंत। अरु विजयारध गिरी पर्यन्त।
तासूं कह संतोषित कियो। रूपाचल को मारग लियो ॥

पुनि खगेश श्रेष्ठी कूं न्हान । भोजन आदि कियो सन्मान ।
मिलै मित्र हितकारी जबै । कौन विनय करि है नहिं तबै ।।

* दोहा *

एक दिवस एकान्त में, सेठ मति भूपाल ।
कन्या को वृत्तान्त सब, कहत भयो गुणमाल ।।

।। चौपाई ।।

विद्याधर के बच सुखकार । सुन श्रेष्ठी हर्षो तिहि बार ।
करे नृपति जाको सन्मान । सुखी होय नहिं कौन पुमान ।।
तब विद्याधर सुता मनोग । सौंपत भयो सेठ को जोग ।
मित्र सोइ जगमें विख्यात । जासूं कहै गूढ़ सब बात ।।
रतन वसन कन धन बहु भाय । भूपति ने तब लिये मंगाय ।
निज कन्या के व्याह निमित्त । दिये सेठ कूं हर्षित चित्त ।।
सेठ विदा कीनो दर हाल । निज विमान देके भूपाल ।
कन्या युत लख ताहि नरेश । हिये भयो है चिन्त विशेष ।।

❀ अडिल्ल ❀

नारी धारनी आदिक जे नृप की सबै ।
कन्या कूं प्रति बोध उलट आई तबै ।।
जिनके कन्या रतन होय घरमें सही ।
ढील न करनी योग्य तिन्हैं संशय नहीं ।।

॥ चौपाई ॥

कन्या तरुण गृही के होय । ताकूं निद्रा सुख नहिं होय ।
रहे शल्य ताके घट सदा । जाके सुख को लेश न कदा ॥
पुत्री कूं तब भूपति सार । शिक्षा देत भयो हितकार ।
ऐसो जनक कौन जग मांहि । देत सुता कूं शिक्षा नांहि ॥
हे पुत्री तू जनक समान । काँतिवान श्रेष्ठी कूं जान ।
जाकू देय तोहि यह संत । जान प्राण सम ताकूं कंत ॥
पति अनुचरनी नारी होय । निहचे साता पावे सोय ।
पतिव्रत भनो त्रियन को सार । इस भव परभव सुख दातार ॥

॥ सोरठा ॥

गिनियो तात समान रे पुत्री सुसुर कूं ।
सासू मात समान देवर सुत सम जानियो ॥

* दोहा *

हे पुत्री भरतार की कीजो भक्ति सदीव ।
पूज्यनीक पुरुषन तनी, करियो विनय अतीव ॥

॥ चौपाई ॥

अव्रत पुनि प्रमाद दुखदाय । पण मिथ्यात पच्चीस कषाय ।
इनको त्याग कीजियो सदा । इन सेती सुख होय न कदा ॥
दुर्जन भाव चपलता चित्त । पुनि कठोर परिणाम सुनित्त ।
तजिये दुर्जन जन निरधार । हे पुत्रि मो बच मन धार ॥
बार बार जल्पन अरु हास । जहां तहां कूं गमन विनास ।

शील रहित नारी सूं प्रीति । तजियो सदा धार उर नीत ॥
तजियो मान महाँ दुखदाय । ता करि प्राणी दुर्गति जाय ।
रावण आदि मान मद धार । नर्क विषै दुख सहे अपार ॥

॥ दोहा ॥

तत्व अत्व विचारिये, हित के हेत सदीव ।
बिना विचारे हित अहित, नहीं जानत है जीव ॥
इन आदिक दे सीखवर, अरु आभूषण सार ।
कन्या को स्नेह युत, आयो नग्र मझार ॥

॥ चौपाई ॥

अनुक्रम तें सो सेठ पुमान । आयो राजपुरी शुभ थान ।
कोट विशाल सुवलयाकार । स्वर्गपुरी सम काँति अपार ॥

॥ अडिल्ल ॥

गंधर्वदत्ता सँग तब जाइके ।
निज मंदिर परवेश कियो हरषाय के ॥
सातखने वर उन्नत महल विराज हीं ।
फटिक नगन करि जड़ो अधिक छवि छाज हीं ॥

॥ चौपाई ॥

पुनि कन्या की कथा पवित्त । कही त्रिया सूं कंत सुचित्त ।
नारी होय सदा मति हीन । मद मोहित अघ कारज लीन ॥
गयो सेठ भूपति के पास । भेंट किये रतनादिक तास ।
नमस्कार कीनो हर्षाय । मिल्यो राय तब कंठ लगाय ॥

पूछा भयो फेर भूपाल । कहाँ रहे तुम इतने काल ।
ऐसे सुनि सो सेठ सुजान । कहत भयो तासूं निजवान ॥
नाथ पोत मेरा फट गयो । तब विजयारध गिरि पै गयो ।
तहँ तें कन्या अधिक स्वरूप । लायो दई विद्याधर भूप ॥
ता कन्या ने भूप उदार । करी प्रतिज्ञा ऐसी सार ।
वीणा वाद कर जीते कोय । ताकूं परनूं हर्षित होय ॥
कन्या आई जान नरेश । हर्ष करो उर माँहि विशेष ।
तहग जो रूप तासूं अनुराग । को न करे जगमें बड़भाग ॥
नृप आज्ञा तें सेठ महान । वीणा मंडप रच्यो सुजान ।
कियो उछाह महा अतिभार । बाजे बाजत विविध प्रकार ॥
पत्र सुलिख कर सेठ विशाल । भूपन को भेजे दर हाल ।
रच्यो स्वयंवर ताम महान । कन्या व्याहन हेत प्रवान ॥
बीन बजावन में परवीन । होय सो यहाँ आवो गुणलीन ।
वीणा कर जीते जो हाल । कन्या सो परणै भूपाल ॥
बीण भेद को जानन हार । ऐसो धरणीश उदार ।
पत्र बांच हर्षित होय जबै । वीणा मंडप आये सबै ॥
यथा योग्य थल विषै नरेश । बैठे हर्षित होय विशेष ।
त्रिया राग करके अब सही । ठगे गये जगमें को नहीं ॥

अडिल्ल

काष्ठाँगारक भूप आदि सिंगार कैं ।
बीन कला में निपुण बीन कर धार कैं ॥

कन्या को वर रूप देख मोहित भये।
जौलों मंडप माँहि धरें मद कूं थये॥
जौलों खग की सुता धाय निज संग ले।
आई मंडप मांहि बीन कर माँहि ले॥
रूप थकी जग को जु मोह विस्तारनी।
भूषण विविध प्रकार अंग में धारनी॥
डरपी मृगी समान चपल दृग सोहने।
चलत चाल जिमि करी अरुण पग मोहने॥
ताको रूप विशाल देखकै नृप सबै।
लिखी भीत की मूर्ति भये तैसे तबै॥

॥ सोरठा ॥

या सम रूप अपार विद्याधर ग्रह में नहीं।
कोमल वैन उचार मोहत है सब जनन कूं॥

॥ चौपाई ॥

जगत विषै जे नारी सार। तिनकूं जीते यह निरधार।
बिधिना ने यह रची अनूप। करत भये इम वितरक भूप॥
कन्या धाय सहित हर्षाय। निज आसन पै बैठी जाय।
अवलोकन अमृत जलधार। ताकर सीचे नृपति उदार॥
वीणा कर कन्या ने तबै। अनुक्रम कर जीते नृप सबै।
पूर्ण विद्या जो नहिं धरे। सो तो अवज्ञा फल अनुसरे॥

जो कन्या की वांछा सार। सो सब जानैं नृप न लगार।
मूर्छा ग्राम और लय को भेद। नृप जानें न करें बहु खेद॥
तब जीवंधर नाम कुमार। आयो कौतुक सहित उदार।
तिष्ठत मद तज सकल नरेश। ज्यों मयंक कर लखत दिनेश॥

॥ दोहा ॥

वीणा षोड़स तार की, जीवंधर मतिमान।
कन्या की वीणा लई, ताहि बजाई सुजान॥

॥ चौपाई ॥

मन वांछित सु बजाई बीन। कन्या जीत लई परवीन।
विद्यासार पुरुष जो धरे। इस भव पर भवमें सुख करे॥
काहू पै जीती नहिं गई। कुमर जीत छिनमें सो लई।
जाके पुण्य प्रगट अब थाय। ता घर लक्ष्मी आवे धाय॥
कन्या होय प्रसन्न तर हाल। जीवक के गल मेली माल।
अपने मन को प्रेम अपार। प्रगट दिखावत भई उदार॥

* कवित्त *

मोतिन की लर पाय कुमर कर कन्या सेती।
जीवक के गल मांहि अधिक शोभा सो देती॥
सुरगलोक तें माल किधों आई सुखकारी।
पूर्व तप फल प्रगट दिखावत सबकूं भारी॥
गंधोत्कट वर सेठ और जीवक के भाई।
इन आदिक परिवार सबन कूं हर्ष बढ़ाई॥

वनिता रूपी रतन निकट आवे सुख करता।
कौन जगत के मांहि पुरुष जो हर्ष न धरता॥

॥ चौपाई ॥

अंतर द्वेषी काष्ठाँगार। भयो उदास वदन तिहिवार।
दुर्जन को सुभाव है यह। पर को उदय देख दुख लहे॥
देश देश के आये राय। मद धारैं उरमें अधिकाय।
तिन सबकूं लख काष्ठांगार। क्रोधवंत कीने अब वार॥

॥ कवित्त ॥

भारवाह के प्रेरे तब कैयक धरणी धर।
जीवक सूं इम कहत भये उर मांहि क्रोध कर॥
जीवन की मति अकृत कार्ज कूं सहज उपावै।
खोटी शिक्षा मिलत कहा नहीं क्रोध बढ़ावे॥
जीवक तूं है वणिक पुत्र व्यांपार मझारा।
है प्रवीन तू क्यों न करे अपनो व्यांपारा॥
वणिज कर्म कू योग्य विदित है तूं जग माँहि।
बड़े रतन के छतें रतनतिय मिलै जु नाँही॥

(सदृश) ॥ पद्धरी छन्द ॥

जो अपनो हित चाहो कुमार। दे कन्या भूपन कूं अबार।
उत्तम जु वस्तु जगमें विख्यात। सो भूपन की निहचै कहात॥
अब और भाँति ताकूं महान। अति होय कष्ट संशय न जान।
यहाँ ते कन्या को तूं अबार। किम लेय वाणिज विचार॥

इम सुन जीवक पुनि वच उचार। सुनियतु है क्षत्री जग मझार।
शुभ नीति पंथ के चलन हार। रक्षा अवनी की करत सार॥
यह न्याय स्वयं पर में सदीव। धनवंत तथा निर्धन अतीव।
कुलवंत तथा अकुलीन जान। कन्या जो वरे सो वर प्रमान॥
निश्चय कन्या ने इम कराय। जीते मोहि वीना कूं बजाय।
सोई कन्या को वर विशेष। क्षत्रिन को कारज नहीं लेश॥
तुम न्यावंत नृप हो मनोज्ञ। तुम को ये वच कहने न योग्य।
अन्यायवान राजन मंझार। थिर राज रहे कैसे उदार॥

॥ अडिल्ल ॥

जीवक के वच सुनत क्रोध उर धार के।
भारवाह के प्रेरे नृप हुंकार के॥
बोले सुनरे वैश्य क्रोध नृप कुल धरे।
बुद्धि हीन तूं समझ न्याय कैसे करे॥
भारवाह आदिक भूपति बैठे सबै।
तिनि आगे तू वचन कहत ऐसे अबै॥
सो हम निहचै करा हिये सु विचार कें।
वाँछित है निज मरन कुधी मद धार कें॥
रे वाणिक मति हीन रतन कन्या अबै।
लाय सितावी देय छोड़ के मद सबै॥
अथवा कर संग्राम देय निज प्राण कूं।
जो तोहि रुचै सिताब करो तज मान को॥

भूपन के सुन वचन इसे जीवक तबै।
करि प्रचंड उर क्रोध फेर बोल्यो जबै॥
बहुत वचन भाषण कर कारज है कहा।
देखो समर मझार मोहि भुजबल महा॥
कन्या की अभिलाष करें भूपति जिके।
भुजनि मध्य मेरी अब ही आवो तिके॥
कन्या जमको धाम तहाँ तुमको अबै।
देहुँ शीघ्र पहुँचाय सुनो भूपति सबै॥
जीवक के इम वचन सुने सब राजई।
उठे कोप कर तबै सकल तन साजई॥
लिये जु तीक्षण बाण युद्ध के करन कूं।
करत भये प्रस्थान शत्रु के हनन कूं॥
कोइयक क्षत्रिय नीति हिये सुविचार के।
होय रहे मध्यस्थ सेन निज धार के॥
नीति वंत क्षत्रिय जे है जग में सही।
न्याय पंथ जे चले योग तिनकूं यही॥
जीवक ले निज भ्रात सँग अपने सबै।
उठो युद्ध को कोपधार उरमें जबै॥
नीती वान जे सूर कुंत कर में लिये।
चले कुमर के सँग धीर धरके हिये॥
चढे युद्ध के करन हार भूपति जिके॥

बिना बैर संग्राम करन लागे तिके।
अति प्रचंड को दंड विषै शर लाय के।
छांड़त भये नरेश कोप सरसाय के॥

॥ भुजंगी छन्द ॥

छिदं कुंत सेती जु कइ एक सूरा। परे भूमि माँही कई वैन कूरा।
छुटें बान तीखे लगें जाय छाती। परे भूमि माहीं भई देहराती॥
चवैं वैन कूरा किते वीर ठाड़े। बड़ी धीर सेती करें वाद गाढ़े।
किते वीर बांके किये नैन राते। अरी शीश के केश खेंचे जु माते
किते वीर ठाड़े गदा तैं विदारे। परे भूमि माँही भये खंड न्यारे।
यथा वज्र सेती गिरी तुंग चूरैं। खिरे खंड खंडे परे जाय दूरे॥
हिये सों हियो वीर कई भिड़ावें। किते शीस सों शीस जाके लड़ावें
गले सों गलो हाथ सेती जु धारें। तबै भीचकें वीर पीड़ा विथारे॥
किते वीर कूरा लिये खडग हाथे। गये वेग सेती दई जाय माथे।
परं शीस भूपै किधौं कंजराते। हते तुंगदंती महा मत्त माते॥
चलें शैल तीखे लगें जाय छाती। गिरे शूर भूपै दिये देहराती।
किते शूर प्यासे परे भू मझारा। चवै दीन बानी सहे कष्ट भारा॥

❀ अडिल्ल ❀

या प्रकार रण भूमि विषै वैरी सबै।
जीवक ने छिन माँहि भगाय दिये जबै॥
जैसे गरुड़ निहार महा भय लाय के।
भजें सर्प समूह अधिक दुख पाय के॥

कैयक रण लख गेह गये जु पलाय के ।
कैयक जग तज अथिर लिये व्रत जाय के ॥
कैयक आकुल होय त्रास सहते भये ।
मरे किते इक सूर किते रण तज गये ॥
धनुष धरन में चक्रवर्ति सम मोहनो ।
छोड़त बाण समूह लखत मन मोहनो ॥
जीत लिये सब भूप भुजन के जोर तें ।
जैसे दंती नसैं सिंह की घोर तें ॥
जीवक ने संग्राम कियो भारी जबै ।
कांति रहित भूपाल भजे तब ही सबै ॥
सचिव बचन तें भारवाह तब आय के ।
पड़ौ बीच उर कपट नेह सरसाय के ॥

* दोहा *

भारवाह तब इम कहो, सुनिये सकल नरेश ।
सुत यह मेरे सेठ को, युद्ध करो मत लेश ॥

॥ चौपाई ॥

भजे जात हैं भूपति जेह । रणकूं तजि आये पुनि तेह ।
बैरिन कूं रिपु बली कुमार । तासूं करी प्रीति तिहिवार ॥
कैयक नृप बोले इम बैन । सब विद्या में जीवक एन ।
जीते जाने बैरी महा । क्षत्रिय कुल कर कारज कहा ॥

अडिल्ल

जाको शूरपनो जग में विख्यात है।
संतन करके सोई बड़ो कहात है॥
धरे सिंह लघु देह धूल द्युति को सबै।
कहा विदारें नहीं सुनो बुधजन अबै॥

* रोटक छंद *

महासुभट वर धीर वीर जानो अति शूरौ।
बलियन में बलवन्त सुजस ताको जस पुरौ॥
रूपवंत जे पुरुष तिन्हों ते रूप अपारा।
धरे अकेलो यही सकल गुण जगत मँझारा॥
सज्जन जन इम कहत भये कन्या ने नीको।
ढूंढ लियो उत्कृष्ट महा वर वांछित जीको॥
गुणियन कूं गुणवान पुरुष सों हित हितकारी।
ज्यों मणि को सयोग कनक में है छवि वारी॥
कन्या सार असार वस्तु की परखन हारी।
बुधजन वनिता रतन बहुत सो है यह नारी॥
इस भव परभव विषै महाव्रत तप इन कीनो।
ता करि वनिता रतन पाय जगमें जस लीनो॥

* दोहा *

इस प्रकार कुंवरा तनी, करी प्रशंसा सार।
नृपगन निज घर चलन कूं, उद्यम कियो विचार॥

गंधोत्कट श्रीदत्त तब, तिनकूं बहु सन्मान।
करके विदा किये सबै, गये भूप निज थान॥

॥ चौपाई ॥

गंधोत्कट श्रीदत्त उदार। भली लग्न शुभ योग विचार।
कीनो व्याह उछाह महान। बाजे बाजे तबल निशान॥
दिन दिन करत भये ज्योनार। तृप्त किये सब जन निरधार।
वसन अभूषन दिये अमान। कियो सुजन जन को सन्मान॥
शुभ लक्षण भूषित खग सुता। श्रीदत्त सेठ दीनी गुण युता।
शुभ दिन लगन मुहूर्त विचार। अग्नि साख व्याही सुकुमार॥

॥ मरहटा छन्द ॥

वरकूं सुमन करि भूषित तब दंपति शोभा अति विस्तारे।
पुनि नाशे दोष अखिल तन सेती महा कांति तन धारे॥
अति परम हर्ष उर मांहि धरत है रति मनोज सम राजे।
तिनि कियो पुण्य पूरव अति भारी तातै सब गुण छाजे॥

* सवैया-२३ *

तिनको वर रूप सुदेख तबै नरनारि विचार करें मन में।
इनके सु कपोल लसें जिमि दर्पण सूरज कांति लसे तन में॥
रति काम सुदेव किधौं शशि रोहिणि इन्द्र शचीवत है जन में।
पयधार से लखि किन्नरजी युव किन्नर कौतुक करें वन में॥

॥ सवैया ॥

पूर्व कियो है पुण्य जीवक ने सार अति,
ता करि खगेश की जु पाई कन्या सार जू ।
भूपन सूं जीत पाई भयो है प्रताप भारी,
जग के मँझार भई कीरति अपार जू ॥
शोभित सुगेह माँहि भ्रात पाँचमों समेत,
इन्द्र कैसी नाई रमै त्रिया सों उदार जू ।
धारत है बड़ी ऋद्धि भोगत है सुख सार,
तातें सब जानो सुधी धर्म के विचार जू ॥

॥ पंचम परिच्छेद समाप्तः ॥

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

॥ त्रिभंगी छंद ॥

श्री सुमति जिनेशं सुमति विशेषं धरो अशेषं ज्ञान मई ।
तुम धर्म प्रकाशो भवतम नाशो शिव मग भाषो कर्म जई ॥
तुम हो जग त्राता भवके भ्राता कर्म असाता वेग हरो ।
नथमल तुम आरैं कर जुग जोरैं करत निहोरैं दया करो ॥

॥ चौपाई ॥

पुनि जीवंधर नाम कुमार । खग कन्या युत भोग अपार ।
भोगत भयो प्रमोद बढ़ाय । सुखसों काल व्यतीत कराय ॥

ऋतु नायक बसंत पुनि आय। धरत भये जन मद अधिकाय।
पुरुष सरागी जे जन सबै। ते विशेष मद धारैं तबै॥
सहित मंजरी फल अधिकार। धरत भये तरुवर महकार।
तिन्हें खाय कोकिल करि चाव। बनमें करत भई आराव॥

॥ गीतिका ॥

आयो सु नृप को रूप धरकें ऋतु बसंत सुहावनो।
फूले मनोहर विविध पादप मुकुट सो ललचावनो॥
फूले सरोज विशाल द्रग सो फल मनोहर मुख धरैं।
पुनि कमल स्वेत सो दशन पंकति अधर बिंबा मन हरैं॥
ताल तरु सोइ हाथ गजें केलि जंघा मोहये।
शोभायमान सुकंद पग हैं लखत जनमन मोहये॥
बहु औषधी परफुल्ल सोई बसन तन में मोहने।
पल्लव विविध भूषण विराजित चित्त पर जन मोहने॥

॥ दोहा ॥

ऐसी शोभामान के नृप बसंत मनुहार।
आयो बन को रूपधर सब जन मोहनहार॥

॥ चौपाई ॥

ऐसी ऋतु बंसंत के माँहि। शोभित भयो विपिन अधिकांहि।
कहीं इक कमल समूह अपार। कहीं इक कदली बन सुखकार॥

॥ बेमरी छंद ॥

कहीं गुलाब मनोहर सोहैं, कहीं चमेली फूल रही।
कहीं केतकी जुही केवरा, कहीं सु दाखें झूम रही॥
कहीं कुंद मोगरा विराजे, कहीं सेवती बहु विधि साजे।
कहीं नारंगी पंकति सोहे, कहीं चंपो सुवास मन मोहे॥
कहीं दाड़िम फल सोहैं सारे, मीता फल सोहैं बहु प्यारे।
कहीं निम्बू सोहैं पुनि भारे, नारंगी लाल सरस अति भारे॥
कहीं मचकुंद मोतिया राजे, कहीं गुल शब्बू शोभ धरैं।
पुनि नरगस चंपा दाउदी, कहीं सेवती फूल झरैं॥
कहीं कदंब कचनार विराजैं, कहीं सदा फल झूम रहे।
कहीं निम्बू कहीं सेव फालसे, कहीं केले बहु झूम रहे॥
मौलश्री अंबा बहु जामन, आडू अरु अंजीर भले।
तूत और खिरनी आदिक फल, बेर आवले अधिक फले॥

* चौपाई *

ऐसी नील सुवन मनहार। देख सुवन पालक निरधार।
भारवाह नृप पै सो जाय। फल फूलादिक भेट धराय॥
हे नरेश तुम क्रीड़ा योग। अब वन शोभित भयो मनोग।
भोगन लायक भया विशेष। फूल फलादिक भरा अशेष॥
वनिता सम शोभित वनवेल। तरु कुल की राजत जुत केल।
फूलन सहित रही विकसाय। सुफल पयोधर धारत राय॥
करैं शब्द तहँ हँस अपार। किधौं वचन वन कहत उदार
कोकिल शुक बोलत वाचाल। मनों बुलावत जन दर हाल॥

॥ अडिल्ल ॥

विमल नीर करके जु भरी वापी खरी ।
पद्मराग मन भई तहाँ शोभा धरी ॥
संध्या समै उद्योत देख चकवी सही ।
दिवस जान चकवा को सँग छांड़े नहीं ॥

॥ चौपाई ॥

हरित बरन शोभित तरु सार । सघन छांह फैली अधिकार ।
बिना काल घन गर्जै उठान । केकी नृत्य करें सुख मान ॥

कवित्त

सपरस करती पौन आय मलयागिर सेती ।
शीतल अधिक सुगंध बहै बन में सुख देती ॥
कामीजन के चित्त कमल परकाश करै है ।
ताकर सुख दातार बिपिन अति शोभ धरै है ॥

॥ पद्धड़ी छंद ॥

वनपालक के सुन वचन भूप । दीनो इनाम ताको अनूप ।
बन केल काज निज पुर मंझार । भेरी बजवाई हर्ष धार ॥
चढ़के गयंद ऊपर नरेश । त्रिय पुरजन संग सेवक अशेष ।
केई हय रथ ऊपर सवार । केई शिविका बैठे उदार ॥
निज त्रिय सुत जीवक बुद्धिमान । पुनि मित्र संग लीने सुजान ।
कौतक अर्थी चालो कुमार । बन शोभा देखन हर्ष धार ॥

उत्तम नर जीवक आदि जान। मित्रन जुत विपिन गयो पुमान।
वनितान सहित क्रीड़ा करंत। मनमें प्रमोद सबही धरंत ॥

॥ दंडक छंद ॥

किते मस्वान सँग में, सुगंध लाय अंग में,
गुमान की तरंग में, सुसार गीत गावते।
किते सुवाम साथ ले, सुवीन आप हाथ ले,
मृदंग सार साथले, सुताल तैं बजावते॥
कितेक नृत्य चावसों, करें सुहाव भाव सों,
धरें सुगाढ दाव सों, सु हाथ को फिरावते।
सुरंग रँग लाय के, अबीर कूं लगाय के,
प्रमोद को बढ़ाय के. गुलाल कूं उड़ावते॥

* किरीट छन्द *

केशर रँग रँगे वर चीर धरें तन में सबही सुख मान।
चंदन सार लगाय हिये पुन फूल लिये करमें अमलान॥
धारत कंठ मनोहर हार निहारत हैं बनको हित ठान।
फूलन की वर गेंद बनाय सुमारत आपस में कर तान॥

॥ तोमर छन्द ॥

वर फूल गोद भराय। निज नार पै मुसकाय।
उर नेह कूं सरसाय। निज हाथ सूं बरसाय।

॥ किरीट छंद ॥

भामिनि जोबन माँहिं फिरे बहु गावत गीत सु प्रीत बढ़ावत ।
बाजत हैं तिनके पग नूपुर कानन कूं अति ही ललचावत ॥
चूंटत फूल सुगंध मनोहर ता करिके अति शोर मचावत ।
देखत हैं द्रग सों जिनकी रुख काम विथा तिनकूं उपजावत ।

॥ सुदरी छंद ॥

कोइ इक डालन को पकरे भरता संग ही रत है खिलसें ।
कोइ इक फूलन कों सु मनोहर सार किरीट करे कलसें ॥
खेचर की सु सुता वर जीवक केलि बसंत करे जल सें ।
काम उछाह धरें चिरकाल सु प्रेम बढ़ाय हिये हुलसें ॥

* सवैया *

रति को श्रम वेग निवारन कूं वर जीवक मोद धरें मनमें ।
संगले निज वाम सबै पुनि मित्र चलो जल थान खुशीवन में
अमलान नदी लखके जुत मित्रन की उतखेद हरो छिनमें ।
वर औसर देख सुधी जल से कहिं केलिकरें सु त्रिया जनमें ॥

॥ चौपाई ॥

जल क्रीड़ा कर जीवक तबै । निकसि नदी तें आगे तबै ।
यज्ञ करन वारे द्विज कुधी । तिनकूं लखत भयो जु सुधी ॥
ता औसर द्विज दुष्ट असार । मारत भये स्वान तिहिवार ।
जो नर अदया चित्तमें धरे । कहा जु वध पर को नहिं करे ॥
ब्राह्मण करत स्वान को घात । तिनकूं देख कुमर विख्यात ।

नेत्र लाल कर भौंह चढ़ाय । मने किये तिनकूं समझाय ॥
अपराध बिन स्वान कूं अबै । तुम क्यों मारो हो द्विज सबै ।
ऐसे पूछत भयो कुमार । कहन भये द्विज वचन उचार ॥

* कवित्त *

जास यज्ञ परभाव द्विव्य स्वर्ग पावे सुखकारी ।
देव अंगना सहित लहे संशय न लगारी ॥
ताहि कियो अपवित्र श्वान सपरस इह वारा ।
तातैं मारत याहि अबै दे कष्ट अपारा ॥

❋ अडिल ❋

बिन कारन जग मांहि अधर्मी जन सबै ।
मारत हैं बहु जीव प्रगट मानो अबै ॥
हम तो कारन पाय हतो याकूं सही ।
यातैं हमकूं दोष कछू लागे नहीं ॥
विधि ने यज्ञ निमित्त पशूगण ये सबैं ।
रचे आप मति ठान सुनो जीवक अबै ॥
सब जन के सुख हेत यज्ञ ही जानिये ।
तातैं यज्ञ विषै वध अवध प्रमानिये ॥
गौ मेध के मांहि गाय हनिये सही ।
राज सु यज्ञ मझार भूप हतनो सही ॥
अश्वमेध के मांहि अश्व को मारिये ।
पुंडरीक है यज्ञ जहाँ गज डारिये ॥

औ विविध प्रकार पशुन के गन कहे।
नर तिर्यंच विहंग यज्ञ में जे दहे॥
ते मर के निरधार उच्चगति को लहैं।
संशय नाहि लगार वेद में यों कहैं॥

॥ चौपाई ॥

मुनि वसिष्ठ पाराशुर व्यास। इनके वचन वेद युत भास।
इनकूं अपमान जो कहे। ब्रह्म घात पातक सो लहे॥
अंग सहित जो वेद पुरान। वेद ग्रन्थ ऋषि धर्म महान।
इनकी आज्ञा ही सिधि कही। कारन पाय उलंघे नहीं॥
जीवंधर बोलो दर हाल। सुनो विप्र मो बचन रसाल।
वेद अर्थ तुम भाषो येह। सो सब पाप अर्थ दुख गेह॥
ता करि दुर्गति जाय सुजीव। विविधि भाँति दुख सहे अतीव।
जैनी मुनि बिन यह सु विचार। और करन समरथ न लगार॥

॥ दोहा ॥

देव शास्त्र गुरु मूढ पुनि, इन जुत जीव अतीव।
पाइय तु हैं या जग विषै, वर्जित ज्ञान सदीव॥
कर विचार चिरकाल जो, जीवंधर तिहिवार।
प्रान कंठगत श्वान कूं, देखो भूमि मँझार॥

॥ चौपाई ॥

देख श्वान की व्यथा कुमार। उरमें कियो विषाद अपार।
दयावंत नर सो धीमान। निज दुख समपरको दुख जान॥

जाके जीवन को सु उपाय । जीवक करत भयो धर भाय ।
दया धरें जे चित्त मँझार । ऊँच नीच देखे न लगार ॥
जल आदिक सींचो अधिकाय । तो भी लगो न कछू उपाय ।
पूरन होय आयु तिहिवार । कियो इलाज न लगे लगार ॥
प्रान कंठ गति देखो श्वान । ताकी सुगति हेतु मतिमान ।
तबही उर में दया उपाय । धर्म मंत्र नवकार सुनाय ॥

॥ कवित्त ॥

सुनत मंत्र नवकार श्वान निश्चल मन लीनो ।
शुद्ध भाव उर लाय तास सुमग्न मन भीनो ॥
सुख सूं शिव मग गमन करत वांछा जे धारें ।
वरमारी वर मंत्र लहैं निश्चय निज लारें ॥
ताही समय मझार श्वान शुभ भाव धरंतो ।
तजत भयो निज प्रान मंत्र नवकार जपंतो ॥
भली सुगति के जानहार प्रानी जग माँही ।
मंत्र मुक्ति पद देन हार सुमरें कहा नाहीं ॥

॥ चौपाई ॥

शुभ भावन सों छोड़े प्रान । यक्षन को वर इन्द्र महान ।
उपजो अंत मुहूर्त मँझार । पूरण षट पर्यापति सार ॥

॥ पद्धरी छन्द ॥

उत्पाद सेज में उपजि देव । पूर्ण पर्यापति कर सु एव ।
उठके पुनि चिंतन इमि करंत । निज मनमें अति विस्मय धरंत॥

को मैं कितत्तैं आयो अबार। इह कौन थान सुंदर अपार।
किसि हेत सकल ये मांहि देव। निज शीस नाय झुक करतसेव॥
इह विधि मनमें चिंतन करंत। तब अवधि ज्ञान उपजो तुरंत।
निज पूर्व भव को भेद सार। जानो स्वभाव तैं चित्त मंझार॥
देखो वर मंत्र तनो प्रभाव। मैं भयो श्वान तैं जक्षराव।
जैसे रस कूप संयोग पाय। अति लोह निंद्वर कनक थाय॥
या मंत्र तनी महिमा महान। और मंत्र नहीं याके समान।
कंचन गिरी की जो शक्ति सार। किम और अचल धारे विचार॥
याके प्रभाव विष दूर होय। पन्नग को विष व्यापे न कोय।
पुनि क्षुद्र देव उपसर्ग ठोर। करने समर्थ नहिं नैक जोर॥
या मंत्र शक्ति कर सिंह क्रूर। भयकार भील अति शत्रु शूर।
भूपाल कष्ट गति दुष्ट देव। आधीन होय पुनि करे सेव॥

॥ चौपाई ॥

महा मंत्र तैं उदधि अपार। गोखुर सम है है निरधार।
मंत्र प्रभाव भूप श्रीपाल। दुस्तर सागर तिरो विशाल॥
परो वैश्य रस कूप मँझार। गिरि ऊपर बकरा निरधार।
चारुदत्त नवकार महान। दियो भये जुग देव प्रधान॥

* दोहा *

कपि कूं शिखर सम्मेद पर, दियो मंत्र मुनिराय।
अमर होय शिवपुर गयो, धर चौथी पर्याय॥
मंत्र पद्मरुचि सेठ तैं, सुनो वृष भये जीव।

नर सुर के सुख भोग के, भयो भूप सुग्रीव ॥
विंध्य श्री अहिने डसी, मंत्र तबै नवकार ।
दीनो जाय सुलोचना, भई सुरी मनुहार ॥
नाग नागिनी जरत लख, तिनकूं पार्श्व जिनंद ।
दियो मंत्र नत छिन भये, पद्मावति धर नेन्द्र ॥
कीचड़ में हथनी फसी, खग दीनो नवकार ।
अनुक्रम तैं सीता भई, सतियन में सरदार ॥
लखां चोर सूली चढ़ा, अरहदास गुनमाल ।
दियो मंत्र जल मांग तैं, भयो देव दर हाल ॥
चंपापुर में ग्वाल ने, जपो मंत्र अमलान ।
सेठ सुदर्शन सोभयो, तद्भ भव लहि शिव थान ॥
सात व्यसन में रत अधिक, अंजन चोर असार ।
श्रद्धा कर नव मंत्र की, विद्या साधी सार ॥

॥ चौपाई ॥

दुष्ट दलिद्री दुखी अतीव । पाप करम में मगन सदीव ।
ऐसे जीवन कूं निरधार । भव तैं मंत्र उतारे पार ॥
बंधु समान पुरुष वह सार । जिन मोकूं दीनो नवकार ।
ताकी वातसल्य कछु जाय । करूं विनय करके अधिकाय ॥
हर्ष धार के यक्ष सुरेश । बैठा आय विमान विशेष ।
सत्य शील युत कुमर सुमान । तास निकट चालो वन थान ॥
आय गगन तैं यक्ष सुरेश । धरे कांति तन किधौं दिनेश ।

जीवक की प्रदक्षिणा तीन । नमस्कार कर दई प्रवीन ॥
आगे बैठो ताहि निहार । जीवक तब बोल्यो वच सार ।
कौन हेत अब देव अधीश । मोकूं तुम नायो निज शीश ॥

* दोहा *

यक्ष ईश उर हरष धर, पूर्व भव विरतंत ।
कहत भयो इम कुंवर सूं, अधिक विनय धरि संत ॥

कवित्त

सार मेय पर्याय विषै मोकूं तुम स्वामी ।
दियो मंत्र नवकार यही उत्तम जग नामी ॥
तो प्रसाद कर भयो जाय यक्षन को नायक ।
अचरज यामें कौन मँत्र यह शिव सुख दायक ॥

॥ चौपाई ॥

प्रत्युपकार करन के हेत । यतन करे नहिं कौन सुचेत ।
जल सेती सीची भूसार । कहा धान नहिं देत उदार ॥
जीवक कूं जब यक्ष सुरेश । सिंहासन बैठाय विशेष ।
भूषण वसन कुसुम अमलान । तिन करि पूज्यो कुंवर महान ॥
मँत्र महातम कथन विशाल । जीवक को भाषो दर हाल ।
फूलन की वर्षा वर्षाय । प्रगट पुन्य को उदय दिखाय ॥
हाथ जोर कर यक्ष सुरेश । जीवक सों भाषो वच शेष ।
मैं तेरो सेवक निरधार । बिना हेतु तुम बुध उदार ॥

त्रिषम और समकाज मँझार । सब थल सबही काज कुमार ।
मांकूं याद कीजिये संत । अपनो सेवक जान अत्यंत ॥
सारमेय चर देव सुजान । जीवक सूं इम विनती ठान ।
नमस्कार कीनो शिर नाय । फेर यज्ञ थानक में आय ॥
यक्षदेव कर यज्ञ विनाश । मारे द्विज कर कोप प्रकाश ।
पूरव भव को बैर विचार । दीनो दुख नाना परकार ॥
द्विज बंधन दुख देख कुमार । जाय छुड़ायो दया विचार ।
दर्शन व्रत ताकूं दे तबै । जिन मत में दृढ़ कीने जबै ॥
जीवंधर की भक्ति मंझार । सब ही द्विज कीने तिहिवार ।
पुनि चंद्रोदय गिरि सुर राय । गयो जनम थानक सुख पाय ॥
देव गयो पीछे तिहिवार । जीवक आदिक सकल कुमार ।
परम मंत्र की महिमा तबै । कहत भये हर्षित चित सबै ॥

॥ दोहा ॥

अहा मंत्र महिमा लखो, निंद्य श्वान तज मान ।
छिन माँही सुर सुख लहो, सुनत मंत्र निज कांन ॥

॥ चौपाई ॥

मंत्र शक्ति को कहते तबै । गये कुमर अपने घर सबै ।
गुनवंते नर जगत मझार । गुन ही को उर करत विचार ॥
कलप बेल सम तियन समेत । जीवंधर अति हर्ष उपेत ।
भोगत भये निरंतर भोग । विविध प्रकार नवीन मनोग ॥
अब आगे इस नगर मझार । सेठ कुवेर मित्र इकसार ।

धर्मवंत धनवान अतीव । धर्म विषै रत रहे सदीव ॥
ताके विनयवंत गुण धाम । त्रिया विनय माला अभिराम ।
वारिज दल सम नेत्र अनूप । रति समान सोहे वर रूप ॥
गुणमाला तिनके वर सुता । सुगुणमाल मानो सुर लता ।
रूप देख रति रँभा लजे । उत्तम भूषण तन में सजे ॥
ताही पुर माँही धनवंत । और सेठ इक बसे महंत ।
ऋषभदास नामा गुणवान । वंदीजन जस करें बखान ॥
शीलवती नामा त्रिय सार । गुण गन कर जीती वर नार ।
पति सूं करत सनेह अत्यंत । शशि के ज्यों रोहिणी लसंत ॥
देव मँजरी तिनके सुता । कल्प मँजरी समगुण युता ।
धरत कला गुण रूप अपार । शोभित है रति की उनहार ॥

* दोहा *

एक दिवस सुर मँजरी, जोवन कर शोभाय ।
सखियन सँग बन देखने, गई हर्ष उर लाय ॥
ऋतु बसँत आई महाँ, बन शोभित मनुहार ।
फूल फलादिक तैं भरी, करें भँवर गुंजार ॥

॥ चौपाई ॥

ताही बन माँही तिहि घरी । गुनमाला आई गुण भरी ।
बैठ पालकी माँहि उदार । निपुण सखी लेके निज लार ॥
दोऊ मिल कर प्रीति अपार । करत भई जल केलि उदार ।
काम अंग कर पूरन गात । रतिसम शोभित गुण अवदात ॥

॥ सोरठा ॥

चँदन द्रव्य सुलाय, आपस में दोउ तबै।
क्रीडत बहु सुख पाय, महा मीत सरसाय कै॥
चूरन उत्तम ल्याय, अति सुगंध दोउ तहाँ।
आपुस माँहि उड़ाय, ता पर वाद भयो तबै॥

॥ चौपाई ॥

गुणमाला पुनि सुर सुंदरी। कीनी तिन विवाद तिह घरी।
जलक्रीड़ा आदिक सुखकार। तजत भई दोई तिहिवार॥
भई वाद के वश धर टेक। इह विधि करी प्रतिज्ञा एक।
जाको चूरन उत्तम होय। निश्चय जीते अब सोय॥
सबने करी परीक्षा अबै। निर्णय भयो न जाको तबै।
तिनि दोउ मिलि ऐसे कही। सत्पुरुषन पर भेजो सही॥

॥ अडिल ॥

वाद हान के हेत दोउ कन्या जबै।
भेजी चेरी उभय देय चूरन तबै॥
उत्तम वस्तु समस्त बिना जाने सही।
बिना साखी निरधार कदाचित् है नहीं॥
निज २ चेरी सों जु कही ऐसे जबै।
सत्पुरुषन पै जाय करो निर्णय अबै॥
जग में सज्जन पुरुष कहैं साची सदा।
मुख तें झूठो वचन कहैं नाहीं कदा॥

॥ दोहा ॥

युग कन्या के वचन सुन, युगल दासि तिहिवार ।
सत्पुरुषन के ढिग गई, हर्षित चित्त उदार ॥

॥ सोरठा ॥

निज निज चूरन सार, तिनके आगे धर दियो ।
परखन हेत उदार, तिनसों इम कहती भई ॥

॥ दोहा ॥

गुणमाला सुर मँजरी, युग कन्या गुणवान ।
अति सुगंध चूरन दिये, परखन हेत सुजान ॥
अहो सभा के नर सबै, किसको चूरण सार ।
निर्णय कर हम सों कहो, वाद मिटै दुखकार ॥

॥ कवित्त ॥

कसतूरी कर्पूर मिश्र चूरन सुख कारी ।
अति सुगंधता फैल रही दश दिशा मँझारी ॥
ऐसो चूरन देख सभा के नर जे सारे ।
सखियन के सुन बैन चित्त में अचरज धारे ॥
अति सुगन्ध उत्कृष्ट चूर्ण दोऊ तिन जाने ।
अंतरँग को भेद नेक हूँ नाहिं लखाने ॥
करी परीक्षा नांहि किसी नर ने तिहिवारी ।
गूढ़ वस्तु को भेद जानना जग में भारी ॥

॥ सोरठा ॥

कोइयक नर तिहिवार, सखियन सों ऐसे कही।
चूरन को निरधार, जो करवो चाहो अबैं॥
तो जीवक के पास, जावो अब तुम वेग सों।
वह निज बुद्धि प्रकाश, चूरन को निर्णय करे॥
ता वच सुनि हितकार, सखी उभय हर्षित भई।
जान ठिकानो सार, को न हर्ष उर में धरे॥

* चौपाई *

जीवंधर के निकट तुरंत। जाय अग्र बैठी हर्षंत।
मति मृगी सम नेत्र विशाल। उभय सखी शोभित गुणमाल॥
जीवक सों दोऊ गुणराश। शशि सम दशन अंशु प्रकाश।
कोमल वचन महा सुखकार। कहत भई हर्षित तिहिवार॥
हे स्वामी इह विपिन उदार। ऋतु बसन्त सबजन मनहार।
मंद सुगंध तहाँ बहत समीर। थल २ विमल भरे बहु नीर॥
क्रीड़ा सहित तहाँ गुणधाम। गुण कन्या आई अभिराम।
सुर मँजरी रूप की खान। आपस में दोऊ गुणमाल॥
फिर सुगन्ध चूरन की केल। करत भई दोऊ गुणवेल।
निज २ चूर्ण के गुण हेत। तिनमें वाद भयो शुभ चेत॥
करी प्रतिज्ञा तिन गुणराश। जाको चूरण होय सुवास।
सो जीते सबमें निरधार। अहो वाद के जाननहार॥
अहो कुमर तुम हो बुधिवंत। शु चूरन को परखो संत।

तुम बिन इनको निर्णय कोय। करवे कूं समरथ नहिं होय॥
तव जीवक चूरन युग सार। परखन को लीनो तिहिवार।
जो नर अति विशेष गुण धरे। कहा परीक्षा सो नहिं करे॥

॥ दोहा ॥

वरन और शुभगंध को, निर्णय करि सुकुमार।
सखियन सूं कहतो भयो, ऐसी विधि तिहिवार॥

॥ चौपाई ॥

गुणमाला को चूरनसार। निहचै गुण धारत अधिकार।
अंतरँग गुण धरत विशेष। ऋतु बसन्त को साधिक वेश॥

॥ दोहा ॥

देव मँजरी की सखी, सुनकर अधिक रिसाय।
किये अरुण दृग मद धरे, बोली अति दुख पाय॥

❀ अडिल्ल ❀

चूरण को गुण दोष विचारन कूं महा।
चतुर तुम्हीं जु कहावत हो जगमें कहा॥
और सकल बुधिवान देख चूर्ण यही।
उत्तम अधिक सुवास कहैं सँशय नहीं॥
जीवंधर सुन बैन फेर तिनसूं कही।
चेटी तुम क्यों कोप वृथा करहो सही॥
इन युग चूरन को गुण दोष प्रगट सबै।
तोहि दिखाऊँ सकल जनन आगे अबै॥

॥ दोहा ॥

जैसी वस्तु निहारिये, तैसी कहिये ताहि।
प्रगट काठ कूं देख कें, अगर कहो नहिं जाय ॥
ऐसी विधि सों कहि जबै, लै चूरन युग सार।
दोऊ कर में कुवर ने, फेंके गगन मँझार ॥
गुनमाला के चूर्ण कूं, उछलत भ्रमर अपार।
वेढ़त भये सुगंध कूं, करैं सर्व गुंजार ॥

अडिल्ल

देवमँजरी चूर्ण उड़ायो जु तहाँ।
भ्रमर न एक लुभायो ता ऊपर जहाँ ॥
गुणवंतन को पक्षपात गुण ही सरे।
गुणविन कोउ पक्ष जगत में ना धरे ॥
देवमँजरी को चूरण जीरण भयो।
ता करि तुच्छ सुगन्ध तास माँही ठयो ॥
होत नवीन जु वस्तु सहित गुण जगत में।
ता करि कारज सिद्ध होत है पलक में ॥
देख निपुणता कुमर तनी जहाँ जन सबै।
तास प्रशंसा करत भये हरषित जबै ॥
सो प्रवीणता कहा नास कर वाद को।
निर्णय नेक न होय परम आल्हाद को ॥

॥ सोरठा ॥

उभय सखी निरधार चूरन को कर कुमर सों ।
करि प्रणाम पुनि सार गुन वर्णन करती चलीं ॥

॥ दोहा ॥

दोउ कन्या सों तबै, जाय सखी वृतान्त ।
निज निज चूरन को कहो, त्रिधि सू उर हर्षंत ॥
गुणमाला निज जीतिले ,हर्षित भई अपार ।
जग में जय कूं पायकें, को न हर्ष उर धार ॥
करत प्रशंसा सकलजन, जीवक की तिहिवार ।
देखो चूरन को कियो, कैसो इन निरधार ॥

॥ चौपाई ॥

सुर मँजरी देख निज हार । उरमें भई उदास अपार ।
ईर्षा कर दुखित जो होय । ताकूं न्याय रुचे नहिं कोय ॥
पुनि जल केलि करन के हेत । गुणमाला उर हर्ष उपेत ।
देवमंजरी कूं तिहिवार । टेरत भई सनेह विपार ॥
सुरमंजरी कोप उर धार । जल की केलि करी न लगार ।
ऐसे करके नार सदीव । धारत है उर क्रोध अतीव ॥
गुणमाला बहु तोषित भई । सो भी अपने घर को गई ।
सुरमंजरी छोड़ बन थान । उल्टी फिरी रोष मन आन ॥
पुनि तिनि करी प्रतिज्ञा सार । कुंवर बिना नर रूप अपार ।
कामदेव के सम जो होय । तो भी निहचे लखे न कोय ॥

ऐसो हठ कर सुरमंजरी। निर्जनगेह विषै दुखभरी।
निज सखियन जुत कीनो वास। सदा रहत चित मांहि उदास॥
कभी इक सुरमंजरी उदार। बीन बांसुरी ताल सितार।
सखियन संग बजावत सोय। गावत उर में हर्षित होय॥
जीवंधर के गुण सुमरंत। गुणमाला उर मांहि अत्यंत।
ता दरशन की वांछा सदा। धरत भई बिसरे नहिं कदा॥
एक दिवस गुणमाला सार। रमत भई ता विपन मझार।
केलि करत सखियन के संग। लसत विविध आभूषण अंग॥
धरत कुसुम अत्र लसत ललाम। देखत उपजावत है काम।
रम्भा सम वर रूप अपार। गुणगण धरत विविध परकार॥
करी गंधमादन तिहिवार। पुरतें निकसो खंभ उपार।
अंजन गिरि समदेह उतंग। झरत बदन तें मद सर्वंग॥
शीघ्र चाल तैं करी महान। अंकुस की मानत नहिं आन।
पुर को भय उपजावत जाय। निज लीला सु भ्रमन कराय॥
थंभ समूह करत अति खंड। मंदर सो ढाहत बलवंड।
करत उछेद जनन को क्रूर। चल्यो जाय द्रुम छेदत भूर॥
लता समूह उखारत जाय। तन पर डारत रज अधिकाय।
सूंड फिरावत बारंबार। हस्ती और बुलावत सार॥
चिंकारत अति शब्द करंत। जगत बधिर करतो भयवंत।
दीसे करी महा विकराल। मानो जम आयो दर हाल॥
व्याकुल करत चलो गज तबै। हाहाकार करें जन सबै।

निकस नगर तें विपन मंझार। तरु उखार रोको मगसार ॥
ऋतु बसंत को उत्सव सार। तहाँ करैं थे लोक अपार।
काल रूप हाथी कूं देख। होत भये भयभीत विशेष ॥
गुणमाला के परिजन सबै। कन्या कूं तजि भागे सबै।
विपति निकट प्राणीन के होय। निश्चय सन्मुख रहे न कोय ॥
तब कन्या गजको भयधार। करे अकेली रुदन अपार।
अतिशय कर नारी जग माहिं। कायरता धारे शक नाहिं ॥
कन्या कूं रोवत लख धाय। निज उरमें अति दया उपाय।
कन्या कूं पीछे कर दई। आप करी के सन्मुख भई ॥
कन्या घातक गज भयकार। पहिलें मोहि हते निरधार।
ऐसो चित में साहस लाय। खड़ी रही कन्या डिगधाय ॥

* दोहा *

जे जगमें साहस धरें, ते निश्चय अब जान।
निज बल फोरें तब तलक, जब तक घटमें प्रान ॥
बाँधव सोई जानिये, सुख दुख में सम होय।
कष्ट विषै तज जाय, जे ते बैरी अवलोय ॥
कोलाहल सुनिके तबै, जीवंधर सुकुमार।
गज के सन्मुख सो गयो, धीरज बल अतिधार ॥

॥ अडिल्ल ॥

जीवंधर वच क्रूर कहे गज सों तबै।
सन्मुख आवत भयो उठाये कर जबै ॥

कुंभस्थल कर घात करी निर्मद कियो ।
व्याकुल भयो अतीव केलि सब तजदयो ॥
जैसें महा भुजंग अधिक दुख पाय के ।
गरुड़ घात तैं भजे हिये भय लाय के ॥
कहीं कदाचित् संत सर्व गुण कूं धरें ।
काहू पै उपकार किसी को दुख करें ॥
जो यह कारज करें नहीं निश्चय कहा ।
तो जग की थिति होय किसी विधि सों सदा ॥
हाथी को भय नसो तबै परिवार के ।
जन सब आये निकट कुंवर की लार के ॥
मानिनि के शुभ योग होय थिरता जबै ।
बँधु भाव सब धरें प्रीति करके तबै ॥
आपस में गुणमाला और कुमर जबै ।
अवलोकन करके जु काम उपज्यो तबै ॥
मानिनि के जग माँहि दुख पीछे सही ।
अतिशय कर सुख होय यही संशय नहीं ॥

* दोहा *

मूरतवंत सुमदन सम, रूप कुंवर को देख ।
कन्या उर में काम की, पीड़ा भई विशेष ॥

॥ सोरठा ॥

कन्या रति उनहार, कृश अंगी सुखदायनी ।
देख कुंवर तिहिवार, कामबाण करिके हत्यों ॥

॥ चौपाई ॥

जीवक रूप काम की पास । ता करि गुणमाला गुण राश ।
बंधत भई गाढी निरधार । प्रेरत सखी चले न लगार ॥
सखियन को प्रेरी निज धाम । पहुँची देह मात्र गुण धाम ।
चित्त बसे है कुंवर मझार । विसर गई तन सुध बुध सार ॥

॥ अडिल्ल ॥

कुंवर वियोग रोग कर गुणमाला तबै ।
पीड़ित भई अतीव सुहात न कछू जबै ॥
खान पान पुन शयन विषै रत ना करे ।
चित्त में बसत कुमार भले लोचन धरे ॥
ता कन्या के लगे पँच शर मदन के ।
सोषण मोहन तापन आदि अचैन के ॥
बिन कारण ही हँसे मदन की गहल में ।
कब ही अधिक उदास बसे निज महल में ॥
तिस वियोग में उपजी गरमी मो सही ।
चंदन कमलन कर उप शांत भई नही ॥
बिरह के उपचार विविध कीजे महाँ ।
अंतरंग को दुख मिटे कबहु कहाँ ॥

॥ चौपाई ॥

नाना जतन किये तिहिवार । दुख शोक नहिं मिटो लगार ।
बिना विवेक जल निश्चय धोय। मोह अग्नि कैसे शम होय ॥
निज सखियन सों कन्यासार । करत भई इह विधि सु विचार ।
रागअंध जे जग में जीव । हित जु अहित जानें न अतीव ॥
क्रीड़ा करवे कूं सुकुमार । शिक्षा देकर विविध प्रकार ।
कन्या कीर जीवक कं पास । भेजत भई इष्ट धर आश ॥

* दोहा *

कीर जाय तत छिन तबै, लखो कुंवर छवि वंत ।
हर्ष धरो उरमें बड़ो, प्रीति सहित मतिवंत ॥

॥ कवित्त ॥

गुनमाला सब देश विषै जग जीवन कूं अति ।
वललभ है सुखकार धरै गुण रूप विमल मति ॥
अतिशय कर अब जान आपनो जीवन तुम तें ।
मानत हैं बहु सफल सुनो स्वामी तुम हित तें ॥
तुम वियोग तें गुणमाला निज सरवस तनकी ।
सुध बुध रही सु भूल कहत नहिं अपने मनकी ॥
खान पान नहिं करै धरै आकुलता भारी ।
दरशावत है मरन अवस्था अति दुखकारी ॥
हे जीवंधर सुनो बैन मेरे हित करता ।
कन्या जिहि विधि प्राण धरे सो कर सुख करता ॥

सकल अवस्था प्रगट करन अपनी तिन मांको ।
भेजो है तुम पास कहाँ है सो मैं तो को ॥
ताको सुन संदेश कुंवर अतिशय निज मनमें ।
धारत भयो प्रमोद महा फूल्यो निज तनमें ॥
भले थान में होय जलद वर्षा सुखकारी ।
हर्ष कौन के होय नांहि इस जगत मँझारी ॥

॥ दोहा ॥

प्रत्युत्तर दे कीर कूं, भेजत भयो कुमार ।
निःकारण वाँछा धरे, ते नहिं करत विचार ॥
कुंवर संदेशो पत्र जुत, लेके कीर सुजान ।
गुणमाला के निकट तव, गयो हर्ष उर आन ॥
अतिशय कर इस जगत में, पक्षी भी हितकार ।
कारज अपने स्वामि को, करे महा सुखकार ॥

॥ चौपाई ॥

पत्री सहित कीर कूं देख । कन्या हर्षित भई विशेष ।
निज प्रियवस्तु मिले जो आय । निश्चय हर्ष बढ़े अधिकाय ॥
पत्र कुंवर को बाँच सुजान । आप समान अवस्था जान ।
कन्या उर में हर्ष अपार । करत भई सुख को दातार ॥
कन्या के मनकी सब बात । सखी वचन तें जननी तात ।
जानत भयो हिये दरहाल । जीवक विषै भई रतबाल ॥

अडिल्ल

सेठ कुबेर मित्र इह विधि सुनके तबै।
कियो विचार विनयमाला त्रियजुत जबै॥
कन्या को जु विवाह अबै कर दीजिये।
ता करिके सुख होय ढील नहिं कीजिये॥
रूपवंत कुलवंत भले गुण गण धरे।
शक्तिवंत मतिवंत तरुनि जग जस करे॥
भागवंत गंभीर प्रगट जीवक सही।
या सम वर अति योग जगत माहीं नहीं॥
वर कन्या को है संयोग भलो सही।
वय गुण रूप समान सेठ ऐसे कही॥
सकल कला में निपुण देख कन्या तनो।
मन आसक्त भयो जीवक माहीं घनो॥
या कारण ते जीवंधर सुकुमार सो।
कीजे कन्या को विवाह निरधार सो॥
या सम नर गुणवान रूप धारक सही।
जगत विषै सु प्रवीन और दीसे नहीं॥

॥ चौपाई ॥

दंपति ऐसो कर सुविचार। अति प्रवीन नर युग तिहवार।
गंधोत्कट पै हर्ष उपेत। भेजे तिन्हें ब्याह के हेत॥
गंधोत्कट श्रेष्ठी तिहिवार। मित्र वदन तें सुन निर्धार।

कन्या विषै कुंवर को चित्त। अति अनुराग धरत है नित्त ॥
गंधोत्कट ने तिनको तबै। आदर दे आसन दे जबै।
करत भयो सन्मान महान। दे ताम्बूल आदि गुणवान ॥
तब युग श्रेष्ठी जतन कराय। गंधोत्कट से कह इह भाय।
गुणमाला कूं व्याह मनोज्ञ। जीवंधर सों कीजे योग्य ॥
गंधोत्कट तिनके सुन बैन। किये प्रमान महा सुख दैन।
दोष रहित उत्तम वचसार। सबही जन मानें निरधार ॥
पाछें जुगम सेठ मतिवंत। आपस में मसलत कर संत।
सेठ कुवेर मित्र गुणमाल। व्याह हेत बुलवायो हाल ॥
गंधोत्कट श्रेष्ठी बुधिवंत। और कुवेर मित्र अति संत।
वर कन्या के व्याह निमित्त। पंडित बुलवायो शुभ चित्त ॥

॥ दोहा ॥

मास दिवस शुभ लगन पुनि, दोष रहित सुखकार।
करि विचार निश्चय कियो, मिलके सब परिवार ॥

॥ चौपाई ॥

मंडप रचना विविध प्रकार। दोऊ ने मिलि करी उदार।
दोनों के घर ऋद्धि महान। करे दान सन्मान समान ॥
संख भेरि करनाल मृदंग। वीणा वंशी शुभ मुहचंग।
इन आदिक बाजे सुखकार। बाजत भये अनेक प्रकार ॥
जीवंधर गुणमाला नार। अग्नि साख शुभ लग्न मझार।
परणत भयो प्रमोद बढ़ाय। दियो दान सन्मान कराय ॥

गुणमाला युत कुवर ललाम। भोगत भयो भोग निजधाम।
दुर्लभ योग तिया कूं पाय। कौन पुरुष नहिं प्रीति बढ़ाय॥

॥ रोडक छन्द ॥

विभ्रम हास विलास, हृदय लोचन वर करि के।
कोमल वचन प्रकाश, प्रीति अति ही उर धरिके॥
इन आदिक गुणमाल, देत सुख नाना पिय को।
उपजावत भो भई पुण्य फल तें पति हिय को॥

॥ छप्पय ॥

मिलै धर्म तें राज धर्म तें होय नाक पति।
मिले धर्म तें रूप धर्म तें होय विमल मति॥
दिन दिन होय अनंद धर्म तें बढ़ै ऋद्धि घर।
होय अग्नि जलरूप धर्म तें जाय उदधितर॥
अति विकट पवन परवत उदधि सिंह प्रबल अरि रण विषै।
इक धर्म सदा रक्षा करे, मिलै अचल संपति अक्षय॥

॥ पञ्चम परिच्छेद समाप्त॥

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

॥ छप्पय ॥

पद्म पद्मवर वरन लसत जगमग जगमग तन।
भव अर्णव जल हरन, अनलकरण करम सघन वन॥

जनम मरण भय दलन, जगतजन जलज अमल खग ।
भव अधर जहर जलद, अमृत बल नमत सकल जग ॥
अति सबल मदन गज मद हरण, अशरण शरण अभयकरण ।
वर अचल अमल थल वश करन, नथमल्ल नमत चरन कमल ॥

॥ दोहा ॥

अब आगे भविजन सुनो, ये कठोर चित लाय ।
कहूँ कथन गज को बहुरि, भिन्न भिन्न समझाय ॥

अडिल्ल

जीवक कर तें पाय घात कुंडल तनो ।
महा काय दंती व्याकुल हूवो घनो ॥
बड़ी व्यथा तन मांहि अधिकता करि सही ।
काहू वस्तु विषै जु प्रीति धारे नहीं ॥

* दोहा *

घन के घात थकी करी, करे न भोजन पान ।
सहे नहीं तिर्यंच भी, उरमें निज अपमान ॥
भारवाह नृप सों तबै, कही महावत जाय ।
कुंडल कर गज कूं हतो, जीवक ने सुनि राय ॥
जीवंधर बलवंत पै, कोप कियो तब राय ।
जैसे घृत संयोग सें, अग्नि प्रचंड जराय ॥

॥ चौपाई ॥

अहो लखो अचरज सु महान। मेरो भुज बल यह नहिं जान।
जैसे लक्ष्मण को बलसार। रावण ने जानो न लगार॥
मोकूं विद्यमान थिति जान। भील भयंकर बन के थान।
इन जीते भुजबल कर जाय। तब तें मो चित शल्य रहाय॥

॥ अडिल्ल ॥

भील नाथ ने दिये वसन धन लाय के।
सो सबही इन लिये प्रीति उपजाय के॥
मो बैठे सु प्रवेश कियो पुर माँहि जू।
चक्रवर्ति कीसी नाई शक नाँहि जू॥

॥ चौपाई ॥

नंद गोप ने कन्या दई। मो विवाह विधि कर इन लई।
वस्त्राभरण विविधि परकार। वाते पाये इन निरधार॥
फिर विद्याधर की वर सुता। गंधर्व दत्ता गुण गण युता।
वीणा वाद विषै इन जीत। परणी ताहि हिये धर प्रीत॥
मोह उलंघ कोप सरसाय। महावली भूपति अधिकाय।
धनुर्वेद के जानन हार। तिन तें युद्ध कियो अधिकार॥
तोभी मेरे मनके माँहि। क्रोध धनंजय उपजी नाँहि।
निज समान बिन कोप उदार। सज्जन पुरुष न करे विचार॥

॥ दोहा ॥

सिंह महाबल कूं धरे, रहे सघन वन थान ।
कहा सु कोप जु स्याल पै, करे अहो मतिवान ॥

॥ पद्धरी ॥

मेरी असवारी को गयंद । जानो जु हतो धनते स्वच्छंद ।
निज रूप काम कैसो निहार । गुण धनको मद धारे अपार ॥
याने कन्या के हेतु जान । गज घातो मेरो कोप ठान ।
मेरे उर में गज को सुघात । सालत है जैसे वज्र पात ॥
निश्चय याको मारो अवार । जीवो बहु चाहत जग मझार ।
याके जीवत मेरो सदीव । जीवन जानो दुर्लभ अतीव ॥
ऐसे विचार करके नरेश । निज मनमें तब जगियो विशेष ।
भूपति के कोप अनल महान । प्रगटी सुमहाँ अति पाप खान ॥
उपकार नीच नरको महान । अपकार हेत जानो सु जान ।
पन्नग को पय प्यावो सदीव । विष प्रगट देह जानों अतीव ॥
इह नीच बढ़ाई कियो महान । सो विष फल देत भयो पुमान ।
वर तोय सींचियत नीम माँहि । कडुवो सो फल कहा देत नाँहि ॥
नीचन को सहज सुभाव जान । गुणवंतन सों अति दोष ठान ।
सुख करता दिनकर जगत माँहि । घुग्घू कहा दोष करे सु नाँहि ॥
तब भूप कोप उर माँहि आन । जीवक के पकड़न कूं महान ।
चतुरँग सेन सज कवच सार । भेजत सु भयो तब छिन उदार ॥

॥ चौपाई ॥

भूप कृतघ्नी की बहु सेन। चली कुंवर ऊपर दुख देन।
मूरख नर को कोप महान। बिना ठिकाने बढ़त महान॥

॥ दोहा ॥

भारवाह की सेन ने, बेढ्या जाय कुमार।
ज्यों कुरँग गण सिंह कूं, बेढ़त हैं अविचार॥

* चौपाई *

जीवंधर लख सेन महान। उठो कोप करके बलवान।
सुसा समान नरन कूं देख। को नहिं सन्मुख होय विशेष॥
रण कूं उद्यत लखो कुमार। गंधोत्कट उर में निरधार।
सुत कूं श्रेष्ठ वचन हितलाय। कहत भयो ताकूं समझाय॥
हे सुत अब भूपति की लार। कहा युद्ध को कियो विचार।
निज हित वाँछक पुरुष प्रधान। करें काज निज कुल बल जान॥
उपजे हम कुल वैश्य मझार। यह भूपालक राज उदार।
या तैं युद्ध किये मतिवान। कैसे अखय रहे निज जान॥
ऐसे प्रतिबोधे सुकुमार। रन तें ताकूं दियो निवार।
जे हित वाँछक पुत्र अतीव। पिता वचन लंघैं न सदीव॥

* दोहा *

भूपति सों अति प्रीति के, हेत सेठ तिहिवार।
सुत के कर बांधत भयो, पीछे कूं युग सार॥

उत्तम सुत जे जगत में, तिनको यही सुभाय ।
आज्ञा पालें तात की, और न करें उपाय ॥

॥ चौपाई ॥

विधि युत सुत कूं बांध तुरंत । भूपति ढिग ले गयो महंत ।
दोषवान मो सुत भूपाल । तुम ढिग ले आयो दरहाल ॥
सुवरण रतन आदि बहु लेव । आयो शरन छोड़ तुम देव ।
वैरी भी जो पायन परे । दया भूप तिन ऊपर करे ॥

❀ अडिल्ल ❀

विविध भाँति प्रतिबोध सेठ करतो भयो ।
तो भी महा प्रचंड कोप भूपति ठयो ॥
संत नरन सों विनती सुख के हेत हैं ।
किये नम्रता दुष्ट महा दुख देत हैं ॥
कोटपाल यम दंड लियो सु बुलाय के ।
ताको जीवक सोंप कहो हन जाय के ॥
नीच नरन की बुद्धि जगत के माहिं जू ।
अतिशय करके नीच होय शक नाहिं जू ॥
पिता वचन हितकार जान जीवक तबै ।
भारवाह भूपाल हनो नाहीं जबै ॥
तात वचन परवीन पुरुष पालें सहीं ।
प्राण जाय निरधार तऊ लंघैं नहीं ॥
जौलों जमसम कोटपाल यम दंड जू ।

कुवर हतन को उद्यत भयो प्रचंड जू ॥
तौलूं चित्त मझार कुंवर भय टार के ।
जपत भयो नवकार मंत्र हित धार के ॥

॥ चौपाई ॥

मंत्र उचार करत तिहिवार। देव सुदर्शन आयो सार।
निज स्वामी कूं कष्ट जु परे। कहा सहाय संत नहिं करे॥
ऐसी देख अवस्था यक्ष। ताहि गगन लेगयो सु दक्ष।
जाके पुण्य मित्र सुख दाय। ताकूं बैरी कहा कराय॥
सकल लोक तव शोक अपार। कीनो व्याकुल है निरधार।
करमन के बंधे जगजीव। उरमें सोचत भये अतीव॥
सत्यंधर ने कुमति महान। करी कहा कहिये अब जान।
याकूं दियो जु निज पद सार। इन वाको मारो निरधार॥
अहो काम कैसो अवतार। पुण्यवंत यह महाँ कुमार।
भारवाह ने हतो विनीत। छोड़ दई याने सब नीति॥
दुष्टन में यह दुष्ट महान। पापिन में पापी अघ खान।
दुर्जन में दुर्जन मति हीन। निंद्य कर्म में अति परवीन॥
पुरके लोक सकल तिहिवार। ऐसे चिंतवें चित्त मझार।
भ्रातन युत जननी दुख पाय। कियो शोक उरमें अधिकाय॥

॥ अडिल्ल ॥

समवर्ती यह काल कहावत जगत में।
हम भ्राता सुंदर मति कीनी पलक में॥

है असार निरधार दुष्ट बुद्धी महा।
तातैं शोक किये कारज हमकूं कहा॥
महा भाग जमकं आवास कहाँ गयो।
किधो मित्र तोहि आप गगन में लेगयो॥
अथवा तांकूं हरो कुधी अरि ने अबै।
तो वियोग तें दुखी महा हम हैं सबै॥
अतिशय करकं दुष्ट भाव सेती भरे।
दीखत जगमें बहुत पुरुष दुर्जन खरे॥
सज्जन जग के माँहि लखे विरले कहीं।
चंदन वृक्ष जु अल्प घने पीपल मही॥

॥ चौपाई ॥

जैसे काग प्रचुर जग माँहि। हँस तुच्छ पाइये बहु नाहि।
खार नीर थल २ अधिकाय। मिष्ट नीर पुनि अल्प लखाय॥
बनमें तृन पइयत सब ठाम। शालि खेत कहुँ है अभिराम।
सज्जन पुरुष कष्ट तें पाय। दुर्जन जन थल २ अधिकाय॥

॥ कवित्त ॥

कहा पराक्रमवंत कुंवर यह भुवन मझारा।
लावण्यता कूं उदधि स्वरूप गुण सहित उदारा॥
कहा भूप हम प्रथम स्वामि सूं द्रोह करो है।
अब जीवक विध्वंस पाप सूं अखिल भरो है॥

॥ चौपाई ॥

सब तब ऐसे करत विचार। तत्व ज्ञानतें शोक निवार।
तत्वज्ञान रूपी जल पाय। कहा शोक पावक न बुझाय॥
मात पिता मुनि वचन प्रमान। उरमें सुमरें अति सुख खान।
महा शोक आर्णव सूं पार। छिनमें होत भये निरधार॥
जीवक कूं बैठार विमाण। चलो लेय यक्षेश महान।
पुण्य विभव युत हैं ये जीव। तिनकूं दुर्लभ कहा सदीव॥
जीवंधर उरमें तिहिवार। हर्ष विषाद न कियो लगार।
संपति विपति विषै नर संत। सम परिणाम करे मतिवंत॥
चंद्रोदय गिरी ऊपर सार। शोभित भुवन उतंग अपार।
तहां कुंवर कूं हित उर लाय। लेय गयो यक्षन को राय॥

अडिल्ल

रतन कनक मय भवन उतंग सुहावने।
और अप्सरा वृन्द परम मन भावने॥
यक्षराय को देख कुंवर हर्षो सही।
अपनो उदय निहार कौन हर्षे नहीं॥
पुनि जीवक सुकुमार विषै तिन हित करो।
सिंहासन पै थाप छत्र सिर पर धरो॥
ढोरें चमर समूह अपछरावाम सूं।
करत भयो अभिषेक सु उत्तम भाव सूं॥
गंगा सीता सिन्धु नदी अमलान जू।

तिनके द्रह अर कुंड तनो जल आन जू ॥
पुनि समुद्र को बिमल तोय शुभ लाय के ।
जीवक को अभिषेक कियो हर्षाय के ॥

॥ चौपाई ॥

गीत नृत्य वादित्र बजाय । करि उत्साह पुष्प बरषाय ।
भूषण वसन माल मनुहार । तिन करिके पूजो सुकुमार ॥
फेर कुवर कूं विद्या तीन । दीनी यक्ष ईश परवीन ।
बहु रूपणी प्रथम मनुहार । दूजी बंध मोचनी सार ॥
तीजी विष मोचनी महान । दुर्लभ ये विद्या पर धान ।
जीवक सूं अनुराग बढ़ाय । करत भयो अस्तुति इमि भाय ॥
कृपा तिहारी तैं मैं स्वान । भयो पवित्र देव गुण खान ।
तुम मेरे बिन कारण संत । हितकारी हो बंधु महंत ॥
पुनि मेरे वच सुनो कुमार । एक बरस पीछे निरधार ।
राज्य भार धरिके मतिवान । भोगोगे सब धरा महान ॥
फेर नृपति धरकें वैराग । श्रेष्ठ महातप कर बड़ भाग ।
कर्म खिपाय मुक्ति को राज्य । साधोगे निश्चय महाराज ॥

॥ दोहा ॥

इस प्रकार यक्षेश ने सबै, कीनी थुति मनुहार ।
सुखसों तहँ रास्तत भयो, महा प्रीति उर धार ॥

॥ चौपाई ॥

पुनि कितने इक दिन पर्यंत । सुखसों कुमर तहाँ निवसंत ।
देशान्तर चलिवे की चाह । जान अवधि बलतें सुरनाह ॥
शुभअर अशुभ पदारथ माँहि । मनुष करे वाँछा शक नाँहि ।
होनहार माफ़िक मति होय । निश्चय कर जानो भविलोय ॥
कुंवर तबै ऐसी विध चयो । हे जख नायक मो मन भयो ।
देशान्तर देखन कूं अबै । करों तीर्थ यात्रा में सबै ॥
हित करता यक्षेश महान । जीवंधर की वांछा जान ।
मानें कुंवर तबै बच सार । होनहार तिम उदय विचार ॥
फेर कुमर सेती विरतन्त । कहत यथारथ भयो तुरंत ॥
तीन काल की बातें देव । निश्चय कर जानें स्वयमेव ।
यक्ष सुदर्शन ने मगसार । दियो बताय चलो सुकुमार ।
सुर के गुण सुमरत उर मांय । मित्र सोई हितकारी होय ॥
इच्छा सेती विपनि मझार । चल्यो अकेलो जात कुमार ।
हर्षित चित्त महा बलवान । भय वर्जित जिमि सिंह महान ॥

॥ दोहा ॥

विपिनविषै पादपघनें, विविध जात मनुहार ।
तिनकी शोभा देखतो, विचरत भयो कुमार ॥

॥ कुसुमलता छन्द ॥

अगर अंब आंवले अमलतास अनार भले ।
अमल बेंत दाडिम अंजीर साखो शोभित अधिक फले ॥

कदंब कैथ कंकोल कलोंजी, कटहल जंब तहां लूम रहे ।
कंदूरी कचनार करदली, करहु कगौदा झूम रहे ॥
करना और कायफल केरा, खिरनी खैर खजूर फली ।
गोंदी गूमल अरुन घुंघची, ठौर ठौर शौभैं सुभली ॥
चारौली के तरु अति राजैं, चन्दन अधिक सुवास करे ।
छारछरीला अधिक छुहारे, उत्तम उन्नत शोभ धरें ॥
जावित्री जामन जंभीरी, जातीफल तज वृक्ष बड़े ।
तंतरीख नारंगि तमालन, तूत ताल के पेड़ बड़े ॥
दाख दाल चीनी अतिसुंदर, देवदारु बहु शोभ धरें ।
पीपल पुनि पखाख मनोहर, पिस्ता पीलू लाल झरें ॥
उन्नत तरु पतंग के सोहे, ठौर ठौर प्रवाल भले ।
फूले अरुण पलाश मनोहर, झूरत पवन तें पत्र गले ॥
नींबू नीम नारियल लूमे, नौजा के तरु मिष्ट खरे ।
तूत फालसे थल थल राजैं, टूट टूट भू माँहि परे ॥
वाय विडंग विजौरा बदली, मौलश्री अति फूल रही ।
विजैसार बादाम लेल तरु, वरना की शुभ वास ठई ॥
मिरच मजीठ मरहठी माजू, महुआ तरु बहु सेव फले ।
सिरस सदाफल सीसौ सेंवल, शिवासाल के पेड़ भले ॥
सघन सौंजना और संभालू, सीताफल पुन संगतरे ।
झूम रहे अति कठिन सुपारी, सुंदर फल झर भूमि परे ॥
चंपौ पुनि मोतिया मोगरा, दाऊदी सदवर्ग खिले ।

नीलोफ़र गैंदा पाडल, गुलशब्बू के बहु सुमन भले ॥
सदा गुलाब गुलाब मनोहर, अरुण गुल लाला फूल रहे ।
गुल खैरू गुल और रंगन के मचकंदा के कुसुम ठये ॥
कमल केतकी और केवरा, वास जास महकाय रही ।
दोना मरुवा राय चमेली, थल थल में बहु फूल रही ॥

॥ दोहा ॥

इत्यादिक उपवन तनी, शोभा कही न जाय ।
फूले फले अनेक विधि देखत मन हरषाय ॥

॥ चौपाई ॥

अति सुगंध दस दिशा मँझार । फैल रही अति सुख करतार ।
ता करि अलि समूह विचरंत । कोकिल शुक झंकार करंत ॥
कहीं हँस बक तीतर काक । कहीं मोर बोले वरवाक ।
कहीं तूती मैना मनुहार । कहीं चकवा चकवी अतिसार ॥
कहीं इक नीर बहै अमलान । पीवत आय करी तिहि थान ।
फूले तामें पंकजसार । सारस गन डोले मनुहार ॥

॥ सोरठा ॥

कहीं केहरि ने आन शीस हनो गजराज को ।
मोती गण अमलान ताके मस्तक तें परें ॥

॥ पद्धरी छन्द ॥

कानन में बहु सिंह फिरें, वर कुंजर यूथ विहारत ।
रीछ विनोद करें बहु जंबुक, कोकिल मोर पुकारत ॥

रोज सुसागरण सारंग बाँदर, शूकर और निहारत ।
जीव कुमारग में चलते, उरमें भय नेक न धारत ॥

॥ दोहा ॥

या प्रकार बन देख के, भयो न कायर सोय ।
संपत विपत निहार के, मूढ़न के भय होय ॥

॥ चौपाई ॥

कैयक गज समूह बनथान । करनी कलभ सहित भयवान ।
दावानल मधि जरते सबै । करत पुकार लखे तिन तबै ॥
तिनकी रक्षा की उर माँहि । इच्छा करत भयो शक नाँहि ।
पर की विपति देख मतिवंत । बड़ी बुद्धि धारैं जन संत ॥
वृष को मूल दया निरधार । सो प्राणी रक्षा तें सार ।
अशरण जनको शरण जु होय । धर्मवंत को लक्षण सोय ॥
दया सहित उर माँहि विचार । कौन उपाय करो इह बार ।
जो जन हित वांछक जु सदीव । दया करे सब ठौर अतीव ॥
तब ही जीवक पुण्य प्रभाव । पावक अरु बादर उमगाय ।
गरज २ बिजली चमकंत । मूसल सम धारा बरसंत ॥
पुण्यवंत जो इच्छा करे । सो कारज छिनमें सब फुरे ।
धर्मवंत को कारज सार । जगमें सफल होय निरधार ॥
जंतुन की रक्षा लख संत । हरषो कुंवर दयालु तुरंत ।
जीव दया तें धर्मी जीव । उरमें हर्षित होय सदीव ॥
तब सब ही जनने तिहि थान । जीवक को अति धर्मी जान ।

निज उपसर्ग निवारक संत। लख के को हर्षे न तुरंत॥
तीरथ की वांछा उर करे। बन तें निकसो भय नहिं धरे।
मन थापे जिनधर्म मँझार। गयो और बन माँहिं उदार॥
शुभ तीरथ आवे जिहि थान। पूजा तहाँ करे गुणवान।
आगे सहस कूट जिन धाम। मणि तोरण युत लखो ललाम॥
हर्ष धार तहँ गयो कुमार। जुड़े कपाट लखे तिहि द्वार।
उन्नत जिनमंदिर कूं देख। उरमें विस्मय भयो विशेष॥
निज करते सपरस तिहिवार। खोले युगल कपाट उदार।
पुनि जिन मंदिर भीतर गयो। निसही निसही कहतो भयो॥
फटिक रूप सुवरण मणि मई। प्रतिमा तहाँ अनूपम थई।
शशि सूरज की किरण समान। तेजवंत हर्षो मतिवान॥
भक्ति सहित थुति विविधप्रकार। पूजा सहित करी अतिसार।
कर जोड़ शीश निज नाय। नमस्कार कीनो गुण गाय॥
जब लग सभा शाल में जाय। बैठो जीवक अति सुख पाय।
तब लग यक्ष ईश युत नार। कोइयक आयो कौतुक धार॥
पुन्यवंत नर लख जख ईश। नावत भयो कुंवर कूं शीस।
देखो पुण्य महातम एव। देव करें बहु नर की सेव॥
सहित यक्षणी करत प्रणाम। देख यक्ष कूं कुवर ललाम।
सम्यक्दर्शन अँग समेत। ताहि दिढायो हर्ष उपेत॥
जक्ष कुवर तें दर्शन पाय। अंगीकार कियो शुद्ध भाय।
ईख विषै जल वर्षे जोय। कहा न सुख को दाता होय॥

दर्शन दान कियो इन इष्ट । इह नर धर्म मूर्ति उत्कृष्ट ।
अणिमादिक विधि धारक देव । मान छोड़ कीनी तसु सेव ॥
प्रत्युपकार करन के हेत । जीवक कूं पुनि यक्ष सुचेत ।
लेय गयो निज गेह मँझार । धरम उदय युत शोभ अपार ॥
पुनि सिंहासन पर बैठाय । दिव्य वसन भूषण सुखदाय ।
दिव्य गुणन कर युत मनुहार । दिये कुंवर कूं प्रीति विचार ॥
रण की केल करन के बाण । देत भयो पुन यक्ष महान ।
निज उपकारी जनकूं सही । ज्ञानवान कहा पूजे नहीं ॥
पुण्यवंत नर जगत मझार । अतिशय पूजनीक निरधार ।
तातैं साता वांछक जीव । धर्म विषै रत होय सदीव ॥
पुनि थुति कीनी विविध प्रकार । फेर तहाँ ते चल्यो कुमार ।
अचल गुफा सरिता अमलान । देखत जाय हर्ष उर आन ॥
अनुक्रम तैं इह कुंवर उदार । देश आठ पल्लव मनुहार ।
पहुँचत भयो हर्ष उर लाय । शोभित देश तास अधिकाय ॥
बन उपवन करि अति शोभंत । पादप पल्लव सहित लसंत ।
लघु सरवर सरता सरताल । कूप वापिका तहाँ विशाल ॥

* दोहा *

तास देश के मध्य में, लसत नामि वतसार ।
चंद्राभा नामा पुरी, शशि मंडल उनहार ॥

॥ चौपाई ॥

वलयाकार शोभित अति शाल। दरवाजे बहु अधिक विशाल।
खाई जलकर भरी अतीव। केल करें तामें बहु जीव॥
मणिमय शोभित महल उतंग। कनक मई हैं शिखर अभंग।
पंकति वंत दिपैं अभिराम। मन हर्त्ता तिनमें चित्राम॥
तिनमें बसें सुधी जन घने। संयम शील विषै सब सने।
सकल कला में निपुण विनीत। तजैं नहीं निज कुलकी रीति॥
महा साधु दानी गुण भरे। वात्सल्य अंग धारे खरे।
करें सकल उत्तम व्यापार। हिंसा वणज न करें लगार॥
नारी महा रूप की खान। पतिव्रता गुण धरै महान।
मधुर वचन बोलैं मनुहार। अति उदार मन रंजन सार॥
घर घर विषै त्रिया गुणगांन। ताल सहित चूकै नहिं तान।
कोकिलवती हैं कंठ अनूप। सुरतिय सम धारें वर रूप॥
जिनवर के तहाँ भवन उतंग। चंद्रकांत मणि मई अभंग।
कनक मई कलसे अतिसार। शिखरन पै सोहै मनुहार॥
करे चंद्रमा जब उद्योत। जगमगात तिनको जब होत।
रूपाचल कीसी उर भ्रांति। उपजावत है जिनकी क्रांति॥
बाजे बजें तहाँ अति जोर। मानूं घन गर्जत है घोर।
शिखरन पै ध्वज गण फहरात। किधौं भव्यजन कूं जु बुलात॥
अगर तहाँ खेवें भव्य जीव। ता करि धूमा उठै अतीव।
किधौं जनन को अघ समुदाय। धूमा के मिस उड़ नभ जाय॥

भव्य तहाँ नित पूजा करें। भव भव के संकट अघ हरें।
इस प्रकार नगरी मनुहार। स्वर्गपुरी सम शोभ अपार॥

॥ पद्धड़ी छंद ॥

तापुर को नृप धनपाल नाम। बलवंत रूप युत गुण ललाम।
भुजबल तें अरि जीते अनेक। परजा पाले उर धर विवेक॥
रानी तिलोत्तमा गुण निवास। नृपमन सरोज करती प्रकाश।
अति रूपवंत रति की समान। पतिव्रता शीलगुण रतन खान॥

॥ दोहा ॥

मघवाने शत तियन को, लेके रूप अपार।
एक ठौर चित्त लायके, रची तिलोत्तमा सार॥
ब्रह्मा के तप कूं अबै, नाश करन के हेत।
भेजी नार तिलोत्तमा, जग में हर्ष उपेत॥

॥ पद्धड़ी छंद ॥

सब भूमि पतिन को तप उदार। सोई आकर्षण मंत्र सार।
ता करि आकर्षी भूमि थान। सोई तिलोत्तमा किधौं जान॥
तिनके सुत सुंदर लोकपाल। सुर लोकपाल वत बल विशाल।
जस लोक विषै ताको अतीव। अति धीर वीर दानी सदीव॥

॥ चौपाई ॥

तिन के सुत पद्मावती नाम। नेत्र पद्म दल सम अभिराम।
ज्यों भीष्म नृप के रुक्मणी। त्यों नृप के पद्मावती भनी॥

कमला सम पद्मा शुभ जान। रूप कलावर गुण की खान।
निज छवि तें जीती सुरनार। कल्प वेल सम तन सुकुमार॥
ताही नगर में कुंवर महान। कौतिक रूप गयो सुख मान।
महलन की पंकति मनुहार। तामें देखत जाय कुमार॥
कहीं इक जिनमंदिर छविवंत। देखत भयो कुंवर बुधवंत।
जय २ शब्द होय सुखकार। बाजे बाजें विविध प्रकार॥
कहीं आंगन में रतन अनूप। तिनकी राशि लखी शुभ रूप।
लखी कहीं कामिनि छवि देत। मणि भूषण शुभ वसन उपेत॥
कहीं इक लखी धुधनकी राशि। कहीं यक सुवरणको परकाश
कहीं इक पंडित पढ़ें पुराण। तिनकूं देख हिये सुख मान॥
धर्म मूर्त्ति छत्रिय बलवंत। शीलवान गुणवान सुसंत।
खड्ग हाथ में लिये उदार। कही इक देखत भयो कुमार॥

॥ दोहा ॥

या प्रकार पुर देखतो, नर उत्तम कहि थान।
तौलों बैठी हर्ष युत, कौतक सहित सुजान॥

* दोहा *

तौलों राजा की सुता, पद्मा अति मनुहार।
गेरो हाथ उठाय के, कुसुम करंड मझार॥
तहाँ सर्प ने क्रोध कर, फन उठाय दृग लाल।
डसी सुपद्मा पलक में, भई तबै बे हाल॥

॥ चौपाई ॥

विष फैल्यो सब अंग मंझार। भई विलखमन दुखित अपार।
मूर्छित होय परी भू थान। अति अचेत सो मृतक समान॥
विष प्रभाव तें कन्या ऐन। देखत नैन न बोलत बैन।
असन पान नहिं करे लगार। परी भूमि में तज सुख सार॥
ऐसी जान अवस्था तास। जनकादिक आये तिस पास।
दुख सों पीड़ित कन्या देख। हा हा कार करें सु विशेष॥
नृप आज्ञा तें वैद्य महान। विष प्रहार आये तिहि थान।
विष नाशन की क्रिया अनेक। करत भये उर धार विवेक॥
मंत्र जु पढ़िकें छींटो गात। विष की रक्षा करी विख्यात।
बहुरि मंत्र पढ़ छींटो तोय। विष हरता मणि दीनी धोय॥
नाना विध औषध विषहार। कन्या को दीनी तिहवार।
इस प्रकार कियो सु उपाय। विष नासो नांही दुखदाय॥
अतिशय कर इस जगत मझार। प्रलय काल की अग्नि अपार।
तुच्छ तोय सेती अवलोय। कैसी विध सेती सम होय॥
काहू नर सेती इम सुनो। राज लोक है व्याकुल घनो।
जीवंधर जब हिये मझार। दया भाव धरिकें अधिकार॥
भूपन के ढिग जाय कुमार। प्रगट कहो तासूं तिहिवार।
कन्या विष भूती महाराज। मैं करिहों अवसार इलाज॥
नृप आज्ञा तें जीवक अबै। विषापहार मंत्र पढ़ि तबै।
विष कूं छिनमें दियो नसाय। गरुड़ देख ज्यों सर्प विलाय॥

अहि की डसी नृपति की बाल। दई जिवाय कुंवर तत्काल।
बिन कारण जन रक्षा करे। सहज सुभाव संत जन धरे॥
जीवक कूं धनपाल नरेश। प्रीति धार पूज्यो सु विशेष।
प्रानदान सम शुभ उपकार। और न दूजो जगत मझार॥
सज्जन जन संतन की सार। पूजा सहित करें निरधार॥
निज उपगारी लख के महाँ। ज्ञानवान पूजे नहीं कहा।
नृप जीवक को गात निहार। जानो यह नर ऊँच उदार॥
पुरुष प्रवीन देख के गात। ऊँच नीच जानो विख्यात।

॥ दोहा ॥

देख कुंवर के रूप कूं, पद्मा मोहित होय।
पँच काम के बाण से, अति पीड़ित भई सोय॥

* चौपाई *

जीवक कूं मोहित लखबाल। तब हर्षो भूपति धनपाल।
इष्ट वस्तु की प्रापति होय। कौन हर्ष धारे नहिं लोय॥
जीवक कूं नृप ने हर्षाय। अर्ध राज पद्मा सुख दाय।
देत भयो उरमें अति प्रीति। बड़े पुरुष धारें वर नीति॥
शुभ दिन लगन मुहूरत देख। तिनको कीनो ब्याह विशेष।
तिन दोनों के चित्त मझार। बढ़ो सनेह महा सुखकार॥

॥ कवित्त ॥

पुण्य सुफल की धरन हार कन्या छवि कारी।
ताकों कुंवर विवाह भोग भोगे सुखकारी॥

गिरि कंदरा मझार भवन रमणीक विपिन में।
रमत भयो तिम सँग हर्ष धरतो निज मनमें ॥

॥ छप्पय ॥

जीवक पुण्य निधान पूर्व वृष फलो महा तरु।
तातैं पद्मा नारि पाय सुंदर सुमहावरु ॥
रथगयंद वर तुरंग लहे अति ही सुख दायक।
भयो सहज ही आप देश पल्लव को नायक ॥
इम जानि भविक जिनधर्म को, पालो नित उर धर मुदा।
सँसार महा अर्णव तरो, विलसो शिव सँपत सदा ॥

पद्मालाभ वर्णनो नामः ॥ सप्तम परिच्छेद समाप्त ॥

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

॥ छप्पय ॥

जिन सुपास भवदाह हरण शिव सुख वर दायक।
जगत शिरोमणि ज्येष्ठ जगत गुरु हो शिव नायक ॥
भव समुद्र ते पार करन को हो सुपात्र वर।
कर्म अग्नि परचंड बुझावन कूं सुमेघ झर ॥
यातें कृपाल मोपै अबै होय दीजिये वर सुमति।
युग हाथ जोर धर शीश पै चरण कमल नयमल नमत ॥

॥ चौपाई ॥

एक दिवस मन मांहि कुमार । मात पिता आदिक परिवार ।
याद कियो निज नगर महान । झलको मोह हिये में आन ॥
तब जीवक पद्मासों ऐन । कहत भयो कोमल शुभ वैन ।
देशांतर चलवे को चाव । मोमन में उपजो शुभ भाव ॥
सुनो प्रिया निज राज उदार । जौलों मोहि मिले नहिं सार ।
तौलों तुम रहियो इह ठाऊँ । राज लाभ पीछे ले जाऊँ ॥
सुनि पद्मा पति के वच तबै । विहल होत भई अति तबै ।
अहो नाथ तुम बिन मो प्रान । रहें नहीं निश्चय यह जान ॥
जीवक ने जानी उर मांहि । प्रिया मोह छोड़े अब नांहि ।
मौन पकर बैठो तिहि थान । उत्तर कछू न दीनो आन ॥
आधी निशि व्यतीत कराय । निकसे ग्रहतें तिय छुट काय ।
चलो अकेलो जीवक संत । वैरी नृप जीतन बलवन्त ॥
कंत गये पीछे तिहवार । जागी पद्मा नींद निवार ।
कमला सम धारे वर रूप । लखो नहीं तिन कुमर अनूप ॥
पति वियोग कर पद्मा सार । मगन भई दुख उदधि मझार ।
तत्वज्ञान वर्जित जे जीव । तिनको व्यापत दुख सदीव ॥

॥ अडिल्ल ॥

पद्मा की निज सखियन के मुख तें जबै ।
नृप ने जीवक को जु गमन जानो तबै ॥

तुरत चलो धनपाल ढूंढवे कुमर को।
ले सेना चतुरंग डरावत अरिन को॥

॥ चौपाई ॥

गयो कुमर जिस मारग हाल। तिसही पँथ गयो भूपाल।
तुरत करे जो कारज कोय। किसके लाभ निमित्त न होय॥
पायो कुमर महा गुणवंत। हर्षित चित्त भयो नृप संत।
सो आनन्द कहो नहिं जाय। भूपति अपने अंग न समाय॥
जीवक कूं घर लावन काज। नृप ने कीनो बहुत इलाज।
फिरो न उलटो कुंवर महंत। काढ़े वचन करे सो संत॥
अति आग्रह कीनो भूपाल। तब जीवंधर बुद्धि विशाल।
पूर्व वृत्तान्त आपनो सबै। कहत भयो भूपति सूं तबै॥
तब मंत्रिन कर सहित नरेश। कहत भयो इम वचन विशेष।
तुमरे राज लेन के काज। तुम संग चालें हम महाराज॥
सुन वच तिनके कुंवर उदार। मना किया तिनकूं तिहवार।
काज अयोग्य विषै नर संत। परकूं खेद करे न महंत॥
नृप मंत्री आदिक तिहिवार। ताही रोक सके न लगार।
जो कारज आरँभे सँत। औरन पै नहिं रुके तुरन्त॥

* दोहा *

सबकूं उल्टे फेर के, आगे चलो कुमार।
पंच परम पद सुमर के, जीव दया चित्त धार॥

॥ चौपाई ॥

गुण समूह धारैं सुखकार। तीरथ पूजत जात उदार।
सत्पुरुषन कर आश्रित थान। निश्चय पूजनीक होंय जान॥
सत्पुरुषन कर आश्रित धरा। पूजनीक होय जगमें खरा।
अचरज यामें कौन बताय। रसतैं लोह कनक होजाय॥
जीव दया पालतो कुमार। प्रभु को सुमरत चित्त मझार।
विपन छांड़तो चल्यो महंत। महा सुबल धारत बुद्धवंत॥
जिनमंदिर तीर्थ शुभ थान। तिनको वंदत जात महान।
भय वर्जित मारग सु मझार। पायन चलो जात सुकुमार॥
सरिता के तट विपन महान। तपैं तहाँ तपसीगण थान।
तिनकूं देख कुंवर शुद्ध भाय। जातभयो तिन ढिग सुध पाय॥
सात सहस तापसि तिह थान। मिथ्यामत तपतैं अज्ञान।
खोटे तप करकै अघलीन। तिनकूं देखत भयो प्रवीन॥
तत्वज्ञान जुत कुंवर विशेष। तिनकूं कियो तत्व उपदेश।
अतिशय कर संतन को चित्त। पर कल्याण के होय निमित्त॥
धर्म अहिंसा परम प्रधान। हिंसा रहित सु तप अमलान।
हिंसा रहित दान अतिसार। मुनिजन भाषो वेद मझार॥
जीवंधर इत्यादि प्रकार। दीनी धर्म देशना सार।
छोड़ कुपथ सब शिवपथ लगे। लख तिन जीवक सुखमें पगे॥

॥ दोहा ॥

संत पुरुष इस जगत में, अपनो उदय प्रभाव ।
परको उदय निहार कें हर्ष करें अधिकाय ॥

॥ चौपाई ॥

ज्ञान विभव इस जगत मझार । पाय करे नहिं पर उपकार ।
तो कारजकारी नहिं होय । इन्द्रायण फलसम है सोय ॥
फेर तहाँ तें जीवक संत । चलो हँसवत केलि करंत ।
विपद संपदा विषै समान । सदा हर्ष धारे मतिवान ॥
दक्षिण देश चलो उमगंत । हर्षत मनमें भय न धरंत ।
संपति रूपी चंद्र उदार । होनहार है उदय अपार ॥
मनुषन को इस जगत मझार । होनहार कारज अनुसार ।
निश्चय करके गमन जु होय । यामें संशय है नहिं कोय ॥
श्री विमान नामा जिनधाम । सहस कूट संयुत अभिराम ।
करत भयो जिनकी थुतिसार । मानों वृष को पुंज उदार ॥
जुड़े कपाट लगे युग जबै । विस्मय चित्त भयो उर तबै ।
थुति कूं करत भयो उच्चार । दर्शन हेत हर्ष उरधार ॥
यह भव उदधि अनंत अपार । पड़े जीव तामें निरधार ।
तिनके काढन को भगवान । तुम उत्तम हो नाव समान ॥
दुरनय तम तें भरो अपार । यह संसार महाँ निरधार ।
तामें मोकूं दीपक ज्ञान । हो जग तम हरता भगवान ॥
यह सँसार कुमार्ग दुरंत । कर्म शत्रु आगे तिष्ठंत ।

तहाँ मुक्ति दाता भगवान। एक तिहारी भक्ति महान ॥
हे जिनंद इस जग के थान। अघ दाहक तुम बिन नहिं आन।
दिनपति बिना जगत तमपूर। अन्य कौन कर है अब दूर ॥

* रोड़क छंद *

सुरपति नरपति असुर आदि तुमको आराधें।
सो निज स्वारथ हेत सकल शुभ कारज साधें ॥
आतप नाशन हेत पुरुष जो जगत मझारा।
सेवत शीतल नीर चन्द्रमा कूं निरधारा ॥
शांतिनाथ शिवनाथ अहो तुम सब सिधि दायक।
मेरे भव भ्रम शांत करो त्रिभुवन के नायक ॥
ज्यों शशि बिन सब जगत चाँदनी मई करनकूं।
और कौन समरत्थ सकल आताप हरनकूं ॥
सदा शांत तुम शाँतिनाथ आतम निज चीनो।
अनेकान्त मत रूप चित्त मेरो अति भीनो ॥
ताकूं निरमल करो अहो त्रिभुवन के स्वामी।
ऐकान्तिक मत अंधकार नाशन रवि नामी ॥

* नाराच छन्द *

दिनेश कोटि तेज तें सिवाय अंग जोत है।
निहार रूप संपदा अनंग मात होत है ॥
सुरेश तोहि पूज ही सु शीस को नवाय के।
मुनीश तोहि ध्यावही सु आतमा लुभाय के ॥

॥ चामर छंद ॥

जै जिनेश शाँति रूप तेज के निधान हो ।
दिव्य दीन बन्धु मोक्ष पंथ के विधान हो ॥
हे मुनीश नेह सों दया अपार कीजिये ।
दीन को निहार के अनंत सुख दीजिये ॥

॥ चौपाई ॥

यातें शांतिनाथ जिनदेव । सर्व वस्तु को जानो भेव ।
भक्ति सहित थुति कीनी सार । देउ मोहि शिवपद अविकार ॥
या प्रकार थुति करत किवार । उघड़ गये ततछिन तिहिवार ।
भेदी नर संती अवलोय । शिव कपाट क्या खुले न कोय ॥
कठिन काज करिके सुकुमार । गर्व धरो नहि हिये लगार ।
जिम दिनकर जग तमकूं हरे । उर माँही मद नेक न धरे ।

* अडिल्ल *

जीवक कूं कपाट युग खोलत देखके ।
कैयक नर हर्षे उर माँहि विशेष के ॥
देख अपूरव संत पुरुष को उर विषै ।
ज्ञानवान को हर्ष करे नहिं जग विषै ॥

॥ चौपाई ॥

जौलों भीतर गयो कुमार । सुवरणमणि मय सो मनुहार ।
जिनकी लख मूरत अमलान । नमस्कार कीनो सुखमान ॥
तौलों नर जीवक ढिग जाय । नमस्कार कीनो सिर नाय ।

निज वाँछित कारज जब सरे। कौन पुरुष उर हर्ष न धरे ॥
मस्तक विषै धरे जुग हाथ। ताहि देख हर्षो नर नाथ।
विनय करे अपनी कोई आय। तब को नाँहि हर्ष बढ़ाय ॥
जीवक तब तासूं इह भाय। पूंछत भयो प्रीत सरसाय।
को तुम कितते आय तुरंत। कीनो मेरा विनय अत्यंत ॥

* दोहा *

कुमर वचन सुनके तबै, बोलो नर हरषंत।
सुनो वचन मेरे अबै, जो सुख होय तुरँत ॥

॥ चौपाई ॥

वलय नाम इह देश प्रसिद्ध। दक्षिण दिशि धारे बहु रिद्धि।
निरमल कुलके नर परवीन। तिन कर भरो न दुर्नय मदीन ॥

* दुमाल छन्द *

तिस देश विषै सरसी सरताल उदारस कूप भरे जल से।
तिन माँहि सरोज खिले अति सुंदर शोभ धरे सबही अलिसे ॥
बहु हँस फिरें तिनके तट पै तिनकी छवि देख हिये हुलसे।
तंह कोकिल कीर करें रव सुंदर नाचत मोर महाँ कलसे ॥

॥ चौपाई ॥

देश मध्य है क्षेमा पुरी। विमल नीर कर खाई भरी।
तामें पंकजगण मनहार। सुरगपुरी सम लसै उदार ॥
वलयकार शोभित शुभ साल। पंक्ति बद्ध प्रासाद विशाल।
सूत बद्ध राजत सु बाजार। तिनमें सुधी करत व्यापार ॥

देवराज तहाँ नृप बलवान । लक्ष्मी कर है इन्द्र समान ।
पीड़ित कीने शत्रु नरेश । विविध प्रकार धरें गुणवेश ॥
सुर कैसी क्रीड़ा नित करे । लच्छि कुवेर सदृश घर धरे ।
अरि भूपति शुभ पंथ लगाय । न्याय थकी मानो दिव राय ॥
ता नृप के सुन्दर पटनार । नाम देवदत्ता मनुहार ।
ता देखें लागे रति रती । गुण गण मंडित है वर सती ॥
नृप के सेठ सुभद्र ललाम । मंत्री शोभित है गुण धाम ।
निज मति कर जीते मतिवंत । ज्यों कुवेर लक्ष्मी कर संत ॥
ताके त्रिया निवृत्ता नाम । व्रत कर भूषित अति अभिराम ।
पतिव्रता गुणगन कर भरी । मंत्री के प्यारी है खरी ॥
तिनके क्षेमश्री वर सुता । कमला सम शोभित गुण युता ।
मृग लोचनी क्षेम कर्त्तार । रंभा सम है रूप अपार ॥
ताके दृग कटाक्ष कर काम । कौतुक सहित भ्रमत इह ठाम ।
देख रूप कन्या को ऐन । मानो मोहित भयो सुमैन ॥
कन्या के वच शुभ अतिवाल । कला रूप सौभाग्य विशाल ।
या समान त्रैलोक्य मँझार । अवनि विषै दीसत न लगार ॥
व्रत आदिक गुणगण कर भरी । शुभ लक्षण भूषित जिमिसुरी ।
केलि कला विज्ञान उपेत । मदन मँजूषा किधों सु चेत ॥

॥ दोहा ॥

या प्रकार कन्या धरे, गुणगन अधिक विशाल ।
और कथन आगे सुनो, अहो सुधी गुणमाल ॥

॥ चौपाई ॥

वृक्षन करि शोभित वनसार। एक दिवस तहाँ करत विहार।
सागरचन्द्र नाम मुनि राय। आये सब जनकूं सुख दाय॥
ज्ञानवंत मुनि आये देख। वन पालक के हर्ष विशेष।
जाय कह्यो नृपसों इह भाय। वनमें आये मुनि सुखदाय॥
मुनि को आगम जान नरेश। भूषण वसन उतार नरेश।
वन पालक को दीने सबै। आनन्द भेरि दिवाई तबै॥
शुभ वसु द्रव्य आठ ले संत। मुनि वन्दन को भूप तुरंत।
राजा रथ पर होय सवार। चाले सब मिल विपिन मझार॥
देख दूर तैं मुनि को तबै। निज निज असवारी तज सबै।
तीन प्रदक्षिणा दे नम भाल। जुगल चरण पूजे गुणमाल॥
तिनकूं धर्म वृद्धि सुखकार। दई गंभीर वचन कहसार।
सुख कारन व्रत धर्म विशेष। तिनकूं करत भये उपदेश॥
धर्म सुधा पीयो तिहिवार। कर्ण अंजुली कर तिन सार।
भूपति आदि अनीति महान। तजत भये अतिशय तिहि थान॥
सचिव सुभद्र मुनी सों जबै। बोलो भद्र भाव करि तबै।
हे मुनीश मो धिय को कंत। होनहार को भुव में संत॥
मुनि बोले सुनि सचिव उदार। तेरी कन्या को भरतार।
भाषूं तू सुनि चित थिर होय। निश्चय पावै जा विधि सोय॥
श्री विमान जिनवर को धाम। ताके जुग फाटक अभिराम।
जा कर सपरश तैं निरधार। खुलै होय सोई भरतार॥

इम सुनिके मुनि बचन विशाल। नमस्कार कीनो दरहाल।
मन सन्देह त्याग हर्षाय। नृप आदिक निज मंदिर आय॥

॥ अडिल ॥

हे सुजान ता दिनतें मंत्री ने मुझे।
राखा है इस थान कहूं साची तुझे॥
है गुणभद्र सुनाम मेरो उर धारिये।
रहूं परीक्षा हेत हिये सु विचारिये॥

॥ चौपाई ॥

किते इक बीते दिन इसथान। मैं तुम को देखा बलवान।
ज्यों चकवा निशिमें दुखपाय। दिन कर देख अधिक हर्षाय॥
कह अपनो ऐसे विरतन्त। गयो पुरी गुण भद्र तुरन्त।
बड़ो हर्ष मन मांही धरो। मन को चिंतो कारज सरो॥
पुनि सुभद्र मंत्री पै जाय। कर प्रणाम निज शीस नवाय।
जीवक को सबही विरतन्त। कहत भयो गुण भद्र तुरंत॥
मंत्री सुन ताके वचसार। करत भयो बखसीस उदार।
आवे निकट हित् जन कोय। उरमें हर्षित को नहिं होय॥
पुनि सु भद्र मंत्री हर्षंत। यह सज्जन ले चल्यो तुरंत।
सहित तूर उर धरत हुलास। जात भयो जीवक के पास॥
वसन रहित जिन पूजन वार। मौन रूप [illegible]को कुमार।
वजत तहाँ बाजे घनघोर। शब्दित भयो दशों दिश सोर॥
कुंवर गाज कूं लख मंत्रीश। हर्ष कियो उर माँहि [illegible]श।

ताके तनकी सुर शुभ सार। फैल रही दश दिशा मझार ॥
बड़े प्रेम कर दोऊ जबै। मिल प्रणाम कीनो पुनि तबै।
अतिशय बड़े पुरुष हित लाय। करें नम्रता सहज सुभाय ॥
कुशल क्षेम पूंछी तिहिवार। दोऊ मिल पूजे तिनसार।
छिन इक बैठे थिरता लाय। फेर पुरी आये उमगाय ॥
सब जन करत प्रशंस अशेष। सचिव गेह कीनो जु प्रवेश।
जीवक कूं आयो लखराय। मनमें हरष कियो अधिकाय ॥
इक दिन करी प्रार्थना सार। जीवक सूं मंत्री हित धार।
जिन वांछा सूचक वच एन। भाषे युक्ति सहित सुख दैन ॥
मेरी सुता परन शुभ संत। उत्तम सुखकी सिद्धि निमित्त।
संतन कूं संतन तें सिद्धि। निश्चय होत सहत सब रिद्धि ॥
सचिव वचन सुनिके मतिवंत। अंगीकार किये जु तुरन्त।
उत्तम लक्ष्मी आवत जान। पगसूं को टाले मतिवान ॥
निमिती के बचतें तिहिवार। लगन तनो कीनो निरधार।
परम उछाह ब्याह के हेत। मंत्री करत भये शुभ चेत ॥
जीवक कूं दीनी वर सुता। भली लगन मांही गुण युता।
क्षेम श्री को ब्याह तुरंत। विधि पूर्वक कीनो गुणवंत ॥

॥ सवैया ॥

जीवक को जब ब्याह भयो नृप आदिक आय उछाह कराये।
भूषण कंचन चीर हिये बहु लेकर के सबही सुख पाये।

गावत गीत सिंगार किये तिय देखत नैन सबै ही लुभाये।
ऐसे अपूर्व वाँछित कारज कौन करे नहिं हर्ष समाये॥

॥ मरहट्टा छन्द ॥

नारिन के गण में अति उत्तम क्षेमश्री रति की उनहार।
शोभित है तनमें वर भूषण बोलत बैन अति हितकार॥
भौंहन को धनु ले कर में वर छोड़त नैनन के सर नार।
ऐसी त्रिया ले जीवक मीत शुभोत्सर को फल मानत सार॥

॥ छप्पय ॥

किधौं असुर फन ईश नागपति किधौं सोमवर।
किधौं मार खग ईश किधौं धनपति सुचक्रधर॥
किन्नर किधौं वसन्त मूर्तधर शिव इह राजत।
ब्रह्मागुरू मुरार देख छवि जगत लुभावत॥
इह भाँति करत वितर्क विविधि जगत जीव उरमें तबै।
लख पुण्य उदय जीवक तनो धन्य धन्य भाषत सबै॥

क्षेम श्री वर्णनो नाम: अष्टमोऽधिकार:।

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

शशितें वर रूप सुधारक हो, भवताप हरो जगनायक हो।
भवसागर में बहु जीव परे तिनको अब काढ़ उधारक हो।
तुम तो बिन कारण बंधु बड़े जगमें तुमही सुख दायक हो।
शशि नाथ सुनो विनती हमरी अब तारो हमें शिवदायक हो॥

॥ चौपाई ॥

अब क्षेमश्री संग कुमार । रमत भयो कर प्रीति अपार ।
करे कभी रस कथा अनूप । कभी इक देखे सुन्दर रूप ॥
कितइक दिन बीते उमगाय । बहुरि चालनेकूं मन लाय ।
जब ताई वांछित नहिं होय । तब ताई थिर रहे न कोय ॥
एक दिवस जीवंधर सन्त । अर्धरात्रि बीते हर्षंत ।
क्षेमश्री सूं ऐसे कही । देशांतर जाऊं मैं सही ॥
बार बार त्रिय मना करंत । हठ कर तजत नहीं निज कंत ।
मौन सहित तब रहे कुमार । कपट धार निज चित्त मझार ॥

॥ दोहा ॥

सूती त्रिया कूं जानके, अर्धरात्रि तजि संत ।
चले अकेले निकस के, घर सेती हर्षंत ॥
कुंवर गये पीछे तबै, क्षेमश्री वरनार ।
जात कंथ देखो नहीं, रोवन लगी पुकार ॥
मोको तुम बिन हे पिया, शरणा नहीं लगार ।
जैसे शशि बिन चन्द्रिका, रहे न जगत मंझार ॥

॥ चाल ॥

हो नाथ महा छबिकारी, मोहन मूरत सुखकारी ।
हा कंत कला निधि रूपी, नर उत्तम काम सरूपी ॥
मरजाद रहित गुण धारो, मुझनेत्र कमल रवि प्यारो ।
धारी शशि सम कीरति के, हो धारक बड़ी सुमति के ॥

कहाँ हो मो प्रान प्यारे, तज मोह भये क्यों न्यारे।
तुमही तिरपति के करता, इक बार बचन दो भरता॥
हाँ प्रीतम दरशन दीजे, तातें थिर हो सुख बीजे।
भरतार सहित त्रिय होई, ताकूं मानै सब कोई॥
भरतार बिना तिय ऐसी, बिन प्रभाव मणी हो जैसी।
ज्यों शशि बिन रजनी कारी, तैसे पिय बिन है नारी॥
जल बिन सरसी नहीं नीकी, तिमि पिय बिन नारी फीकी।
बिन दीपक घर अंधियारो, पिय बिन त्यों नार निहारो॥
हे नराधीश सुख दाता, तुम विरह थकी नहिं साता।
मोहि मृतक समान निहारो, तुम ज्ञाता निपुन विचारो॥

॥ सोरठा ॥

क्षेमश्री वरनारि पति वियोगतें अति दुखी।
होत भई निरधार दग्ध जेवड़ी सम मही॥

॥ दोहा ॥

जगत विसैवनितान के प्राननाथ हैं प्रान।
निश्चय कर सब ठौर में अवर नहीं सुखमान॥

॥ चौपाई ॥

उत्तम जीवक कूं तिहिवार। ढूंढन गये सुभद्र उदार।
गिरे स्वकर तें रतन महान। कौन जतन नहिं करे सुजान॥
पायो नहीं जीवक मतिवंत। तब सुभद्र चिंता सुकरंत।
पावन वस्तु जगत में कोय। ताके गये महाँ दुख होय॥

दक्षिण दिशकूं चल्यो कुमार। अपने भूषण देन विचार।
जिनके हैं विवेक वर चित्त। तिनकूं भूखन देई निमित्त॥
धर्मीजन कूं भूषण सार। दीजे इम चित्त माँहि विचार।
गेरें बीज देख शुभ थान। सहस गुणों उपजे सुख खान॥
जो सुपात्र को दीजे दान। निज पर को हित होय महान।
महिषी गो कूं दीजे तृणा। कहा दूध उपजे नहिं घणा॥
ईख नीम पर घन वर्षाय। अमृत कटुक रूप है जाय।
पात्र कुपात्र को त्यों ही दान। सुगति कुगति को दायक जान॥
पात्रन कूं दीजे धन सार। होय सकल फल को करतार।
आम बीज बोये शुभ थान। किसकूं सुख नहिं करे महान॥
कौन काज कृपणन को वित्त। निश्चय होय न दान निमित्त।
जो सागर में नीर अपार। काहू कूं नहिं देत लगार॥
काक सूम तें गुणवर धरे। पूरुष भक्षण कुल युत करे।
खाये न खरचे कृपण असार। विनसे यों ही वित्त अपार॥
कृपण पुरुष बहु धनकूं पाय। भूमि विषे पुनि देय गढ़ाय।
मर के होय भुजँग करूर। जाय कुगति विलसे दुख भूर॥
निरधन देत द्रव्य उत्कृष्ट। सबसों ऊँचो होय गरिष्ट।
उन्नत पर्वत जल मनुहार। नदियन को कहा देत न सार॥
तिय निमित्त धनतें घर भरै। सो तिय औरन तें रति करै।
यातें संतन को जग थान। कहा खेद करनो दुख खान॥
संग्रह करे द्रव्य मतिवंत। विविध भाँति कर जतन अत्यंत।

सोधन जौलों पुण्य रहाय। तौलों बिना जतन थिरताय॥
घटे पुण्य तब लक्ष्मि सदीव। रहे नहीं कर जतन अतीव।
डूबे पोत समुद्र मझार। धन रक्षा नहिं होत लगार॥
यातें सत्पुरुषन कूं सदा। देना दान हिये धर मुदा।
पात्र अपात्र तनो निरधार। करके दीजे दान उदार॥

॥ दोहा ॥

वित्त होय नहिं घर विषै, मिले पात्र तब आय।
होय प्रगट जब विपुल धन, तब नहिं पात्र मिलाय॥
विपुल वित अरु पात्र शुभ, दोनों का संयोग।
मिले बड़े संयोग तें जानो गुणधर लोग॥

॥ सोरठा ॥

धन आदिक बहु पाय होय दान में रत नहीं।
पूरी करें सु आयु पशुवत कर्मन के ठगे॥

॥ चौपाई ॥

ऐसे जीवक करत विचार। चलो जात मग माँहि उदार।
भूषण देवे की मन चाह। धरे सदा जीवक नरनाह॥
तब जीवक के निकट तुरंत। कोई इक दिन आयो मतिवंत।
भाग्यवान पुरुषन के पास। उत्तम जन आवें कर आस॥

* दोहा *

गात नवायो आवतां, सन्मुख लखो किसान।
तन धारत जीरण वसन, पूछो ताहि सुजान॥

॥ चौपाई ॥

कौन अर्थ किस थानक जाय। थिर चित है के नहीं बताय।
तासू ऐसे कहो कुमार। तब बोलो द्विज वच अतिसार॥
उदर पूरती काज कुमार। इत उत भटकत भूमि मझार।
नित्य काठ बेचो कर कष्ट। भयो कर्म को उदय निकृष्ट॥
जन्म दिवस तें साता लेश। मोह भई नहीं अहो नरेश।
अब तुम दरशन पायो सार। भयो हर्ष मो हिये अपार॥
ऐसे सुन किसान के बैन। तब बोलो जीवक वच ऐन।
हे किसान तू धर्म पवित्र। साता हेत धार शुभ चित्त॥
धर्म बिना नर कूं अवलोय। सुखदायक साता नहीं कोय।
सामग्री बिन जेम किसान। कहा धान्य पावे सुख खान॥

॥ दोहा ॥

त्रय शल्यों करके रहित, निज आत्म को साध।
अंतिम करके आपनो, निश्चय धर्म समाध॥
ताके साधन तें सधे, विमल मुक्तिवर थान।
तहाँ अनंत सुख भोगवो, अहो विप्र मतिवान॥

॥ चौपाई ॥

सो बुध स्वपर ज्ञान तें होय। निज अभ्यास करे बुध लोय।
पर कूं तजे असार निहार। लहे परम पद सो निरधार॥
अनंत चतुष्टय मई अनूप। गुन समुद्र निज आत्म स्वरूप
निश्चय उरमें जान विनीत। अपर वस्तु है सब विपरीत॥

॥ अडिल्ल ॥

दर्शन ज्ञान मई निज आतम जानिये।
देह अचेतन रूप भिन्न परमानिये॥
पुद्गल विषै महान पुरुष नहिं रुचि धरैं।
निज आतम के माँहि प्रीति निशिदिन करैं॥

॥ चौपाई ॥

देह त्याग के हेत विचार। बाहिर परिग्रह तजे असार।
सो मुनि मारग है अमलान। पालैं पुरुष महा परधान॥
मूल और उत्तर गुणसार। तो पै पलैं नहीं निरधार।
भार गयंद तनो सुन संत। गो सुत पै नहिं चले तुरंत॥
यातैं धर्म गृही को सार। गहो सनातन अति सुखकार।
निज कारज की सिद्धि निमित्त। करे योग्य कारज शुभ चित्त॥
करके तत्त्व हिये सरधान। पाले व्रत जु ग्रही अमलान।
जो परतीत बिना व्रत करे। सो अव्रत है ज्ञान न फुरे॥
पंच अणुव्रत गुणव्रत तीन। शिक्षाव्रत पुनि चउ अघ हीन।
ये द्वादसव्रत जानो सार। श्रावक के भाषे निरधार॥

* अडिल्ल *

द्विज बोलो स्वामी इह भाँति सुनो अबै।
व्रत मो देहु बताय करों मैं सो सबै॥
प्रथम अहिंसा नाम अणुव्रत सार है।
तामें त्रस जीवन की दया उदार है॥

॥ दोहा ॥

करुणा व्रत धारक पुरुष, अतीचार पन भेव ।
त्यागे मन वच काय कर, तासु करैं सुर सेव ॥

॥ चाल छन्द ॥

पशु गति में बंधन बाँधे । सो बंध दोष नर लाधे ।
जो जीव हते मन लाई । बहु घात दोष उर आई ॥
पर नाक कान कूं छेदे । सो छेद दोष को वेदे ।
पशु पै बहु भार लदाई । भारारोपण अघदाई ॥
अन्न पान जीवन को जोई । विरियाँ सिर देय न सोई ।
अन्न पान निरोध सुनामा । पँचम दोष को धामा ॥

॥ दोहा ॥

एपनदोष निवार के, पाले करुणासार ।
सो स्वर्गादिक सुखलहे, संषय नाहिंलगार ॥
दूजे व्रत को कथन अब, सुनो विप्र मन लाय ।
सत्य वचन मुखसूं कहे, हितमित जनसुखदाय ॥
अतीचार याके अबै, कहूं पंच परकार ।
सत्य अणुव्रत के जो ये, हैं विशुद्धि करतार ॥

॥ अडिल्ल ॥

प्रथम दोप मिथ्या-उपदेश प्रमानिये ।
नाम रहो-भ्याख्यान दूसरो जानिये ॥

कूटलेख किरिया न्यासा-अपहार है ।
नाम जुपंचम दोष मंत्र-साकार है ॥

॥ चौपाई ॥

आप झूठ बोले नहिं लेश । पर कूं विविध करे उपदेश ।
लोभ सहित जो करे सदैव । प्रथम दोष सो धरें अतीव ॥
नारी पुरुष की सुनकर बात । करे और सो जो विख्यात ।
दोष रहो भ्याख्यान कहाय । दूजो अघदायक अधिकाय ॥
लिखकर झूठ ठगें नर घने । कूट लेख किरिया सो भनते ।
तृतीय दोष उपजे अघावान । जाय कुगति दुख सहे महान ॥
परको बढती तोल जुलेय । घटती तोल और कूं देय ।
सो अपहार कहाय निकृष्ट । दोष चतुर्थो कह्यो अनिष्ट ॥
मरमछेद के बच दुखदाय । परसूं कहे आप सुखपाय ।
पंचम दोष मंत्र साकार । पांच दोष ये कहे असार ॥

* दोहा *

ये पुन दोष निवार के, बोलो साचे बैन ।
उत्तम पदवी तब लहो, भोगो सुख बहु ऐन ॥

* अडिल्ल *

बिन दीनों धन धान्य आदि नाही ग्रहे ।
सो अचौर्यव्रत तीजो जगके सुखलहे ॥
ता करके सुखसार लहे जगके विषै ।
लहे जीव निरधार जिनेश्वर जी अखै ॥

॥ दोहा ॥

अतीचार याके बड़े, पंच महा दुखकार ।
तिनको कछु विस्तार अब, कहों विम निरधार ॥

॥ चौपाई ॥

चोरी आप करे नहिं कदा । औरन कूं उपदेश सदा ।
स्तेन प्रयोग नाम है दोष । धारे नर सो अघको कोष ॥
धरे धरोहर तस्कर तनी । दोष तदाहृत दूजो धनी ।
राजनीति को त्याग कराय । खोटे वनज करे दुखदाय ॥
हीन अधिक जो राखे बाँट । लेय अधिक जो देवे घाट ।
राज्य विरुद्ध अतिक्रम यही । ताहि जु धारे मूरख सही ॥
भली वस्तु में हीन मिलाय । बेचत हैं अच्छे के भाव ।
हीन अधिक जानो उन्मान । चौथो दोष महा अघ खान ॥
और दिखाय और ही देय । पर नर कूं छलके धन लेय ।
प्रतिरूपक व्यवहार सुनाय । पँचम दोष महाँ दुखदाय ॥

* दोहा *

अतीचार ये पाँच तज, जो पाले व्रत सार ।
सो तीजो अणुव्रत धरे, परम शर्ण दातार ॥
निज त्रिय बिन पर जोषिता, तजै सुधी निरधार ।
अणुव्रत चौथो जानिये, ब्रह्मचर्य सुखकार ॥
अतीचार या व्रत तनें, पँच महा अघखान ।
तिनके भेद सुनो अबै, अहो विम मतिवान ॥

॥ चौपाई ॥

परको ब्याह करावे सोय। प्रथम दोष को धारक होय।
अन्य विवाह करन तिस नाम। अथ करता है दुख को धाम॥
परवनिता की इच्छा करे। अथवा विधवा सों रुचि करे।
इत्वरिका के ये दो भेद। धारे जो नर पावे खेद॥
योनि छांडि जो क्रीड़ा करे। क्रीड़ा अनंग व्यतिक्रम धरे।
अति तृष्णा कर सेवे काम। सो नर पंचम अथको धाम॥

॥ दोहा ॥

पंच दोष ये शील के, वरने जे निरधार।
जो इनकूं सेवे सदा, लहे कुगति दुखकार॥
दशविध परिग्रह को धरे, जो गिनती परिमाण।
सोई अणुव्रत पंचमो, श्री जिनदेव बखान॥
अतीचार इस व्रत तनो, कहूँ पंच परकार।
सो सुनि थिर चित लायके, अहो भव्य निरधार॥

* चौपाई *

अति वाहन अति संग्रह करे। अतिविस्मय अतिलोभ जु धरे।
भारारोपन अति पुन जान। अतीचार ये पंच बखान॥
तज प्रमाण जो मारग चले। तहाँ अति वाहन दूषण धरे।
सँग्रह अन्न जु राखे घना। सो अति सँग्रह दूषण भना॥
वनिज मांहि जो टोटो खाय। करे विषाद हिये अधिकाय।
अति विस्मय तहाँ दूषण लगे। लोभ कर्म अति हिरदै जगे॥

पाय नफा अति विस्मय करे। लोभ दोष सोई अनुसरे।
तज प्रमाण बहु लादे जहाँ। है अति मारा रोपण तहाँ॥

॥ दोहा ॥

ग्रंथ त्याग अणुव्रत तने, पँच दोष ये जान।
इन्हें त्याग जो व्रत धरे, सो नर है परधान॥
पँच अणुव्रत ये कहे, गृहि जन को हितकार।
दोष रहित पाले सदा, सो सुख भोगे सार॥
गुणव्रत तीन कहूँ, अबै ये जगमें हितकार।
जीव दया यासों पले, भवजल तारनहार॥

॥ चौपाई ॥

दश दिशि की मरजादा करे। प्रथम गुणव्रत जो नर धरे।
अनर्थ दंड तजे मन लाय। दूजो गुणव्रत सो सुखदाय॥
करे भोग उपभोग प्रमान। तीजो गुणव्रत सो अमलान।
ये ही तीन गुणव्रत सार। पोषत करुणा के निरधार॥

* सवैया ३१ *

अतीचार पन भेद, तिनको कथन अब,
सुनो मन लाय, बुध तिनको सुनीजये।
ऊरध है व्यति क्रम, दूजो अधः नाम मन,
तीजो पुनि तिर्यग् अति क्रम तजिये॥
चौथो पुनि क्षेत्र वृद्धि, दश दिशि विस्मरण,
पांचो दोष ये ही, महा भूल न लहीजिये।

परमाद वश होय, उरध की सँख्या तजै,
करे काज तिहि ठौर, दोष आदि भजिये ॥
काहू काज वस अधो तजे, अधो सँख्या तहाँ,
दूजो दोष अधो नाम तहां दुखदाई है।
चार खूंट चार दिशि, तिनकी जु मरजादा,
तजे अति लोभ कर तीजो मलठाई है ॥
लोभ प्रमाद कर, दिसा कूं बढ़ाय धरे,
चौथो मल वरे सोई, दुख ही की खाई है।
दिशा को प्रमान कर, भूल जाय शठ दुनि,
ये ही पांच अतिचार, दुर्गति की साई है ॥

॥ दोहा ॥

अतीचार ये त्याग के, दिगव्रत पाले जोय।
दया धर्म सो चित धरे, शिवपुर पावे सोय ॥

॥ चौपाई ॥

दुतिय अणुव्रत अति अभिराम। दंड अनर्थ व्रत है तसु नाम।
अनर्थ दंड इह बहु विधि घनो। पंच भेद अब याको भनो ॥
आदि कहो तहँ अघ उपदेश। दूजो हिंसादान अशेष।
तीजो भेद जु है अपध्यान। दुराचार दुश्रुत पखान ॥
बहु प्रमादवश जिनको चित्त। अनर्थ दंड ते सेवें नित्त।
हय गय आदिक तिर्यक् मांहि। क्रय विक्रय उपदेशे ताहिं ॥

अघ करता परकूं उपदेश। विविध भाँति के देत अशेष।
प्रथम भेद यह अघ की खान। अनरथ दंड तनो परवान॥
दुतिय भेद है हिंसा दान। अनर्थ दंड को कारण जान।
शक्ती खड्ग आदि बहु शस्त्र। मांगे देय जीव बहु अस्त्र॥

* दोहा *

ख्याति लाभ अभिमान कर, हिंस्य वस्तु न देय।
प्राण अंत ताईं विबुध, त्यागे अदया येहु॥
भोगादिक जो वस्तु में, राग करे मन मांहि।
सो कलेश वध बंध है, जातैं दुख उपजाँहि॥
परधन रामा हरन में, चिंता करे जु मूढ़।
अपध्यान सोई लहे, अघ आश्रव आरूढ़॥
पाप रूप कूं चिंतवन, स्वपर अहित करतार।
दुष्ट बुद्धि जे नर करे, सो कुध्यान कूं धार॥
कुगुरु कुदेव कुधर्म कर, भाषत कथा अलीक।
याकूं सुनि जो रुचि करे, सो दुश्रुत धर ठीक॥

॥ चौपाई ॥

जो प्रमाद सों कीजे काम। प्रमाद चर्या ताको नाम।
जीवघात परमादी करैं। सँग्रह अघ को तेई धरैं॥
मन वच काय तजे जो याहि। दयावंत नर कहिये ताहि।
अतीचार जो याके तजे। निर्मल व्रत कूं सोई भजे॥

॥ दोहा ॥

अनर्थ दंड तने कहूँ, दोष पँच प्रकार ।
तिनकूं तज जो व्रत करें, सो पावें सुखसार ॥

॥ चौपाई ॥

आदि दोष कंदर्प मलीन । कौत्कुच्य दूजो अघलीन ।
तृतीय दोष मौखर्य सुजान । असमीक्ष्याधिकरण पुन ठान ॥
अति प्रसाधन पँचम लेहु । अनर्थ दंड को कारी येहु ।
भंड कहे गाली जो देय । सो कंदर्प व्यतिक्रम लेय ॥
पर की हाँसी मुख सूं करे । दुतिय दोष सोई नर धरे ।
बहु बकवास करे जो कोय । मोखर्य दोष कूं धारे सोय ॥
तजि विवेक जो कारज करे । दोष चतुर्थो सोई वरे ।
भोगोपभोग की सँख्या तजे । दोष पंचमो सोई भजे ॥
अनर्थ दंड इह भांति अनेक । छांड़ो होय सुधार विवेक ।
बिना काज सिर दूषण चढ़े । दुर्गति के दुख जासूं बढ़े ॥
याकूं त्याग करें जे जीव । स्वर्गवास ते सेवें सदीव ।
तृतीय गुणव्रत अब जो कहूँ । इन्द्रियन को दम जासूं लहूँ ॥
भोग और उपभोग प्रमान । तीजो गुणव्रत सो अमलान ।
पान वसन आदिक तंबूल । शुभ आभूषण अच्छे फूल ॥
एक बार ये सुख कूं देय । पुनि विनाश को छिन में लेय ।
लोलुप इन में हूजे नहीं । इनकी सँख्या कीजे सही ॥

वाहन वसन जु नारी भने । भूषण तुरंगादि ग्रह ठने ।
बार बार सुख उपजे सही । सो उपभोग कहावे सही ॥
अतीचार याकूं निरधार । कहूं जिनागम के अनुसार ।
प्रथम विषय अनु प्रेक्षा गिने । दूजो दोष अनुस्मृति ठने ॥
अति लोलुप अति तृष्णा होय । पंचम अनुभाव जानो सोय ।
छोड विचार सुभोगे भोग । दोष प्रथम को जामें जोग ॥
भोग जु सुमरन पिछले करे । दोष अनुस्मृति सोई धरे ।
कामातुर चितमें अति रहे । सो अति लोलुप अतिक्रम वहे ॥
भावि काल के वाँछे भोग । दोष अति तृष्णा धारे भोग ।
काल अकाल गिने नहिं जोय । दोष पँचमो धारे सोय ॥
अल्प भोग जे नर अनुसरे । दोष रहित तेई व्रत धरे ।
कोट पाल तें तस्कर डरे । भव्य विषय से त्यों भय धरे ॥

सवैया २३

भोग प्रमाण करें जे विचक्षण, ते गुण सागर दोष के हारी ।
वेई लहें सुख नाक के उत्तम, टारि दई तिन दुर्गति सारी ॥
पाप महा तरु छेदन कूं, इह नेम कही अति तीक्षण आरी ।
ते शिव मारग माँहि बसे, नित जे नर तीजे गुणव्रत धारी ॥

॥ सवैया ३१ ॥

गुणव्रत कहिके जु कहिये है शिक्षाव्रत,
चारि परकार सोऊ शिक्षा रूप भासिये ।

देशावकाशिक आदि दूजो सामायिक नाम,
प्रोषधोपवास शुभ तीजो तहाँ राखिये ॥
वैयावृत चौथो तहाँ एही चार शिक्षाव्रत,
इन ही को विस्तार सुन अब आखिये ।
देश मरजादा कर रहे बुधिवंत नर,
बाहर न जाय तासूं शिक्षा आदि साखिये ॥
वन गेह नदी ग्राम जो जन गणित कर,
अदया के नाश हेत शिक्षाव्रत गहिये ।
मन वच काय कर काल की अवधि धार,
दिन पख मास आदि देश व्रत गहिये ॥
बाह्य प्रमान सुं जु तृन की न हिंसा होय,
सर्वस लोभ खोय निर्लोभ रहिये ।
त्याग के चपल पद लहियतु है थिर पद,
महाव्रत सम याहि ताहि ते जु कहिये ॥

॥ चौपाई ॥

सुनो विप्र तुम अब धर कान । पंच अति क्रम अघ की खान ।
आदि गनीजे प्रेष्य सु नाम । दूजो शब्द जु अति हो वाम ॥
और आनयन अघ को लेप । रूपाभिव्यक्त जु पुद्गल क्षेप ।
भू प्रमान कर आप न रहे । सीम परे पर प्रेषण वहे ॥
दोप आदि तहाँ प्रेषण होय । नेम समल को धारक सोय ।
देश सीम सों बाहर होय । ठाढ़ो देखे किंकर जोय ॥

अरु खंखार कर मारति करें। दोष शब्द को सोई वरे।
सीम परं इक वस्तु जु होय। किंकर पास मँगावे सोय॥
दोष आनयन ताको गने। समल रूप व्रत तामें ठने।
क्षेत्र सीम सों बाहर होय। सैनन काज बतावे सोय॥
अतीचार रूपाभिव्यक्त। होय नेम तहाँ दोषासक्त।
देश लोक सों बाहर ठाय। सेन बतावे ठाम मँगाय॥
सेवक पास करावे काम। पुद्गल क्षेप अति क्रम नाम।
पँच अति क्रम ये मैं भने। चित्त चलावत ये सब ठने॥

॥ दोहा ॥

शिक्षाव्रत दूजा कहों, सुनो विप्र मतिवान।
सामायिक है नाम तसु, पाले अही सुजान॥

* चौपाई *

सब जीवन सों समता करे। संजम भाव हिये में धरे।
आर्त रौद्र ध्यान परिहार। सो सामायिकव्रत सुखकार॥
अतीचार ये अब तुम सुनो। इनको त्याग सामायिक गुनो।
मन वच काय त्रधा ए जान। अस्मरण अनादर पंचम ठान॥
करत सामायिक दुरवच कहे। दोष वचन को सोई लहे।
ध्यान समय तिस हालै काय। काया दोष लहे तिह ठाय॥
समता तज मन विकलप भजे। चित्त व्यतिक्रम ताकूं सजे।
अनेकाग्र मन राखे जोय। स्मरण व्यति क्रम धारे सोय॥

बिन आदर सामायिक करे। दोष अनादर सोई धरे।
पँच व्यतिक्रम येही जान। धर्म ध्यान की राखे हान॥

॥ सवैया ३१ ॥

सामायिक कहके जु कहते हैं,
अब तीसरो सु शिक्षाव्रत प्रोषध के रूप है।
अष्टमी चतुर्दशी निरदोष प्रोषध,
जु धरे नर सोई महाँ सुगति को भूप है॥
प्रथम दिवस एक भुक्ति करे तिस विधि,
पारनो भी करे सोई प्रोषध अनूप है।
अशन पान व्रत के जु दिन माँहि त्यागिये,
खाद्य स्वाद्य इन आदि सब दुख कूप है॥

॥ दोहा ॥

अतीचार याके सुनो, भेद जु पंच प्रकार।
तिनकूं तजिके व्रत धरे, सो प्रोषध अविकार॥

॥ सवैया ३१ ॥

गिनिये अदृष्ट मृष्टव्युत्सर्ग आदि ही जु,
दूजो दोष संस्तर आदान तीजो जानिये।
चौथो है अनादर पुनि अस्मृत कहो पँच,
यही पाँच अतीचार हेय रूप मानिये॥
विना ही बुहारे भूमि देहमल डारे जोई,
सोई मूढ आदि दोष धारक बखानिये।

देखे बिना चीर आदि वस्तु कछु जाय गहे,
अति ही जु भूखो होय दूजा दोष ठानिये ॥
नैनन सूं देखे बिन झारे बिन निशमांहि,
रचे मूढ सांथरो जु तीजो दोष वान है।
अति भूख लागे जहाँ ध्यान पूजादिक मांहि,
करत अनादर सो आपदा की खान है ॥
प्रोषध को धरके जु चित्त को चपल कर,
काज करे गृह के सु दोषन को थान है।
पंच प्रकार के जु दोष कहे इने जोई,
शिक्षाव्रत तीसरो जु धारक सुजान है ॥

* दोहा *

प्रोषध शिक्षा तीसरी, कही जिनागम जोय।
चौथी शिक्षा दान की, कहिये है अब सोय ॥
आदि दान आहार है, दूजो औषध दान।
ज्ञान दान है तीसरो, चौथो अभय प्रमान ॥
ये गृहस्थ धारें सदा, शुभ विवेक उर आन।
दान पात्र विधि जानकर, देहु दया चित ठान ॥
पात्र भेद सुनि तीन विधि, तिनमें मुनि उत्कृष्ट।
पुनि श्रावक व्रतवंत है, तीजो सम्यग्दृष्टि ॥
सुनो विप्र अब दान के, दोष पंच प्रकार।
तिनको तजके दान शुभ, दीजे सुख करतार ॥

॥ चौपाई ॥

आदि निक्षेप सचित्त सुजान। पुनि अपिधान अनादर ठान।
चौथो मत्सर नाम बखान। कालातिक्रम पंचम जान॥
जो सचित्त पात्रादिक माँहि। राखे अन्न लगे मल ताहि।
पुनि सचित्त सों ढाके जान। दूजो दोष लगे अपिधान॥
बिन आदर जो दानहि देय। तीजो दोष अनादर लेय।
अपरदान गुण देख न सके। अपनो दान महातम बके॥
जो प्रमाद सों ढील कराय। कालातिक्रम दोष धराय।
येई पंच अतिक्रम तजे। निर्मल दान तनो फल भजे॥

॥ दोहा ॥

देय सुपात्र हि दान जो, विधि चतुर्विधि पोष।
इह भव परभव सुख लहे, क्रमसों लहे सो मोख॥
द्वादशव्रत युत जो सुधी, करे सल्लेखना मर्ण।
अंत समय व्रत सब सुफल, होय लहे जिन शर्ण॥
जीवे की वाँछा करे, मरन चहे लहि दुक्ख।
सुमरे मित्र सनेह उर, पूर्वे सुमरे सुक्ख॥
पुनि निदान बंधन करे, परभव सुख के हेत।
सो मूरख जगमें प्रगट, पँच दोष अघ लेत॥

॥ चौपाई ॥

मद्य माँस मधु निन्द्य अपार। पंच उदंबर फल अधिकार।
निशि को भोजन कीजे त्याग। नीर अगालित तजि बड़भाग॥

अदरक आदि कहे जे कंद । तजो मित्र बुध जन करि निन्द्य ।
काय अनंत जु पूर्ण गात । ये अभक्ष तजिये सब भ्रात ॥

॥ दोहा ॥

एक जीव के मरण में, विनसें जीव अनंत ।
तातें तजिये कंद सब, बचें अनंते जंतु ॥
बीज नीर संयोग तें, उपजें जीव अनंतु ।
तातें अब ये त्यागिये, अन्न अंकुरा वंत ॥
जामें जानी जाय नहिं, पोरी अरु सिर संधि ।
ऐसे तरु सो जानिये, बहु जीवन के खंध ॥
सर्षप सम जो कंद कूं, खाय अधर्मी जीव ।
बहु जीवन के अशन ते, दुर्गति बसे सदीव ॥
खाय कंद जो मूढ नर, गद नासन के हेत ।
सो भाजन है रोग के, शुभ्र कूप गति लेत ॥
ऐसे निंद जु कंद कूं, जान पूछ के खाय ।
सो निकृष्टगति कूं लहे, मोपै कही न जाय ॥
हलाहल सम जान के, करो कंद को त्याग ।
बहुत कहाँ लौ मैं कहूँ, दया धर्म कूं लाग ॥
नीम सोंजना के कुसुम, और कुसुम कचनार ।
सूक्ष्म त्रसनतें ए भरे, त्याग जु इनको सार ॥
सागपत्र अरु मूल सब, तजो जु उनको धीर ।
दयाधर्म दृढ़ता धरो, जो विनसे भवपीर ॥

बिल्व बेर जंव्रादि फल, जीवों कर भरपूर ।
दयावान इन कूं तजै, खाय सो हिंसक क्रूर ॥
पेठा भटा कलिंद अरु, बहु बीजे इन आदि ।
तजिये इनकूं अन्तलूं, यह आगम मरजाद ॥
जो अज्ञात फल देखिये, भूल न खैये ताहि ।
प्रानन कूं संशय लहे, बहु अधर्म तिसमांहि ॥
कृमि पूरित नवनीत जो, महादोष की खान ।
निन्द्यनीक जिनवर कहे, छोड़ो चतुर सुजान ॥
बिन फोरे एलाभखै, सो आमिषसी नीच ।
बिन देखो फल त्यागिये, जीव बसै इन बीच ॥
दही तक्र सबही तजो, द्वै दिनतें उपरान्त ।
बे इन्द्री उपजें सही, त्याग जोग इस भाँति ॥
बासी भोजन के विषै, त्रसकाई उत्पत्ति ।
त्यागी याके जे महाँ, पाप भीतते नित्त ॥
स्वाद गंधसों चलित जो, ऐसो अन्न जु होय ।
सोतो मदभी त्यागिये, दाता अघको सोय ॥
तजो अथानो मित्र तुम, प्रान अन्त परजंत ।
कीट फफूंदन भर रहो, खाय सु नीच असंत ॥
जिह्वा लंपटी मूढ़ नर, खाय अथानो जोय ।
कीट अमिष के असनतें, नीच जात समसोय ॥
अन्न तक्र संयोगतें, दूजे दिन त्रस होय ।

ता कारण यह त्यागिये, निन्द्यनीक है सोय ॥
ऊंटनी भेड़कूं आदिदे, इनको दूध अनिष्ट ।
त्रस काया उपजे तुरत, इनको त्याग सुइष्ट ॥
जिह्वा लंपटी मूढ़ नर, जे अभक्ष कूं खांहि ।
ते डूबें अघ भार सों, भव सागर के मांहि ॥
विष्टा सम ये जानि के, तातें तजो अभक्ष ।
दया धर्म जो अति बढ़े, सफल होय सुखअक्ष ॥
भोजन षट रस पान अरु, लेप फूल तंबोल ।
गीत नृत्य पुनि जानिये, बनिता संग कलोल ॥
स्नान आभूषण वमन अरु, आसन वाहन सेज ।
पुनि सचित्त इनके विषै, कर संख्या दिन रैन ॥
संख्या सों संतोष लहि, लहे ख्याति पूजादि ।
स्वर्ग मुक्ति पावे सही, बहु सम्पति भोगादि ॥
चक्रवर्ति कल्पेशपद, लहे एक छिनमांहि ।
तीन लोक शोभित करे, मिले तीर्थपद ताहि ॥
तातें संख्या भोग की, धरिये निज चित्तमांहि ।
नेम बिना एक घड़ी, रहिये कबहुं नांहि ॥

॥ चौपाई ॥

नेम बिना नर मूढ़ अयान । बिना नेम नर पशू समान ।
नेम बिना नर सबही खाय । लहे पाप पुनि नरकही जाय ॥
जो गृहस्थ नर धारे नेम । मुनि समान सो जानो एम ।

वंछे भोग मुनीसुर होय। महा नीच सम कहिये सोय॥
ये द्वादस व्रत पालें जोय। महाव्रती सम नर सो होय।
तातें तू गृहस्थ को धर्म। पाल विप्र जो उपजे शर्म॥
ऐसे प्रतिबोधो तब विप्र। गहो ग्रही को वृषतिन शीघ्र।
भाग उदोत होय जब महाँ। उत्तम वस्तु मिले नहिं कहाँ।
पुनि जीवक ने द्विजकूं तबै। भूषण आदिक दीने सबै॥
साधर्मी कूं दाता दान। देत तास फल होय महान।
भूषण और धर्म अमलान। पाके हर्षित भयो किसान॥
संतन के निरखे सुख महाँ। दान सहित पुनि कहनो कहा।

॥ दोहा ॥

सुर तरुवर को लाभ ही, है जगमें हितकार।
धर्म लाभ पुनि होय वर, ताको वार न पार॥
रोग हरण औषधि मिले, होत प्रमोद महान।
फेर स्वाद युत जो मिले, ताको कहा कहान॥

॥ चौपाई ॥

ब्राह्मण को कर विदा तुरंत। चलो तासु गुण उर सुमरंत।
गुन ही में रत होय महंत। जिमि सुगंध लखि भ्रमर भ्रमंत॥

॥ कवित्त २३ ॥

वनको अवगाहत जीवक जी परमोद धरैं अति ही मनमें।
कहुँ देखत सिंह अनेक पशू बहु वादर विचरैं सो वनमें॥
कहुँ देख सुसागन सार कहूँ सुनतो ध्वनि पँखिनकी तरुमें।

इम देखत कानन की महिमा भय धारत नांहि कहीं मनमें ॥
कहीं केलि करें बगुला तरु पै कहीं नाचें मोर हिये हुलसे।
कहीं हँस फिरे सरके तटपै कहिं क्रीड़ा करें सबही जल से ॥
तहँ खेदित होय सु जीवक जी किसही थल बैठ रहो अलसै।
दश हूं दिश कानन की छवि कूं सु निहारत है अपने बलसैं ॥

* दोहा *

जिनकी मति है धर्म में, तिन सबकूं जग मांहि।
पुण्य एक शरनो बड़ो, अन्य कहां कांह नांहि ॥

॥ पद्धड़ी छंद ॥

ताही सुकाल भविदत्त नाम। विद्याधर गुण गणको सुधाम।
रानी अनंत तिलका सरूप। ता युत आयो अतिधर सरूप ॥
क्रीड़ा करती भरतार संग। लख दूर थकी जीवकसु अंग।
अतिकामबाणकरचितमंझार। पीड़ित जु भई खेचरी अपार ॥

॥ सोरठा ॥

ऐसे करत विचार खेचरी मनमांही तवै।
कारज सरं न सार पति आगे मोपै अवै ॥

॥ दोहा ॥

भेजो अब भरतार कूं, कोई थान मंझार।
या संग भोगूं परम सुख, इह विधि हिये विचार ॥

॥ चौपाई ॥

लगी प्यास मोकूं अब कंत। तासूं देह तप्त अत्यन्त।
पैर धरन समरथ नहिं अबै। प्यास थकी पीड़ित वपु सबै॥
अहो नाथ मैं बैठी यहाँ। तुम जाओ उत्तम जल जहाँ।
प्यावो तोय तहाँ ते लाय। ज्यों शरीर की तप्त बुझाय॥
तिय वचतें खग मूढ़ अयान। गयो ताल लेने जल थान।
भामिनि करके जगत मंझार। कौन द्रव्य नहीं ठगे अवार॥
गई फेर जीवक के पास। धरे काम सेवन की आश।
निश्चयकरिकामिनिजगमाँहि। स्वेच्छाचार चले शक नाँहि॥
लखी अकेली सन्मुख आत। विमुख भयो जीवक विख्यात।
जिनको चित्त विरकत है सदा। तिनको रुचै नहीं तियकदा॥
अति उदास यों चित्त मझार। करत भयो तब कुमर विचार।
जे कृतज्ञ वैरागी संत। राग थान लख रुचि न करंत॥

॥ दोहा ॥

चर्म मांस मल अस्थिसूं, तिय तनो भरो असार।
बुद्धिवान ताके विषै, मोह न करैं लगार॥

॥ चौपाई ॥

लीक जूंक के भाजन केश। मूत्र गंध मल भरे अशेष।
लोचन विषै टीड बहु धरें। रेंट नासिका तें अति झरे॥
है वराटका सम तिसदंत। मल दुर्गंध सों भरे अत्यंत।
ऐसो त्रिया वदन तिस हेत। लिपटो चर्म थकी छवि देत॥

रागी नर तिय मुख को कहे । चन्द्र बिंब की उपमा यहै ।
रोग सहित हैं जिनके नैन । कहैं मीप सूं रूपो ऐन ॥
वारिज की डांडी अमलान । तासम तिय भुज कहे अमान ।
कामी मोह करे अधिकाय । ज्यों मरीचिका लख अगथाय ॥
तिया कंठ की शोभा धरैं । कुधी शंख की उपमा करैं ।
अस्थि शंख सम नर परवीन । वाम कंठ मानत उर चीन ॥
रागी तिय कुचमंडल लखे । सुधा कुंभ की उपमा अखे ।
मैं तो मानत हों उर बीच । पिंड माँस के तिये कुच नीच ॥
देख नाभि मंडल बल जीव । मन मथ सग्मी कहत सदीव ।
दीप लोय लख जेम पतँग । कनक जान दाहत निज अंग ॥
चरनन कूं लख करत बखान । रक्त कमल सम शुभते जान ।
माँस रुधिर अस्थिन कर भरे । सो वे चर्म लपेटे खरे ॥

* दोहा *

या प्रकार है जान मन, नारी देह मँझार ।
कहा सुख को हेत है, तामें मोह विचार ॥
करत प्रीत तिय तन विषै, मूढ़ विपुल सुख हेत ।
तजिये याके मोह कूं, तू है ज्ञान उपेत ॥

॥ चौपाई ॥

तिय शरीर कर मोकूं कहा । मांस अस्थिमय निंदित महा ।
मुग्ध काम सर कर जे फँसे । ते तिय गात निरख बहु ग्रसे ॥
नौनी सम पुरुषन को चित्त । पावक सम कामिनी तन मित्र ।

ता समीप को अतिशय पांय । पिघले मन नर को अधिकाय ॥
बाल तरुण अरु वृद्ध अतीव । परवनिता लख उत्तम जीव ।
पुत्री भगिनी मात समान । जानें व्रत धारक उर आन ॥
बैठे नहिं तरुण के पास । अवलोकनि करहै सुख हास ।
कहे वचन नहिं मुखविहसंत । जो जगमें उत्तम गुणवंत ॥
या प्रकार वैराग विचार । चलवे कूं पुन भयो तैयार ।
जो प्रवीन भयभीत पुमान । ते तिय लख भय धरत महान ॥
रूप धरे खेचरी तिहिवार । विरकत चित जानो सुकुमार ।
जीवक की चेष्टा अभिराम । परखत है सुभाव सों वाम ॥
कुंवर दरश तें विद्याधरी । भई काम कर आतुर खरी ।
रुचिर वस्तु को लहकर नार । धरे विकार भाव निरधार ॥

॥ दोहा ॥

जीवक के वश करन कूं, मनमें वांछा धार ।
या प्रकार वृतान्त पुनि, कहत भई खग नार ॥
वनिता जन इस जगत में, पर वचन प्रवीन ।
तुरत बुद्धि परकाश के, करे काज मति हीन ॥
महा भाग परवीन तुम, कला सहित अभिराम ।
निज सरूप कर नाथ तुम, जीत लहो है काम ॥
निज सुभाव करि गुण उदधि, सबही कूं सुख देत ।
मेरे वच सुनिये अबै, सुख करता शुभ चेत ॥

॥ पद्धरी छन्द ॥

खेचर की मैं तनुजा उदार । अति काँतिवान सुंदर अपार ।
मैं हों अनंग तिलका पुमान । तियगनमें तिलक समान जान ॥
इक दिवस अचल ऊपर नरेश । क्रीड़ा जु करों थी अति विशेष ।
कोई खग मानो लसत सार । मुझ देख भयो विह्वल अपार ॥
जब ताई मोकूं हे सुजान । हरके सु चलो सो गगन थान ।
तोंलों ताकी नारी सु आय । कर कोप होंठ डसती अघाय ॥
लखनार उदास भयो अधीर । ताके भय तें हे सुभट धीर ।
मोह छोड़ गयो बनके मँझार । किसही थल जात भयो अवार ॥
मनुषन के तिलक तनो गरीश । मो जान अकेली हे महीश ।
यातें रक्षा करिये सुजान । तुम बिनसरनो नहिं अवर जान ॥
हे नाथ धीर मोहि वर अवार । करपाणिग्रहण मेरो उदार ।
मनुषन में उत्तम तुम अतीव । मेरी रक्षा कर अब सदीव ॥

॥ दोहा ॥

खगी वचन सुनके तबै, बोलो जीवक संत ।
जिनमत को वेत्ता बड़ो, गुण गण कर शोभंत ॥
हे बाले तेरे पिता, आदिक को सु अभाव ।
यातें यह कारज हमें, उचित नहीं कर चाव ॥
मेरे तो यह नेम है, बिन दीनी पर बाल ।
वरों नहीं ऐसे कियो, व्रत नाशे दरहाल ॥

॥ चौपाई ॥

ऐसे कह जीवक शुभ चित्त । त्याग चलन को भयो पवित्र ।
लख अभेद चित खगनी जवै । भई उदास विलख कर तवै ॥
तौ लूं खेचर लेकर नीर । आवत भयो तहाँ अतिधीर ।
तहाँ नार जिन देखी नांहि । भयो उदास तवै मनमाँहि ॥
आरत युत वाणी खग चई । हे सुंदरी प्रिय तूं कित गई ।
पंचानन आदिक जिय जान । पूरित है अतिही भयवान ॥
हेशशि वदनी तो विन जान । कहा करों तिष्ठों किह थान ।
भोजन कहा करों कित शयन । का सेती भाषूं शुभ वैन ॥
पतिव्रता आदिक गुण खान । सकल त्रियनमें रतन समान ।
तो विन मोकूं सुख नहिं लेश । तू सुख की दाता सु विशेष ॥
शील रूप संपति गुणभरी । सोहि रची विधनाने खरी ।
तो समान नारी नहिं और । बोल वचन मोसों इह ठौर ॥
पुनि जीवककूं लखतिहिलयो । आरतयुत वच कहतो भयो ।
राग अंध नर लाज न करे । भलो बुरो वच कहत न डरे ॥
अहो मित्र मेरी वरनारि । पतिव्रता सो तृप्त अपार ।
ताहि थाप इस थानक वीर । ताको लेन गयो मैं नीर ॥
ताकी तृषा नाश के हेत । मैं जल ल्यायो हर्ष उपेत ।
सो मैं लखी न इस थल देव । कहाँ गई जानो नहिं भेव ॥
विद्यमान विद्या इस घरी । फुरत नहीं मोकूं अवधरी ।
उत्तम हो तुम सब में देव । भाषूं तुम्हें कहो सो एव ॥

ऐसे सुनके खग सूं धीर। हंसि के कहत भयो गंभीर।
पर कूं जो प्रति बोध करेय। सोई पुरुष महा फल लेय॥
हे भविदत्त सुनो मो वैन। तू विवेक धारत है ऐन।
वृथा हिये में आरति करे। विद्या तें सब कारज सरे॥

॥ अडिल्ल ॥

मूरख पंडित माँहि भेद इतनो परे।
एक लखे बहुभेद एक चिन्ता करे॥
गति आकार सभाग और नहिं भेद है।
हे खग ईश विचार और सब खेद है॥

॥ दोहा ॥

सहस तियन के बीच में, पतिव्रता कोई होय।
यातैं बुधजन मन विषै, विकलप करे न कोय॥

॥ चौपाई ॥

मदकर सहित सकल तिय जान। क्रोध समूह धरे अघस्थान।
अतिशय कपट धरे उर बीच। धरे सुभाव महा अति नीच॥
मद माया ईर्षा पुनि क्रोध। रोष राग पुन धरत न बोध।
मूरख मृषा अशुद्ध अपार। सकल त्रियनके अति धन सार॥
दोष सहित पापनी सदीव। पर वंचन कूं निपुन अतीव।
दया हीन घिन नेक न करे। क्रूर कपट बहु विध उर धरे॥
दूजे नर की कर लालस्य। अघकारन है निर अंकुश्य।
कैसे वांछा धरे महंत। ऐसी बात विषै नर संत॥

॥ सोरठा ॥

इस प्रकार उपदेश विद्याधर को ना रुचो।
घी पियावे वेश शांति नहीं मृग दंश है॥

* चौपाई *

दयाधार कीनो उपदेश । विद्याधर को रुचो न लेश।
ज्ञानिन में विरलो कोई संत । ताहि लगे उपदेश तुरंत॥
कहां गई तू तिय सुख दाय । ऐसे कहि बन भ्रमण कराय।
लोक विषै विद्याधर पनो । कारण मूरखता को भनो॥
कोइक थल बैठी तिय पाय । देखत चित्त भयो हर्षाय।
बैठ विमान हिये हुलसंत । गगन पंथ में चलो तुरंत॥
पुन्यवान जीवंधर संत । चलो तुरत मनमें हरषंत।
वस्तु अपूरव देख प्रमान । अचरज धारे हिये महान॥
पंथ चलत इक दिवस मंझार । भूप विपिन तहाँ लखो उदार।
सुंदर कोकिल शब्द करंत । जीवक आगम कियो भनंत॥
कुंवर विवेकी लख बनसार । अति प्रसन्न मन भयो उदार।
वस्तु अपूरव देख अतीव । उत्कंठित चित होय सदीव॥
ता बन माँहि तुत तरु एक । दीर्घ डाल फल भरे अनेक।
भले पत्र युत अति दृढ़ कंद । उन्नत सुर तरु किधों अमंद॥

* कवित्त *

तामें इक फल सार सबन सों ऊँचो जानो।
धनुधारी नर निपुन देख तिस कौतुक ठानो॥

ताके बेधन हेत वान छोड़े नर सारे ।
विधो न फल सहकार बुद्धि कर सब जन हारे ॥

॥ दोहा ॥

शक्ति रहित है जन जिको, तिनपै कार्ज उदार ।
सुगम काम कहा सिद्ध है, हिये करो सु विचार ॥

॥ चौपाई ॥

जौलूं बैठो लखे कुमार । ता तरुके फल अति मनुहार ।
जैसे शिवफल सुख कं हेत । जोगी देखत हर्ष उपेत ॥
जौलों कोई इक राज कुमार । सेवक गन लीने निज लार ।
ता तरु को फल बेधन हेत । आयो तहाँ प्रमाद उपेत ॥

❋ अडिल्ल ❋

ता फल को सु निशानो कीनो चाव सों ।
शर समूह ताहू पर छोड़त दाव सों ॥
नर प्रवीण कूं लख जैसे वनिता भले ।
दृग कटाक्ष पंकति फेंकति मनसों रले ॥
तिन सब राजकुमार मध्य कोऊ तवै ।
वेधन कूं जु समर्थ भये नाहीं जवै ॥
ज्यों वैरागी पुरुष तनो हिरदै सदा ।
भेदन को समरत्थ नहीं नारी कदा ॥

॥ चौपाई ॥

माँग लेय तिनको सुकुमार। धनुषबाण लीनो कर सार।
ताके वेधन कूं तत्काल। उद्यत होय उठो गुणमाल॥

* दोहा *

कौरव वंश आकाश में, जीवक भानु समान।
तासु वचन सुनके तबै, नृप सुत सब गुणवान॥
तामें ते सहकार को, कोई इक फल गूढ़।
दियो दिखाय सु कुमर कूं, कौतिक कर सब मूढ़॥

॥ चौपाई ॥

धनुधारी जीवंधर संत। धनुष खेंच शर छोड़ तुरंत।
गिरो सुफल भू मांही एम। पाय उदय कर तैं धन जेम॥
वान सहित फल करमें जबै। लियो उठाय सु करसों जबै।
पुण्यवान नर उद्यम करे। वाँछित काज तुरत सब सरे॥
जीवक की लख शक्ति महान। विस्मय चित्त भये मतिवान।
शक्ति धरें थे तोभी सबै। करत प्रशंसा ताकी सबै॥
निज विरतंत यथावत तबै। कहत भये जीवक सों तबै।
समरथवंत पुरुष कूं देख। करें बड़े भी विनय विशेष॥
अहो चाप विद्याधर धीर। मेरे वचन सुनो वर वीर।
तुम समान सज्जन गुणमान। जगत विषै देख्यो नहिं आन॥
याही देश विषै अभिराम। प्रगट पुरी हेमाभा नाम।
किधौ भूमि त्रिया को हार। हेम मई भूषन अतिसार॥

तुंग शालि कर बेढ़त पुरी । सुर पुर सम शोभित है खरी ।
धन कन मन जन पूरित लसे । सकल सुधी नर तामें बसे ॥
रंभा सुधा सुरनके धाम । लोक पाल बन नन्दन नाम ।
इन कैसी शोभा कूं धरै । सुर्गपुरी सूं होड़ शु करैं ॥

* रोला—छन्द *

वेदी जम्बूद्वीप तनी बलयाकृति राजे ।
तावत शाल विशाल गोल अति ही छवि छाजे ॥
ताकी छवि कूं देख निशापति नभके माँही ।
लज्जित ह्वै के भ्रमत फिरै अजहूँ शक नांही ॥

* दोहा *

सो नगरी की खातिका, को मिसकर नागेश ।
अधो लोक तें आयके, सेवत कियो विशेष ॥

॥ कुसुम लता ॥

वापी कूप सरोवर सुन्दर तिनमें शीतल नीर भरे ।
तिनके तट ऊपर अति राजत भाँति भाँति के वृक्ष हरे ॥
सघन छाँह शीतल छविधारे मारग को श्रम वेग हरे ।
मानो ए सज्जन हितकारी सब ही की मनुहार करे ॥
वा नगरीका नृपति विराजे अति बलिष्ट दृढ़ मित्र सुधी ।
विनय सहित क्षत्रियगण सेवे रिपु ताके कोई नांहि कुधी ॥
प्रभु को वचन रूप अमृत वरसाकर निज मन तृप्त कियो ।
दुखी दीन लखके नित पोषत ताकरि जगमें सुजस लियो ॥

नलिना नाम नृपति के नारी आनन पद्म समान लसै ।
नेत्र कंज दलकी छवि धारत ता लखिके शशि जोति नसै ॥
तिनके सात पुत्र अति सूरे सहस्र रश्मिको तेज हरे ।
रिपु विनाश करता बलवंते किंधो सप्तऋषि शोभ धरे ॥

॥ कवित्त ॥

प्रथम सुमित्र महान द्वितिय धन मित्र विराजे ।
पुन्यमित्र युगमित्र मित्र सुवरन छवि छाजे ॥
रतन मित्र बुधिवंत छठों सुन्दर अति सोहे ।
धर्म मित्र शुभ चित्त सातवों अति मन मोहे ॥

* दोहा *

इन सातों पुत्रनि सहित, शोभित भूप उदार ।
सप्त ऋषिन तारानकर, ज्यों शशि गगन मंझार ॥

॥ चौपाई ॥

रूप सुगुन इम धरत उदार । मित्रन युत चपकर इकसार ।
विद्या कर इम रहित प्रवीन । ज्यों मनोज्ञ तरु फल कर हीन ॥
तिनके कनक सुमाला नाम । सुता विविध गुण धरत ललाम ।
कनक वरन ताको सब गात । हमरी भगिनी है विख्यात ॥
हमें जनक ने विद्या चाप । प्रीति सहित सिखलाई आप ।
पै तुमसी विद्या हम पास । आवति नहीं अहो गुण राशि ॥

* अडिल्ल *

गुणवंतन में तुम गुणवंत गरिष्ट हो।
धनुर्वेद विद्या में पुनि सु वरिष्ठ हो॥
बलवंतन के माँहि महा बलवान हो।
रूपवंत मनुषन में काम समान हो॥

॥ चौपाई ॥

ऐसे कह नृप नंदन तेह। हठ कर लेय गये निज गेह।
पुण्यवान की जगत मँझार। कौन जु सेव करे नहिं सार॥
ताकूं देख नृपति मतिवंत। जानो यह नर बड़ो महंत।
मनुषन को परभाव महान। प्रगट दिखावत वपु अमलान॥

॥ अडिल्ल ॥

न्हवन अशन सु वसन आभूषण कर तदा।
कियो महा सन्मान कुमर को नृप मुदा॥
पुन्यवान सूं प्रीत करें सबही महा।
पुनि हो जासूं काज तास कहनो कहा॥
अरज करी भूपाल कुमर सों कर बली।
विद्या तुम पै चाप सबन सूं है भली॥
ताते हे गुणवंत हमारे सुतन कूं।
कृपा धार उर माँहि सिखावो सबन कूं॥
करी प्रार्थना भूप इसी विधि सों सबै।
तब तहां अंगीकार करी जीवक तबै॥

जो विद्या हो पास दीजिये आपसों।
किये जाचना कहा न दीजे चाव सों॥
राजकुमारन कों सुचाप विद्या भली।
कुंवर सिखावत भयो धार उर में रली॥
पर कारज के करन हार पर हित करें।
अहित काज निरधार कदाच न उर धरें॥
विद्या चाप महान और नर भी तदा।
सीखत भयो सु आप कुंवर पै कर मुदा॥
जिमि बरसे जब मेघ सकल जगमें सही।
धान थकी सोभाय कहा नहीं सब गही॥
धनुर्वेद विद्या जु यथावत् सब जवै।
पाय हर्ष उर धार भये क्षत्रिय सबै॥
पाय जगत में सार महा विद्या भली।
कौन धरे नहिं हर्ष हिये में अति रली॥
पुनि सुमित्र आदिक सातों भ्राता तदा।
विनय करी परत्यक्ष कुंवर की धर मुदा॥
विद्या जग के मांहि महा सुखकार है।
काम धेनु सम करत मनोरथ सार है॥
जानत भयो नरेश पुत्र मेरे सबै।
विद्या सीखत भये तास हर्षो जबै॥

होत पिता के पुत्र हर्ष कारन महा।
पुनि विद्या जुत होय तास कहनो कहा॥

॥ चौपाई ॥

धरा शीश निज चित्त मंझार। कियो तवै उरमाँहिं विचार।
है ये महा भाग शुभ चित्त। पर उपकार विषै रत नित्त॥

॥ दोहा ॥

यह उपकारी नर महाँ, पायो प्रत्युपकार।
कहा करों निश्चय अवै, ऐसे हिये विचार॥
विद्या के दातार की, प्रत्युपकार विशाल।
कैसी विध सों होत है, करों सु मैं तत्काल॥

॥ चौपाई ॥

प्रत्युपकार करन के हेत। सुता देऊं निज हर्ष उपेत।
कौरव वंश विषै परधान। धरत धनुष विद्या बलवान॥
सुता देन जीवक सों राय। करी प्रार्थना विनय कराय।
आदर कर बहु दीजे दान। दाता कूं यह योग्य प्रमाण॥
ब्याह निमित्त नृपके वचसार। कीने अंगीकार कुमार।
रूपवंत कन्या सूं नेह। कौन करे नहिं हर्ष धरेय॥
नृप आदर कर धर अभिलाष। विधि पूर्वक पावक की साख।
ब्याह मंगलाचार विशाल। करत भये तिनको दरहाल॥

॥ दोहा ॥

पुन्यवंत दोनों लसैं, कनक वरण मनहार ।
करत भई वनिता सवै, तिनकी शोभासार ॥

सवैया २३

कंचन के वर भूषणतैं सब भूषितगात महा मनुहार ।
हाटक अंग सुवारिज लोचन शोभ लहैं रतिसों अधिकार ॥
कंचन दान थकी जग पोषत सोहत है जगमें जिम मार ।
ऐसी तिया लहि जीवक जी रमहै नित ही उर प्रीत विथार ॥
श्री जिन भाषित धर्म अनूपम लोक विषै सुखको करतार ।
तास निरोग शरीर लहे वर रूपधरे सु वरे वरनार ॥
या भवमें बहु रिद्धि लहे परलोक विषै सुख होय अपार ।
जान इसे जिनधर्म गहो भवि वेग लहो शिवके सुखसार ॥

कनकमालालाभ वर्णनो नाम नवम परिच्छेद ।

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

दशवां परिच्छेद

॥ छप्पय ॥

पुष्पदंत मदमंत कामगज हतन सिंह वर ।
कर्म हुताशन मेघ मोहतम को जु सूर्भवर ॥
भव अर्णव को पोत पापघन पवन कहीजे ।
मदतरु प्रवल कुठार मान नग वज्र भणीजे ॥

हे नाथ देख तुम दरशवर अशुभकर्म छिनमें भगत।
दुरगति निवार भवपार कर शीस नाय नथमल नमत॥

॥ चौपाई ॥

अब आगे जीवक मतिवान। तिया कनकमाला गुणखान।
हंस गामिनी सुंदर अंग। अहनिशि सुख भोगत ता संग॥
कभी इक कोमल हांस करंत। कभी भोग सुख करत अत्यंत।
कभी धर्म की वाँछा करे। शुभ कारजमें मति अनुसरे॥
सातों साले करत सनेह। तिनकर सुख मानत गुणगेह।
प्रीति करनतें मोह महान। बड़े सनेही के सुखखान॥
बहुतकाल तहाँ थितितिनकरी। चित उदास नहीं कबहुँ धरी।
प्रिय जनमें ते करत निवास। ते कबही नही होय उदास॥
ता पुरतें चलवे को जीव। करे नही रम रहा अतीव।
बसे सुजन में बारा मास। बीते एक छिनक समतास॥

❀ कवित्त ❀

कनक वरण तन लसत कनक माला गुणवंती।
आयुध शाला गई एक दिन हर्ष धरंती॥
निज भरतार समान एक नर रूप धरे अति।
ताहि विलोकत भई निपुण यह धरत महामति॥
कियो तवै नुविचार सार अपने मन माँही।
आई मैं अब हाल छोड़ निज मंदिर साँई॥

स्वामी के सम तुल्य कौन नर है हितकारी।
यह मेरे मन भयो अबै अचरज अति भारी॥

॥ चौपाई ॥

यह जीवंधर है या और। मैं देखों हूं कौन इह ठौर।
इम विकल्प उर मांहि करंत। गई कंत के पास तुरंत॥
देख कंत तहँ विस्मयभयो। उरमें तब इह भाँति जु ठयो।
देख अपूर्व वस्तु जु कोय। अचरज चित्त कौन नहिं होय॥
मेरे स्वामी ने वररूप। धरो कहा दूजो मुभ्रनुप।
अथवा कोई इक नर यहांआय। विद्याकर यह रूप धराय॥
इम विचार करती निजनार। जीवक ने देखी तिह बार।
धरे रूप निज काम समान। तासु पूछत भयो सुजान॥
हे प्रिये कहा चित्त में धार। कौतुक कौन लखो इहबार।
मोहि जनावो चेष्टा तोय। कह मनमें वरते है सोय॥
सुनो नाथ मो वचन विशाल। आयुध शाल विषै दरहाल।
तुम समान कोई पुरुष महान। देखो अब मैं काम समान॥
सुनतमात्र जीवक तिहि बार। विस्मय चित्त भयोअधिकार।
देख तथा सुन बात अयोग्य। अचरज करत सबैही लोग॥
जीवक मन इम चिंतन करी। कहा नंद आयो इस घरी।
जहाँ बसे हितकारी कोय। तहँमनकी गतिसहजहीहोय॥
प्रथम बढ़ो उर माँही सनेह। पुनि लोचन फरकत भुज येह।
ता आगम सूचक ये सार। चेष्टा होत महा सुखकार॥

तब उठके जीवक मतिवान । तियासहितपहुँच्यो तिहिथान ।
सहज करे उत्साह महंत । भ्रात देख किम करे न संत ॥

॥ अडिल्ल ॥

लखत भयो निज भ्रात तहाँ जीवक तवै ।
उरमें विस्मय कियो हर्ष धारो सवै ॥
लखे भ्रात को प्रीत बढ़े उर में महा ।
मिले बहुत दिन माँहि तास कहनो कहा ॥
देख कुंवर को नन्द महा हर्षित भयो ।
दुख चिरकाल वियोग तनोलख तम गयो ॥
भुज पसार के मिले हर्ष सेती जवै ।
फेर परस्पर कुशल क्षेम पूंछी सवै ॥
कैसे आये नन्द कहो हितलाय के ।
पुनि मुझको यहाँ जानो किहि विधि आयके ॥
मेरे निकसन तें सुतात अरु मात ने ।
कीनो होयगो दुख बड़ो सब भ्रात ने ॥

॥ पद्धड़ी छंद ॥

पद्मा सुआदि मेरे सुभ्रात । कैसे तिष्ठत हैं कहि सुवात ।
मेरी तिय कैसे दुख करंत । इम कहो नंदसों कुंवर संत ॥
ऐसो सुन के तब नंद संत । उरमें प्रमोद धरके अत्यंत ।
जीवंधर सूं पिछली सुवात । सो कहत भयोसवही विख्यात ॥
तुमकूं सुगये पीछे कुमार । जननी सुपिता भ्राता उदार ।

दुख करत भये सबही अशेष। कहिवेको समरथ हों न लेश ॥
हे पूज्यपाद मूर्छा महान। तुम पाछैं आई मुझसुजान।
सब अंगभयोजिमि रहितजीव। दुख होतभयो मोको अतीव ॥

॥ चौपाई ॥

बोलो हे तुम भ्रात प्रवीन। मारवाह है यह अघ लीन।
मेरो भ्रात हनो इन इष्ट। हतौं याहि यह है अति है निष्ट ॥
इक भाई बोलो इहि भाय। हनूं आदि छिनमें इस जाय।
इक बोलो फाँसी गल डार। हनूं याहि यह दुष्ट अपार ॥
कोप सहित सब ठाड़े भये। खड्ग हाथ ले निकसत भये।
दुष्ट नृपति के मारन काज। वस्तर आदि सजे सब साज ॥
रण उद्यत लख चित्त उदार। गंधोत्कट बोलो तिहि बार।
अहोपुत्र तुम थिर चित्त सुनो। जीवक की चेष्टा मैं भनों ॥
जीवक जन्म भयो तिहि बार। तब मैं पूछे मुनि हितकार।
मुनिने जो भाषो विरतंत। सुत अब कहों सुनो सो संत ॥
जीवक राज करे चित लाय। मुनिपद धार सुमुक्ति जाय।
विष वेदना अग्नि असिधार। इनतें नांही मरत लगार ॥
प्रान हरण की वस्तु अतीव। तिनते मरन न होय सदीव।
कोई देव महाँ हितकार। जीवित लेय गयो तिहिवार ॥
निहचे मिल है तुमते आय। यामें कछु संदेह न थाय।
यामें नेक न संशय करो। मुनिके वचन हियेमें धरो ॥
जब जीवक आवे इह संत। तब ही राज जु देय तुरंत।

फूलत नहीं वृक्ष बिन काल । यातैं चित्त करो थिर बाल ॥
ऐसे किये तात ने मने । वचन सुधारसतैं सब सने ।
हित वाँछक जे नर जग मांहि । गुरु के वचन उलंघे नाँहि ॥
इक दिन गुण माला के गेह । गयो भ्रात मैं उर धर नेह ।
तुमरो ही आलंबन सार । धारत है निज चित्त मंझार ॥
मोहि देख गुणमाला बाल । रोई लुंचे केश विशाल ।
जगत माँहि हितकारी देख । करै मोह उरमाँहि विशेष ॥
शोक अग्नि कर तपत शरीर । शोकित तन है उदास अधीर ।
बोली नन्द तुम्हारो भ्रात । कहां गयो जानत सब बात ॥
ता बिन प्राण धरूं नहिं कोय । सुनो पुत्र तुम थिरचित होय ।
जिहि विध प्राण रहैं मुझमार । सोई करो उपाय अबार ॥
गंधोत्कट भाषै शुभ वैन । कहैं सुगुण माला सूं ऐन ।
ता करि धीरज दे गुणवंत । निकसो ताके स्वरतैं संत ॥

* कवित्त *

गंधर्व दत्ता नारि प्रेम पूरित छविकारी ।
मो भ्राता की त्रिया रूपवन्ती अति प्यारी ॥
पति वियोग तैं कैसे तिष्ठत है निज घर में ।
जानत है विरतंत सकल त्रिया कर मन में ॥
है जीवक उरमें विचार कीनो सुखकारी ।
ताके घर में विषै जान कूं बुद्धि विचारी ॥

इष्ट कार्य की सिद्धि होनहारी जब होई।
तब तैसी ही बुद्धि होय संशय नहिं कोई॥

* चौपाई *

तब गंधर्व दत्ता के गेह। गयो अहो स्वामी धर नेह।
विद्या करके अति सोभाय। मोह देख तिन विनय कराय॥
किंचित् चित् उदास खेचरी। सब सिंगार किये सुंदरी।
मुख तंबूल कर शोभित लाल। विकसितदृगनीरज सुविशाल॥
हंस हंस कहत सखिन सूं बैन। सुंदर वसन धरत तन ऐन।
ऐसे लखि के भ्रात महान। पूंछत भयो ताहि हित आन॥
पतिव्रता नारी जे कोय। कंथ रहित जे जगमें होय।
ते सुख कहाँ वांछें अवसार। हे प्रभावनी हिये विचार॥
जान नंद के उर की बात। खेचरी तब बोली अवदात।
बड़ो भ्रात तेरो निरधार। सुख सूं तिष्ठे पुत्र अवार॥
हम सब कंत बिना सुन संत। पाप जोग तें दुखित अत्यंत
पाप उदय निश्चय जग जीव। लहे इष्ट को विरह सदीव॥
रहित उपद्रव जीवक सन्त। तें किम जानों कहि विरतंत।
अहो पुत्र आगे मुझ तात। रूपाचल गिरिवर अवदात॥
तिन पूंछो मुनि सूं इम जाय। मोहि सुता को वर सुखदाय।
कौन होय इस जगत मंझार। बोले मुनि सुन भूप उदार॥
गंधर्व दत्ता विद्या कर वाल। जो जीतेगो बुद्ध विशाल।
सो वर उत्तम होसी जान। चर्म शरीरी नर परधान॥

कर वृत्तान्त यह आदि सुचेत। निज स्वामी के देखन हेत।
विद्या अवलोकनी तुरंत। मैं भेजी सुनि पुत्र महन्त॥
ग्राम ग्राम प्रति थान सुथान। देश देश में नर परधान।
निज कन्या दे विनय करंत। ऐसे भूमि विषै विचरन्त॥
अब है हेम पुरी सुमंझार। देख कुंमर को विद्यासार।
आई मेरे पास तुरन्त। कही सकल मोसूं विरतंत॥

॥ दोहा ॥

निज परदेश विषैं लहे, पुण्यवान नरसार।
भाग हीन सम्पति विषै, लहै विपति निरधार॥

॥ चौपाई ॥

भ्रात लखन की वांछा सार। जो तेरे सुत होय अबार।
तो विद्याबल तें अब सन्त। लेख सहित भेजो मतिवंत॥
इम कह पत्र सहित तिहिंवार। सुलायो मोहे पलंग मंझार।
तिह मोकूं हे प्रभु तुम पास। भेजो निज विद्या परकाश॥
बांच कुंमर ने पत्र तुरन्त। गुणमाला को लिखो वृतंत।
चतुर पुरुष बांचत ही लेख। निज कारज जानो सु विशेष॥

॥ दोहा ॥

खग कन्या के पत्रवर, जीवंधर सुकुमार।
ऐसी विधि बाँचत भयो, प्रेम हर्ष उर धार॥

॥ चौपाई ॥

स्वस्ति श्री बहु उपमा जोग। हेमपुरी राजत सुमनोग।
विराज मान जीवक सुकुमार। विजया सुन्दर सोमनुहार॥
राजपुरी तें लिख अभिराम। गंधर्वदत्ता करत प्रणाम।
विनती मेरी अहो नरेश। तुम प्रसाद हम सुक्ख अशेष॥
तुम दर्शन की वांछा नित्य। अहनिशि वरते है मुझ नित्य।
दर्शन दान देह मुझ आस। अब पूरण कीजे गुणरास॥
तुम दर्शन बिन सब परिवार। महा दुखित अब है भरतार।
स्वामी अरि हत दरश तुरंत। देहु हर्ष सब लहे अत्यंत॥
चिरजीवो नन्दो सुकुमार। अरि समूह जीतो निरधार।
तुम माता इन आदि अशीस। देत तुम्हें नित अहो महीश॥
तुम वियोग तें दुखित नरेश। सदा रहित हैं मात विशेष।
तुम दर्शन की वांछा धरे। तुमरे गुण नित सुमरण करे॥

॥ नाराच छन्द ॥

सिताब कन्त आइये। प्रमोद कूं बढ़ाइये।
वियोग को घटाइये। सनेह कूं बढ़ाइये॥

* दोहा *

जान पत्र के भेद कूं, देखत भयो सुजान।
प्रबल शत्रु चलि जीतिये, इम वांछा चित ठान॥

॥ चौपाई ॥

प्रिया शोक कूं आन कुमार । आप सोच कीनो न लगार ।
शोक आदि कारण है जहाँ । ज्ञानी करे न रंचक तहाँ ॥

॥ दोहा ॥

अहो जान सुनंद के, नृप आदिक सब आय ।
कियो तास सनमान, बहु हर्ष हिये परसाय ॥

॥ चौपाई ॥

इह तो कथन रहो इह ठाँहि । नंद गये पीछे घर माँहि ।
भाई पद्म आदिक सबै । नंद विरह दुखित भये तबै ॥
चितमें भ्राता करत विचार । कहाँ गयो अब नंद उदार ।
बिना कहे बाँधव उठ जाय । किसे हर्ष होय अधिकाय ॥
व्योमचरी सूं सब विरतंत । पूछें हम अब जाय तुरंत ।
विद्या को तिन पायो पार । इम विचार तब गये कुमार ॥
हे गंधर्व दत्ता सुन बात । नंद कहाँ जु गयो हम भ्रात ।
कौन थान तिष्ठै वह सही । जानत हो के थानक नहीं ॥
विद्या धरी कहो परकाश । गयो नंद निज भ्राता पास ।
विद्या बल तें जान वृतंत । तासों मैं भेजों मतिवंत ॥
तासों जान सकल विरतंत । चढ़ चल वाहन चले तुरँत ।
सँबोधी पुनि सब परिवार । हर्षित भई कुँवर की नार ॥
चलत चलत दँडक बन पेख । तपै तापसी तहाँ अशेष ।
तिनको आश्रम है जु सुचेत । गये सकल श्रम नाशन हेत ॥

॥ पद्धरी छन्द ॥

कीनो जु स्नान सब मिल कुमार । नवकार मंत्र ते जपत सार ।
पुनि अशन पान कीनो विशेष । भ्राता सों नेह धरे अशेष ॥
रमणीक विपिन के सकल थान । तहँ भ्रमत भये उर हर्षमान ।
लख तापसीन को थान सार । थितिकरत भयेसबही कुमार ॥
सब को सरूप वयसम निहार । तिनसूं बोली विजया सुनार ।
आये कितते कित जाहु नन्द । क्योंथितिकीनीउरधर अनंद ॥
सुनके विजया के वचन सार । विस्मय सब करतभये कुमार ।
प्रत्युत्तर देवे को तुरन्त । करते सुभये आरंभ सन्त ॥
वरयुत सनेह पूंछत वृतन्त । ताहु को उत्तर देत सन्त ।
पूछे सुबात उर प्रीति वान । दीजे उत्तर बहु हर्ष जान ॥
हे मात राजपुर के मँझार । जीवक कुमार शोभित उदार ।
वैश्यन को पति सोहै गरीश । गुण धरत विविधि सुंदर सुधीश
ताके हम सेवक हैं महान । सबही विद्या में निपुण जान ।
ताके जीवन तें हम सदीव । जीवित सुखसों वरतें अतीव ॥
काहू के कहवे करमात । भारवाह कोपो विख्यात ।
पाप रहित जीवक सुकुमार । तास हनन कूं भयो त्यार ॥
इम सुनके विजया सुंदरी । परी भूमि मांहि तिही घरी ।
हा सुत ऐसे वचन उचार । मूर्छित भई मृतक उनहार ॥
पुनि सचेत है मृगलोचनी । करत विलाप चित्त अनमनी ।
भारवाह भूपति ने सही । ताहि हनो अथवा कै नहीं ॥

* दोहा *

जा वृष ने रक्षा करी, प्रेत सुविपिन मंझार।
सो तुव पुण्य कहाँ गयो, हे सुत रविदुति धार ॥

* चौपाई *

देवी दीर्घ उसास भरंत। अति विलाप कर रुदन करंत।
झरे दृगनसूं आंसू अपार। जिमि बरसे घनसे जलधार ॥
तपसिन को रोवती निहार। करत भये सब मनै कुमार।
मत रोवै जीवक नहिं मरो। बहुत पुन्य को भाजनखरो ॥
काहू सुरने हरो कुमार। भ्रमन करत बहु देश मंझार।
हेमापुरी विषै अब संत। तिष्ठत है नृप सेव करंत ॥
ऐसे वचन सुधाकर पान। सुखित भई बिजया दुखभान।
तब बोले सब ही जु कुमार। हे माता तूं को निरधार ॥

॥ दोहा ॥

जीवक सूं सम्बन्ध अब, कहा तिहारो मात।
सो हमसों भाषो अबै, जासौं भ्रम न रहात ॥

॥ चौपाई ॥

सत्यंधर नृप की मैं बाम। विजया देवी मेरो नाम।
मो सुत जीवंधर गुणवंत। पालो गंधोत्कट ने संत ॥
सुनो सकल सुत मेरी बात। धरनी तिलक नगर विख्यात।
तहाँ नृपति गोविन्द महान। मो भ्राता मानत नृप आन ॥

॥ अडिल्ल ॥

ऐसे सुनकर निज माता जानत भये ।
ताके दोउ चरनन कूं सब ही नये ॥
जीवक के ढिग जाने को माता कने ।
सीख माँग के चले सकल हितसूं सने ॥
जो लों मगमें चले शीघ्र ही सब तदा ।
हेमापुरी निहार निकट पहुंचे तदा ॥
तौ लों गोधन सकल चोर हर ले गये ।
ताको करो उपाय जु सब नृप पै गये ॥

॥ दोहा ॥

ग्वालन के वच सुनत ही, कोप कियो भूपाल ।
तस्कर दुष्ट महा अबै, मैं जीतों दरहाल ॥
शक्ति क्रांत भुजबल धरे, जो नर जगत मंझार ।
कहा कोप नाँही करे, दुष्टन कूं जु निहार ॥

॥ चौपाई ॥

नृपगन कर सेवित भूपार । चलो सेन चौविधि ले लार ।
कष्ट देख रक्षा नहिं करे । तो जगजन थिति कैसे धरे ॥
क्षत्रिय रणभेरी सुन तदा । कैयक घोड़न पै चढ़ मुदा ।
कैयक दंती पै असवार । चले सूर लेकर हथियार ॥
कैयक बखतर पहिर शरीर । सहित उछाह चढ़े नर धीर ।
कैयक धनुष बान ले हाथ । चले शीघ्र स्वामी के साथ ॥

ऐसे रण को उत्सव भाल। कुंवर सुनन्द सहित उठहाल।
रोकत भयो सुसुर तिहिवार। तोभी वेग चलो सुकुमार॥

॥ अडिल्ल ॥

जीवक के हितकार धनुषधारी सबै।
धनुष बाण ले हाथ शीघ्र चाले तबै॥
शक्ति रहित जो होय पराभवता सहे।
महाबली अपमान देख कैसे रहे॥

* कवित्त *

पुरकी गली मझार पद्मा भ्रातादिक प्यारे।
नृप जीवक की सेन विषै प्रापत भये सारे॥
देख परस्पर तबै भये संतोषित भाई।
चतुर पुरुष लख बंधु प्रीति धारै जु सवाई॥

॥ चौपाई ॥

जीवक के पीछे सु निहार। नृपने विस्मय करो अपार।
हर्ष धरो उर माँहि विशेष। जैसे कंज निहार दिनेश॥
अरि समूह कूं जीत तुरंत। निज मंदिर आये हरषंत।
जीते हर्ष धरे नहिं कोय। बंधु मिले तें अधिको होय॥
बैठ एकान्त विषै सुकुमार। पूंछी भ्रातन सों तिहिवार।
तात मात नृप मंत्री तनो। कथन तियन आदिक तिन भनो
कहत भयो पद्मास्य महान। भाग्वाह को विभव महान।
तुम बियोग तें जननी तात। तिया आदि सब दुख विख्यात

गंधर्वदत्ता अति गुण राश । तिन हमकूं भेजे तुम पास ।
मगमें दंडक बन इक जहाँ । निज इच्छा कर आये तहाँ ॥
तहाँ तपस्विन को इक थान । तपैं तपस्वी तहाँ सु भान ।
पुण्य कर्म जब प्रगटे आय । इष्ट थान तब देखो जाय ॥
अति पवित्र माता अवदात । तप करती देखी तिहि भ्रात ।
तुम वियोग तें दग्ध शरीर । धरै मलीन अंग में चीर ॥
माता को दुखित सुन संत । उरमें खेदित भयो अत्यंत ।
होत नरन के स्नेह अतीव । जननी सूं जग मांहि सदीव ॥
जननी देखन कूं तत्काल । मन उत्कंठित भयो विशाल ।
देखी तथा न देखी मात । नाम मात सुन सब हर्षात ॥
नीतवान सुंदर मुझ मात । अशरण बनमें अति दुख पात ।
पुत्र सिंह बैठे सिंहनी । कहा कष्ट भुगते दुख सनी ॥

* दोहा *

सत्पंधर कूं आदि दे, पिछलो सब विरतंत ।
कहो जाय तब सुसर कूं, जीवक ने हरषंत ॥

॥ चौपाई ॥

सुसुर आदि सुनके यह बात । राजपुत्र जानो अवदात ।
अंतरँग धर हर्ष अशेष । करी कुंवर सों प्रीति विशेष ॥
दृढ़ सुमित्र आदिक तिहिवार । कहे कुंवर सेती वच सार ।
तेरे राज लेन के हेत । चलें तिहारे साथ सुचेत ॥
तिन सबको सत्कार महान । करिके मनै किये मतिवान ।

राज लेन को करै उपाय। तब तुमकूं हम लेय बुलाय ॥
प्रानन सों प्यारी निज नार। तासों कहत भयो सुकुमार।
तिय उल्लंघ कारज मतिवंत। करे नहीं जग माँहि तुरंत ॥

॥ दोहा ॥

चलो राजपुर को तुरत, संग लिये सब भ्रात।
मनमें उत्कंठित भयो, नैन लखो निज मात ॥

॥ पद्धड़ी छंद ॥

अनुक्रमतें दंडक बन निहार। जो सरनो तपसिन को उदार।
ताके जु विषै जीवक नरेश। भ्रातन युत शीघ्र कियो प्रवेश॥
तिह थान तिष्ठती लख सु मात। अति प्रेम बढ़ो नहिं अंग मात।
बिन तत्वज्ञान उपजत सदीव। रागादिक प्राणिन कूं अतीव॥
माता के युगपद कूं विलोक। निज शीस नाय दीनी सु धोक।
धारक विवेक जे नर उदार। ते करें काज अवसर निहार॥
सुतसूं आलिंगन कर उदार। पुनि मस्तक चूमो हर्ष धार।
कर प्रबल मोह बैठाय अंक। तज शोक भई माता निशंक॥
माता के युग कुच कुंभ तुंग। तिनतैं पय खिरत भयो अभंग।
ताकर जीवकको न्हवन होत। जैसे गिरि पै बरसत उद्योत॥
जन्मत ही प्रेत सुवन मंझार। तो कूं मैं छोड़ो हे कुमार।
बैरी नृप के आगे कुमार। कैसे तू वृद्ध भयो अवार॥
तेरे सु देखवे ते कुमार। आई सब अवनी कर मंझार।
तेरे प्रताप तें अहो नंद। बैरिनको नासो सकल कंद॥

कर कंज थकी सुतकी सुदेह । सपरश करती उर धरत नेह ।
दृग वारिजकर विजयासुमात । निरषत सु रूप नाहीं अघात ॥
हे पुत्र पिता को पद महान । पृथ्वी को ईश्वर पनो जान ।
अरिगणकोक्षय करके विनीत । कब राज उदै हूहै पुनीत ॥

॥ चौपाई ॥

सामग्री बिन काज उदार । कहा होयगो सुत निरधार ।
तातें दुर्लभ है यह काज । महा कष्ट तें आवे राज ॥
अहोमात तुम हो गुण भौन । कारज बहुत कहनतें कौन ।
तेरो सुत जो वांछा धरे । सोई कारज छिन में करे ॥
खेद करन तें कारज कहा । पुरुषविदग्धन को बल महां ।
कारज परे तब ही विस्तरे । निज परशंसा मूरख करे ॥
सुत सुवचन इम मानत भई । सकल धरा मुझ करमें ठई ।
यामें नहीं संदेह लगार । सुत बल धारत है निरधार ॥
पुन स्नान भोजन कर पान । कर विश्राम सकल सुखमान ।
गूढ़ मंत्र करवे कूं संत । सब ही तत्पर भये तुरंत ॥
माता मंत्री सहित कुमार । मंत्र विचारत भयो उदार ।
कारज के वेत्ता गुणखान । कारज करें विचार महान ॥
कष्ट विषै अपनो बल तोल । करे काज मन कर सु अडोल ।
तो शुभफल साधै सु अतीव । निश्चय जगमें करत सदीव ॥
भूपन को मारग यह सही । करे विश्वास बंधु को नहीं ।
निज त्रिय शत्रुभाव अनुसरे । पर विश्वास भूप कित करे ॥

करे पक्ष बल पहिलो भूप। पीछे अरि जीते बहिरूप।
ऐसे किये नृपति को सिद्धि। कीरति होय मिले बहुरिद्धि॥
हित वाँछक निज न दे सार। माननीक हो जगत मंझार।
धन करके परजन छिन माँहि। होय मित्र अपनो शक नाहिं॥
अपने पक्ष बिना अवलोय। किंचित कारज कभी न होय।
यातें निज सहाय के हेत। करे जतन प्राणी शुभ चेत॥

❀ अडिल्ल ❀

यातें हे सुत अबै आपनो करन कूं।
फेर काष्ठअंगार भूप के हतन कूं॥
भूपति गोविंद नाम बली है तेरा मामा।
ताके घर तुम चलो वेग अब ही गुण धामा॥

॥ चौपाई ॥

मात वचन सुनके सुख पात। माम धाम जावे कूं भ्रात।
सब उत्कंठित भये तुरंत। अंबा बच नहीं लंघें संत॥
तब पुनि जीवंधर सुकुमार। तपसिन के ढिगतें तिहिवार।
जननी हितकारी सब भ्रात। तिन युत चलो सुधी हर्षात॥
अनुक्रम तें जीवक मतिवान। गये राजपुर निकट महान।
ताके विपिन विषै थित भयो। अति प्रमोद उर मांही ठयो॥
चितमें भाव धरो सुकुमार। राजपुरी देखी मनुहार।
अपनी वस्तु देखते संत। कौन उछाह करे न तुरंत॥
पीछे मित्रन कूं तिहि थाप। गयो फेर पुर माँही आप।

जैसे इन्द्र करे सु प्रवेश। अमरावती पुरी लख वेश ॥
एकाकी जीवक मतिवान। पुरकी चहुँ ओर सुख मान।
विचरत लीला पूर्व स्वच्छन्द। देखत शोभ चले गतिमंद ॥
पुर की शोभा देख अत्यंत। तृप्त भयो जीवंधर संत।
जासें राग धरें जगजीव। तासों मोह करे जु अतीव ॥
ताही पुर में सागर दत्त। सेठ बसे ताके बहु वित्त।
कमलावती जासु धर नार। जैनधर्म पाले सुखकार ॥
तिनके विमला नामा सुता। आनन विमल लसै गुण युता।
जाको मनमुनि सम अमलान। रत्न स्वरूप धरे सु महान ॥

❀ कवित्त ❀

सिरकी अलकें अति ही झलकें शुभ स्याम घना बरसे नभमें।
लख रूप सुरी सुलजी अति ही अजहूँ न लगे पलके हगमें ॥
सुनके बच कोकिल श्याम भई कुच कुंभ लसै युगहू तटमें।
सरसी सम नाभि धरें गहरी कटि केहरि की सु लसै तनमें ॥

॥ दोहा ॥

कलप साखवत भुज लषै, कर कोमल मनुहार।
कदली सम है जंघ युग, चरन अरुण छवि धार ॥
दिवस एक निज महल पै, लिये सखी जन सँग।
विमला कंदुक केलि वर, करे जु हर्षित अंग ॥

॥ चौपाई ॥

क्रीड़ा करत गेंद मनुहार । पड़ी महल तें भूमि मझार ।
किधो गेंद मिस लक्ष्मी आय । जीवक पद पर्शन उमगाय ॥
गिरती गेंद लखी सुकुमार । ऊँचो मुख कीनो तिहिवार ।
तरुण मनोहर कन्या देख । तासों मोहित भयो विशेष ॥

॥ पद्धरी छन्द ॥

यह देव किधौंशशि खगमहीश । अथवा सूरज कै है फणीश ।
कै कामदेव आयो विख्यात । ऐसे वितर्क कन्या करात ॥
लीनी उठाय कंदुक कुमार । वर कनक तारतें ग्रही सार ।
कन्या की चेरी कुमर पास । माँगी सुगेंद तिन वच प्रकाश ॥
ता औसर सागरदत्त सेठ । आयो जीवंधर के सुहेठ ।
रमनीक भाव वर रूप देख । उरमें विस्मय कीनो विशेष ॥
ताको आदर कर सेठ संत । लायो अपने घरमें तुरंत ।
चिरकाल धरे जाकी सु आस । सोई जु मिलै तब है हुलास ॥

॥ चौपाई ॥

महा भाग मेरे सुन वैन । विमला कन्या है मुझ ऐन ।
कमला सूं उपजी निरधार । गुणगण मंडित शुभ आकार ॥
पूछो हम निमिती इक संत । होय कौन कन्या को कंत ।
विकै रतन की राशि महान । जाके आये सो पति जान ॥
तुम आये तें हे महाराज । विके रत्न हमरे बहु आज ।
भागवंत नर आवे जबै । कहा रिद्धि पावै नहिं सबै ॥

निमिती ने भाषे जे बैन। महा भाग सोहे सब ऐन।
तुम उत्तम नर हो गुणवंत। यातें विमला परणो संत॥
ऐसे हठ तें जीवक संत। सेठ वचन मानों मतिवंत।
पुन्यवंत वाँछा जो करे। सो कारज छिनमें अनुसरे॥
उदधिदत्त ने तब तत्काल। कियो विवाह उछाह विशाल।
विधि पूर्वक जीवक सुकुमार। विमला परनी रति मनुहार॥

॥ सोरठा ॥

रम्भा सम वर नार पाय कुमर भोगत भयो।
सुख नाना परकार भोगे पुन्य प्रताप तें॥

* एला छन्द *

एकाकी सुकुमार फिरे हो पुरी मझारा।
सुजन नहीं इक संग धर्म ही थो तिसलारा॥
ताही धर्म प्रभाव बरी रति सम तिन नारी।
ऐसी भविजन जान धर्म सेवो सुखकारी॥

सवैया ३१

शिवपुर जायवे कूं धर्म सरल मग,
वशीकरण मंत्र वर मुक्ति रमणि कूं।
वाँछित सुखदेवे को धर्म ही कल्पतरु,
सींचवे कूं मेघसम रोग की अगनि कूं॥
कामधेनु चिन्तामणि धर्म सूं अधिक,
नाँहि धर्म है परमनिधि आकर गुणन कूं।

पापअरि खंडवे कूं वज्रसम धर्म जान,

हरिवे कूं हरि सम अक्ष से गजन कूं ॥

विमला लाभ वर्णनो नाम दशम परिच्छेद ।

* अथ ११ वाँ परिच्छेद *

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

* दोहा *

शीतल शीतलता करो, शीतल गुण परकाश ।

कर्म महा तरु तुम दहो, जिमि हिमकर दुखराश ॥

सवैया ३१

शीतल सुभाव धर शीतल ही बैन कर,

भ्रम तप नाशक जो शिवपद थान है ।

धर्म जल वरषा कर मेट भवदाह सब,

पाप ताप नाशिवे कूं शशिको विमान है ॥

कुगति को नाश करे सेवत सुकति धरे,

कोपज्वर नाशिवे कूं अमृत का पान है ।

ऐसे जिन शीतल के चरण कमल पूजो,

अघतम भेदन कूं मंडल सुभान है ॥

॥ चौपाई ॥

विमला सहित कछू इक काल । भोगे भोग कुमर गुणमाल ।
तासूं अपनो सब बिरतन्त । कहके चल्यो तहां तें सन्त ॥
गयो तुरत मित्रन के पास । विकसितवदन विविध गुणराश
ज्ञानवान को मन अविकार । करै न काहू कर निरधार ॥
सब भ्राता उठके तत्काल । जीवक कूं नावैं निज भाल ।
विकसित नैन प्रफुल्लित गात । हर्षित चित्त भये अवदात ॥
कंकन आदिक चिन्ह निहार । भ्रात सकल हर्षे तिहिवार ।
वांछित वस्तु मिले जब आय । प्राणी करे प्रमोद सिवाय ॥

॥ दोहा ॥

तब सब ही भ्रातान सों, विमला को विरतंत ।
कोई इक जन कहतो भयो, उर में हर्ष करँत ॥

॥ चौपाई ॥

बुध सेन कोई नर तदा । कहत भयो ऐसी विधिमुदा ।
घर धर निज फिर कारज करे । दीन पनो सोई अनुसरे ॥

* अडिल *

बुद्धसेन इम कहत भयो फिर के तबै ।
सुनो वचन मुझसार अहो सज्जन सबै ॥
विमला व्याह सो जोग तरुण सुंदर महाँ ।
दई गात परनाय कहो अचरज कहा ॥

कन्या सुर मँजरी सुरी सम है परा।
जगत विषै परसिद्ध रूप धारै वरा॥
काहू नर को रूप लखे नाहीं कदा।
पुरुष नाम नहिं सुने रहे घर में मुदा॥
पुनि ताकी वर सखी तास आगे सही।
पुरुष नाम मुखतैं जु कदा कादे नहीं॥
क्रीड़ा करत विलास विविध घरके विषै।
अति प्रवीण बहु सखीं सहित ताके नखै॥
परने जो वह बाल जाय जीवक भली।
तो जानो यह भागवान जगमें बली॥
और भांति नहीं कहूं सुबुधि धारी अबै।
अल्परूप युत धरत नार जो भी सबै॥

॥ चौपाई ॥

बुद्धसेन के सुन वच संत। हसत भयो जीवक गुणवंत।
दुर आग्रह कारज निरधार। सो छल कारन तैं हैंसार॥
पुनि बोलो जीवक मतिवंत। सुनो वचन सब ही तुमसंत।
ताकूं करो अबै बरा जाय। इम कह कुमर उठो उमगाय॥

रोड़क—छन्द

जक्षदेव ने दई पूर्व विद्या सुखकारी।
रूपपरावर्तिनी कुमर उर मांहि विचारी॥

वाँछित कारज सिद्ध हेत जगजन जग माँही।
करे अनेक उपाय सुधी संशय कछु नाँही॥

* चौपाई *

उर में कौख कियो विचार। कैसे बश कीजे वह नार।
वृद्ध रूप धारे बिन सही। और भांति बश है वह नहीं॥

॥ दोहा ॥

वृद्धरूप बिन तासु घर, मेरो गमन न होय।
बालक अरु बहु वृद्ध पै, दया करे सब लोय॥

॥ अडिल्ल ॥

यक्षदेव को दियो मंत्र सुमरो जबै।
हो गयो वृद्धरूप छिनक माँही जबै॥
विद्या अति उत्कृष्ट जगत में नरन कूं।
सिद्ध कहा नहिं होय सु कारज करन कूं॥

चाल—छन्द

वृद्धरूप सु इह विधि धर के। विचरत पुर में छल करके।
या को निरधार सुउर में। करने समरथ नहिं पुर में॥
लख रूप सुधी जन सारे। विषयन तें भये जु न्यारे।
लख वृद्धरूप जग माँही। विरकत क्यों होय सुनांही॥

॥ चौपाई ॥

ताके तनकी त्वचा असार। माखी पंख समान निहार।
संतन कूं मानो इम कहे। वृद्धपने लावण्य न रहे॥

नासा ताकी झरत अपार। किधों नरनसूं कहत पुकार।
जगत विषै थित हैं जे जीव। तिनकूं वय इम गलत सदीव॥
युग दृग ताके भ्रमत अत्यंत। जग जनकूं मनो एम भनंत।
सुत कलित्र मित्रादिक आदि। सकल अथिर इनतें रुचि वादि॥
लार शिथिल मुखतें बहु बहे। मोही जनसों मनु इम कहे।
जगमें जे हैं भोग महान। सो सब अथिर महादुख खान॥
स्वेत केश मिस वृद्ध सुगूढ़। कहत एम जग जन सब मूढ़।
विभ्रम युत मति धरे अथाहि। लख पर वस्तु करे उत्साह॥
डिगते चरण धरे अधिकाय। किधौं जगतकूं अथिर बताय।
निकस्यो कूब अधो मुख रहे। जग को नीची गति मनु कहे॥
पुरजन कूं वितर्क उपजात। नगर विषै सो भ्रमण करात।
नर प्रवीण लख होय उदास। मूरख देख करें बहु हास॥

* दोहा *

लिये लष्टि निज हाथ में, कंपित सकल शरीर।
भ्रमत फिरे घर २ विषै, धरत नहीं मन धीर॥

॥ चौपाई ॥

ऐसे सबको अथिर कहंत। भ्रमत भ्रमत अति खेद धरंत।
देव मंजरी को लख गेह। वृद्ध गयो छिनमें धर नेह॥

॥ अडिल्ल ॥

करन लगे परवेश गेह माँही जबै।
द्वार पालनी नार देख तासं तबै॥

बोली आदर सहित वृद्ध तुम आय के।
आये क्यों इस थान कहो समुझाय कै॥
मेरो आगम सुनो कहों साची अबै।
कन्या देखन कूं आयो निश्चय अबै॥
अरु निज आतम हित धार उर के विषै।
आयो हों इस थान अहो तुमरे नखै॥

॥ चौपाई ॥

वृद्ध वचन सुनके सब नारि। मिलके हसत भई तिहिवार।
वचन अपूरव सुनके कहा। हास करे नाहीं नर महाँ॥
कर सेती रोकें हम सबै। तो इह गिरै भूमि में अबै।
गिरते प्राण नसें दर हाल। इम चिंतवन करें सब बाल॥
घरमें जातो लख सब नार। मनै कियो नहिं दया विचार।
देख अपूरव नर बल हीन। तापै कृपा करे परवीन॥
उरमें भय धरती सब भई। देव मंजरी पर फिर गई।
भय सनेह युत किंकर हीन। निज स्वामी के रहत अधीन॥

॥ पद्धड़ी छंद ॥

इक वृद्ध पुरुष कंपित शरीर। त्वच अस्थिमात्र दीखत शरीर।
आवत है घर भीतर विख्यात। हम रोकनकूं समरथ न मात॥
सुन कन्या बोली वच विशाल। तुम बरजो मत याकूं सुबाल।
जा विध के भावी होनहार। ताही माफिकमति होय सार॥

अति वृद्धपुरुष लखके नवीन। कन्या हर्षी मन में प्रवीन।
पूरब है जैसो संस्कार। उपजे तैसो ही योग सार॥

॥ दोहा ॥

भूखो लख अति वृद्ध कूं, भोजन बहु सुमिष्ट।
कन्या देत भई तबै, भयो महा संतुष्ट॥

॥ चौपाई ॥

भोजन कर वर सेज मँझार। निद्रा मिस पौढ़ो तिहवार।
निज कारज करवे को मंत। योग समय देखें बुधवंत॥
जग मन रंजन गान विशाल। सुनत होय वश तिय दरहाल।
कानन कूं अति ही प्रियकार। गावत भयो वृद्ध तिहवार॥
निद्रा मिस कर कछु इक काल। सोवत भयो वृद्ध गुणमाल।
कछु इक थान संत निरधार। कपट धरें निज अर्थ विचार॥
सुनके ताको राग प्रवीन। राग विषै जानो परवीन।
जो है आप विचक्षण सार। भलो बुरो परखै निरधार॥
पँचम राग आदि मनुहार। ताकी ध्वनि सुन कन्या सार।
खिंची भई आई गुणरास। आदर सहित वृद्ध के पास॥

❀ अडिल्ल ❀

मन वाँछित निज काज परीक्षा को जबै।
कन्या ताको करत भई आदर तबै॥
निज मतलब उर धार जगत जन जग विषै।
विनय करें अधिकाय जाय पर के नखैं॥

॥ रोड़क छन्द ॥

बोली सुर मँजरी वृद्ध तो सम जग माँही ।
गान कला में निपुण मोहि दीसे कोउ नाहीं ॥
तुम हो अति परवीन कोकिला सम तुम वाणी ।
कीनों मैं निरधार हिये तुम हो पर ग्यानी ॥
जैसी तोमें शक्ति गान विद्या के माँही ।
तैसी और जु काज विषै हैगी अक नांही ॥
प्रानिन को समरत्थपनो जग जन नहिं जाने ।
प्रगट लखे वर शक्ति तबै निहचे उर आने ॥

॥ चौपाई ॥

कहत भयो सुनिये अब बाल । निमित ज्ञान में शक्ति विशाल ।
तीन काल की है जे बात । सो मैं कहूँ अबै विख्यात ॥
अहो निमित्त ज्ञानी जु बताय । मोहि इष्ट वरको सु उपाय ।
दीन वचन जाचना मँझार । कहत न रागी करत विचार ॥
जीवक स्वामी गयो विदेश । कितै भ्रमत जानूं नहिं लेश ।
पंडित जन मन मोहित सोय । ता बिन मेरो मरनो होय ॥
कल्प वृक्ष सम कित है कंत । कैसे प्राप्ति होय महंत ।
सुनके निमित ज्ञानकूं देख । कहत भयो पुनि वचन विशेष ॥

॥ अडिल्ल ॥

सरिता तट बन मांहि काम को धाम है ।
मन वांछित शुभ काज करत अभिराम है ॥

निज कारज के हेत जान जनता विषै।
हे बाले तूं जान बात सांची अखै॥
कामदेव की पूजा समय विचारिये।
मिले तोहि भरतार न संशय धारिये॥
अपनो वाँछित काज जगत में करन कूं।
अतिशय निर्मल चित्त होत है नरन कूं॥

॥ चौपाई ॥

वृद्ध वचन सुनके तब बाल। निज मनमें जानो पति हाल।
मन वांछित कारज जब सरे। तब अतिशय प्राणी सुख धरे॥
या प्रकार कहि के विरतंत। चल्यो तहाँ सेती मतिवंत।
अति विशेष आतो जो होय। सुख आशा धर सेवें सोय॥
सुरमंजरी महा गुणमाल। करो बधाई मिष दरहाल।
निज सखियन कर वेढ़ित भई। कामदेव के मंदिर गई॥
भगति भाव उर मांहि बढ़ाई। कामदेव पूजो मन लाई।
रति सुख हेत जगत में नारि। चेष्टा कहा करे न असार॥

रोड़क—छन्द

विविध द्रव्य सूं पूज फेर जांचो तसु सेती।
जो तुझ मांही शक्ति होय तो कर मुझ एती॥
जीवक वेगि मिलाप तरुण जाकूं शुभ प्यारो।
पूरव भव को नेह होत नाँही अब न्यारो॥

॥ सोरठा ॥

तब जीवक मतिवान बुधसेन कूं लाय के।
बैठायो इक थान मृढ़ काम के धाम में ॥
कन्या के सुन बैन बुधसेन बोल्यो तबै।
गुप्त वचन सुख देन कामदेव को मिस धरै ॥
सो पूजा करि सार पायो वर तैं निकट ही।
प्रगट अबै निरधार संशय उर में मति करै ॥
सुरमंजरी तिहिवार कामदेव ही के वचन।
मानो उर निरधार वांछित मुझ कारज भयो ॥

॥ दोहा ॥

रहित विचार विवेक बिन, त्रियजन जगत मंझार।
तिनके वर भूषण यही, मूरखता निरधार ॥
देखो तब ही कुमर को, मुखपीछे सुखकार।
करत भई लज्जा तबै, उरमें आनन्द धार ॥

॥ चौपाई ॥

करि कटाक्ष जीवक तिहिवार। करी तिया को तृप्त अपार।
जगमें काम अंध नर जेह। दृष्टिपात कर जीवें तेह ॥
कहो त्रियासूं उर धर नेह। अब तुम जावो अपने गेह।
तेरे पीछे हे वरनार। मैं आऊं तो गेह मझार ॥
जीवक के वच सुन हर्षन्त। गई आपने गेह तुरन्त।
दोनों को चित होय समान। सो दम्पति जगमें परधान ॥

कन्या को सुनके विरतंत । तात आदि सब हर्ष करंत ।
सुता योग्य वर पायो सही । कौन हर्ष उर धारे नहीं ॥
ऋषभदास तिस तात उदार । शीघ्र गयो तिस गेह कुमार ।
वनिता को कर लोभ महान । को नर खिचे नहीं जग थान ॥

* दोहा *

ऋषभदास उठके तबै, जीवक को सन्मान ।
कियो बहुत अति हर्षधर, प्रीति परस्पर ठान ॥

॥ पद्धड़ी छंद ॥

पीछे विधि पूर्वक ऋषभदास । दीनी तनुजा गुणकी निवास ।
अति हर्ष सहित जीवक कुमार । शुभ पान ग्रहण कीनो उदार ॥
करि व्याह कुंवर अति हर्षधार । मन वाँछित कारज करो सार ।
बहु जतन थकी जो वस्तु आय । किसके सनेह उरमें न थाय ॥

॥ द्रुतविलंबिता ॥

तब जीवकजी वर काम कथा जु कहैं त्रियसूं रस केलि करे ।
शुभ हास विलास विलोकनते अतिही उरमाँहि प्रमोद धरे ॥
इम दम्पति भोगत भोग सदा सुखसागर में सब शोक हरे ।
तिनको बररूप निहारत ही बहु काम सरूप लगे सुथरे ॥

* रोड़क—छन्द *

कल्पवेल कर कल्पवृक्ष जैसे छविधारे ।
किरनन कर जिमि चन्द अधिक शोभा विस्तारे ॥

शची सहित दिवनाथ जेम सुरगण मनमोहे।
जीवक सुर मंजरी सहित त्यों ही अति मोहे॥

किरीट—छन्द

है गुण की शुभखान सुरीसम नैन मृगीसम प्रीति बढ़ावत।
सुंदर वानि खिरै जु सुधासम कोकिल भी हँसकै जु लजावत॥
सोहत रूप मनोग्य तिया सम देखत ताहि सबै जु लुभावत।
ऐसी दिपै सुरमंजरी भामिनी जीवक के मन कूं सु रमावत॥

सुर मंजरी लाभ नाम ११ वां परिच्छेद समाप्त।

१२वां परिच्छेद

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

॥ छप्पय ॥

श्री श्रेयांस जिनेश श्रेय तुम कियो प्रगट जग।
दशधा धर्म प्रकाश दिखायो सार मोक्ष मग॥
सुखित किये जगजीव वाणि वर्षाय अमी झर।
नासै तम मिथ्यात ज्ञान परकास दिवाकर॥
इह विधि अनेक उपमा सहित करो श्रेय निसदिन मुदा।
मन वच काय उर हर्ष धर नयमल पद वंदत सदा॥

॥ कुसुमलता ॥

काम सुखन करिके जीवक ने देवमंजरी तृप्त करी।
बहुत जतन करि पाई सुंदरी तातैं अधिकी प्रीति धरी॥

बड़े सुहठ करिकं तज नारी भ्रातन सूं फिर जाय मिलें ।
जे कुलीन नर हैं जग माँही तिय वश होय रहैं न रले ॥

॥ चकोर छन्द ॥

पूरव पुण्य कियो अति ही तिन पार करके परनी शुभ नारी ।
कौरव वंश अकाश विषै वर शोभित चंद महाँ छवि धारी ॥
मात सु भ्रातन सों जु मिलो पुनि कीरति हूँ जगमें विस्तारी ।
यातें अहो भवि पुन्य करो अव जाय लहो शिव सुंदर प्यारी ॥

॥ कुसुमलता ॥

कुंवर देख पद्मादिक भ्राता उर माँही अति तृप्त भये ।
कियो बड़ो सन्मान कुंवर ने अति सनेह कर सहित ठये ॥
मसलत करके भ्रात सँग सब पिता गेह कूं तुरत गयो ।
बहुत दिनन को भयो विछोहो ता करि जीवक दुखित भयो ॥
मात तात चिर जीवो तुम ऐसे जीवक सों कहत भयो ।
धरे पिता सों नेह निरंतर ताके आंगण बीच ठयो ॥
जीवक के मुख जेर वाक् सुन नाम फेर परनाम कियो ।
तात उठाय कुंवर कूं हितसों उरके विषै लगाय लियो ॥
ता पीछे नन्दन जननी कूं कर प्रणाम बहु सुखित भयो ।
सुत सूं आलिंगन कर माता उर माँही आनन्द ठयो ॥
करसूं तन सपरस पुनि मस्तक चूम हिये बहु हर्ष धरो ।
भये प्रफुल्लित नेत्र देख सुत उरको सब सन्ताप हरो ॥
तथा मात सुत के निरखनते अति सनेह उर मांहि धरे ।

जमके मुख तें आयो सुत लख कौन हर्ष उर नाहीं धरे ॥
अपनो कहि विरतंत तातसों तिनको सुनि बहु हर्ष धरे ।
उत्तम नर सब कहें आपनी परसों पूंछें प्रीति करे ॥

॥ चौपाई ॥

पुनि गंधर्वदत्ता के ग्रेह । गयो कुंवर उरधार सनेह ।
सुख करता कह वचन अलाप । हर्षित करि मेटो सन्ताप ॥
पुनि गुणमाला को सन्मान । करत भयो जीवक मतिवान ।
मिले तियनकों जब निज कंत । तब प्रमोद उर धरें अत्यंत ॥
जनक आदि भ्रातन को संत । करत भयो सन्मान अत्यंत ।
मान्य अमान्य नरनको भेव । दक्ष पुरुष जानत हैं एव ॥
पाछे मात सुनंदा पास । भ्रातन सहित कुंवर गुणरास ।
गूढ़ व्रत धर के इक पक्ष । रहत भयो घर में अतिदक्ष ॥
गंधोत्कट सों मंत्र विचार । घरतें निकसो वेग कुमार ।
जो कारज आरम्भे सन्त । करें बिना तिष्टें न महंत ॥
अब विदेह नामावर देश । जहाँ के उपजे जीव विशेष ।
ध्यान धार के होय विदेह । जीत काम को नहिं संदेह ॥
अति विषिष्ट नर पुंगव बसे । विविध प्रकार गुणन कर लसे ।
कामदेव सम रूप सु धरें । सकल त्रियन के मनकूं हरे ॥
धरणी तिलक नगर तहां बसे । धरणी को मनु तिलक जु लसे ।
धरणी धर पर्वत अवदात । धरणी में शोभित विख्यात ॥
तामें नृप गोविंद महान । नारायण सम अति बलवान ।

दाता दयावंत गुणवंत । लक्ष्मी सहित महाँ मतिवंत ॥
तब मामा के देश मँझार । गयो हर्षधर वेग कुमार ।
लिख अपनो सबही विरतंत । भेजो तापर पत्र तुरंत ॥
जीवक आयो सुन गोविंद । हर्षित भयो हिये अरविन्द ।
लेख वाहको भूप सुजान । करत भयो बकसीस महान ॥
तब सिताब गोविन्द मतिवंत । गयो कुंवर के सन्मुख संत ।
भागनेय को कंठ लगाय । मिलत भयो अतिही सुख पाय ॥
विजया जननी सहित कुमार । लेय गयो निजपुरी मझार ।
तिनको कर सन्मान महान । राखे अपने मंदिर आन ॥
भानेज की सुश्रुषा सार । करत भयो गोविंद उदार ।
भाग्यवंत भानेज को देख । कौन सु नर पूछे न विशेष ॥
तब गोविन्द नरेश उदार । मनमें करत भयो सु विचार ।
जीवक को निज राज महान । ले दीजे निश्चय उर आन ॥
इम विचार गोविन्द महान । उदित भयो हिये उर आन ।
धरत आप दंती मद महाँ । पर परेरे तब कहनो कहा ॥
पुनि मंत्रीन कर सहित कुमार । ममलत करत भयो तिहवार ।
वैरी नृप जीतन के हेत । कीजे कहा कहा शुभ चेत ॥
मंत्र करन कूं निपुण महान । ऐसे मंत्री मिल इक थान ।
मंत्र तनो कीनौ निरधार । करे न मंत्री मंत्र असार ॥
जीवंधर को उदय विशेष । भारवाह नृप सुनो विशेष ।
उरमें भय धारो तिन महां । वली देख डरपे नहिं कहा ॥

भारवाह तब कियो विचार । धार कपट उर मांहिं असार ।
गोविन्द सुत जीवक गुणवान। जिन्हैं बुलाय हन्यों इहि थान ॥

॥ अडिल्ल ॥

भारवाह भूपाल सचिव बुलवाय के ।
भेजो गोविंद पास पत्र दे जाय के ॥
दुरजन जनको चित्त कपट करके सदा ।
भरो रहे निरधार न संशय है कदा ॥

* चौपाई *

हे नृप राजपुरी को भूप । सत्यंधर नामा गुण कूप ।
सत्य वचन कर पाले नीति । धर्म पुत्र सम महाँ विनीत ॥
भारवाह कर नृप यह मरो । लोक विषै ऐसे उच्चरो ।
सो तो झूंठ बात है संत । करो हिये सु विचार महंत ॥
नृपघाती हों सो मतिवान । तो संसार विषै अब जान ।
बड़े नरन करिके किस भाँति । पूजनीक होतो गुणपाँति ॥
असवारी को गज मदमंत । सत्यंधर तिन हतो तुरंत ।
निश्चय सेती जान नरेश । यामें कछु संदेह न लेश ॥
हे नरेश तुम आये अबै । इह अपवाद मिटेगो सबै ।
सज्जन जनकी संगति पाय । दुरजन भी सज्जन हो जाय ॥
मंत्रिन के वच सुन निज कान । तिनकूं कियो नृपति सन्मान ।
सज्जन जन दुर्जन को सदा । नम्र होय अतिशय कर मुदा ॥
गोविन्द नृप इम कियो विचार । यह दुर्जन अति है निरधार ।

दुर्जन की नम्रता महान । अतिशय करि है उपल समान ॥
कारज अंध करै न विचार । संतन को ठगनो दुखकार ।
निज मरनो-वाँछै मति हीन । कंश नृपति सम यह अघलीन ॥
दुर्जन तैं सज्जनता महाँ । निश्चय प्रगट कीजिये कहा ।
प्रबल कीच में पय अतिभार । मलिन कहां न होत निरधार ॥
छल विचार इन दुष्ट अपार । हमें बुलाये प्रीति विथार ।
रिपु हतवे कूं भी बलवान । वेग सुमति धारैं अघ खान ॥
वैरी नेह युक्त हो जदा । संत विश्वास करैं नहिं कदा ।
जैसे युत सीवाल पाखान । अतिसै करि गिरवे को थान ॥
ऐसे करि विचार गोविंद । वैरी नृप जीतिये स्वच्छंद ।
अपनो बल सजकर निरधार । तहाँ चलन कूं निज मन धार ॥

॥ अडिल्ल ॥

नगर विषै विख्यात करी यह बात है ।
मारवाह सूं मिलवे कूं नृप जात है ॥
अंतरँग को भेद कोई जाने नहीं ।
भेरी चलने हते दिवाई नृप सही ॥
देश देश के भूपन पै अपने जबै ।
दे दे पत्र उदार दूत भेजे तबै ॥
जीवक अर गोविन्द भूप हित लाय कै ।
मारवाह सूं मिलवे जात उमाह कै ॥
निज कारज की सिद्धि हेत मन धर रली ।

न्हवन सहित सिद्धन की पूजा कर भली ॥
फेर शील तप दान कियो उछाह सूं ।
शुभ शुभ कारज और करे बहु भावसों ॥
भली लग्न के विषैं नगर बाहर जवै ।
थिरता करत भयो सुनृपत गोविन्द तवै ॥
मुख्य सचिव अरु कुंवर आदि सब ही चले ।
शुभ सूचक वर शकुन भये नृपकूं भले ॥

राड़क—छन्द

गिरसम देह उतंग भरत मद करत भ्रमर रव ।
घनसम शब्द करंत रहित संख्या जु धरैं जव ॥
दंती अति बलवंत दंत रूपी मुदगर कर ।
वैरी गन चकचूर करत मानों जु चलेवर ॥
चंचल चले तुरंग पौन कैसी गति धारैं ।
हींसे दसन चबात खुरनितें अवनी विदारैं ॥
विविधि शस्त्र कर भरे चले स्पंदन छवि वारे ।
होत किंकिनी नाद वीर बैठे अति भारे ॥
गदा हाथ में लिये खड्ग केई कर धारैं ।
चले कुन्त गह हाथ केई गलढाल विथारैं ॥
धनुष बान पुनि धरैं किते मुदगर ले भारे ।
चले पियादे सूर अरुण लोचन कर सारे ॥

॥ चौपाई ॥

सेन अनेक लिये निज सँग। चलो करन बैरी को भँग।
जल कर भरे सरोवर सार। तिन कौतुक करतो सुकुमार॥
कहीं इक नाचत मोर अनूप। तिनकूं देषत कौरव भूप।
कहिं किरातगण गावें गीत। तिनको सुनतो चलो विनीत॥
रिपु समूह को त्रास करंत। मित्रन कूं बहु विधि पोषंत।
भूपन को करतो सनमान। देख हर्ष जग धरे महान॥
ऐसी अनुक्रम तें जु कुमार। राजपुरी पहुँचो निरधार।
ताके निकट देख शुभ थान। निज सेना थापी मतिवान॥

* दोहा *

जीवक को आगमन सुन, भारवाह भय लाय।
ज्यों कंकी को शब्द सुन, डरें नाग अधिकाय॥

❋अडिल्ल ❋

गोविन्द नृप ढिग भारवाह नृप ने जबै।
भेजे बारम्बार भेंट बहु विधि तबै॥
कपट हेत जग माँहि लोक अविचार ते।
गूढ़व्रत कूं धरें हिये निरधारते॥
भेंट देख गोविन्द करे सु विचार ही।
दुष्ट पुरुष उर माँहि दुष्टता धार ही॥
जैसे कनक सु बीज खात मीठो लगे।
पीछे अंग मझार विथा भारी जगै॥

पुनि गोविन्द नरेश भेंट जाको जबै ।
भेंटत भयो महान कपट सेती तबै ॥
निज कारज की सिद्धि निमित्त विचार कैं ।
बैरी कूं आराधे प्रीति विचार कैं ॥
तिन दोनों नृप के प्रीती बाहर भली ।
होत भई निरधार हिये में ना मिली ॥
जैसे पात्र मँझार नीर पय थिति करे ।
अतिशय अग्नि मँझार प्रीति नांही करे ॥

॥ चौपाई ॥

जीवक पुनि गोविंद सुचेत । भारवाह के नाशन हेत ।
करत भयो उर माँहि उपाय । बिन उपाय कारज नहिं थाय ॥
निज कन्या को कीजे ब्याह । भारवाह हतिये नरनाह ।
इम विचार गोविन्द गुणराश । रचो स्वयंवर पुरके पास ॥

॥ सोरठा ॥

सुता स्वयंवर काज सब देशन के नृपन पै ।
लेख सहित महाराज भेजे दूत बुलावने ॥

॥ चौपाई ॥

देश देश के भूप महान । तीन बरन के नर कुलवान ।
आवत भये हर्ष उर धरे । कन्या पै सबही रुचि करे ॥
धनुर्वेद के जानन हार । आये उत्तम नर मद धार ।
चापन की टंकोर करंत । अखिल अचल के पावक संत ॥

* अडिल्ल *

राधा पुतली नाक विषै मोती फिरे ।
उन्नत थंभ मझार शोभ अति ही धरे ॥
नीचे पानी माँहि देख वेधे तिसे ।
कन्या लक्ष्मी मती ब्याह सोई लसे ॥

॥ दोहा ॥

ऐसी वि सों घोषणा, गोविन्द भूप महान ।
देत भयो सब ठौर में, महा हर्ष उर आन ॥

॥ चौपाई ॥

सुन घोषणा उठे मद धरे । धनुष तान फेंकत सर खरे ।
राधा वेध करन को संत । समरथ कोई न भये महंत ॥
पाछे उठो सु काष्ठांगार । राधा वेध करो मैं सार ।
राज सु लक्ष्मी को मद महा । करे नहीं जगमें नर कहा ॥

॥ अडिल्ल ॥

मोती यंत्र मंझार भारवाह हूं नृप जबै ।
वेधन कूं समरत्थ भयो नाँही तबै ॥
खोटी विद्या नीच पुरुष धारे सही ।
ता कर लोक मँझार जीत पावे नहीं ॥

॥ दोहा ॥

कुंभ कार के तंत्र सम, भ्रमे जो यंत्र अपार ।
भेदो गयो न नृपन पै, तब उठके सुकुमार ॥

आज्ञा नृप गोविन्द की, लेकर जीवक संत ।
मोती वेधन को तबै, उद्यत भयो तुरंत ॥
धनुष चढ़ाय के कुंवर ने, कियो महा टंकार ।
भेदो मोती यंत्र को, भयो तबै जयकार ॥
जिमि पूर्व अर्जुन बली, राधा वेध उतंग ।
धनुष खेंच गाँडीव कू वेधो मोती अंग ॥

॥ चौपाई ॥

तब गोविन्द भूप की बाल । जीवक के गलमें वरमाल ।
डारत भई हर्ष जुत जबै । पुलकित भये मित्रजन सबै ॥
पुनि गोविन्द भूप अवदात । सब अवनी पति सूं विख्यात ।
ऐसी विध सेती गुणराश । कहत भये शुभ वचन प्रकाश ॥
सुनो सकल नृप मेरे वैन । सत्यंधर नृप को सुत ऐन ।
जीवंधर धारी गुण धीर । निश्चय सो भानेज वर वीर ॥
ऐसे वच सुनके नृप सबै । जीवक को जु महातम तबै ।
आपस में वर्णन ते करें । मन मांही अचरज बहु धरें ॥
ऐसी शक्ति बड़ी अवलोय । क्षत्रिय शूर बिना नहिं होय ।
याको क्षत्रिय कुल अवदात । बाण निपुणता कहत विख्यात ॥

॥ अडिल्ल ॥

द्रोणाचार्य अरु और नृपति अर्जुन विषै ।
धनुर्वेद विद्या प्रधान सबजन अखै ॥
तिन सेती अधिकाय बाण विद्या भली ।

जीवक विषै निहार प्रीति वाढ़ी रली ॥
जीवक को लख भार वाह भूपति जबै ।
मुख मलीन कर क्षीण भयो अतिशय सबै ॥
फेर मृतक सम होय महा दुख पाय कै ।
करत भयो सु विचार हिये अकुलाय कै ॥

॥ चौपाई ॥

विजया सुत आगे इह वार । मेरो मरण होय निरधार ।
वीर भोगवे पृथ्वी महाँ । समरथ भयो गरज अब कहा ॥
पूरब मैं यह वैश्य कुमार । मारन हेत प्रगट निरधार ।
कोटपाल को सोंपो सही । कैसी विधि उन मारो नहीं ॥
आप विना इस जगत मंझार । निज कारज नहिं सरै लगार ।
पर को करै भरोसा यदा । निज कारज नहिं सरहैं कदा ॥
गूढ़ ब्रत करकै गोविन्द । वृथा वुलायो मैं मतिमंद ।
अपने नाश निमित्त अवार । यह कारज कीनो दुखकार ॥
गोविन्द सुत यह अति वलवान । कहा अनर्थ करे न महान ।
अग्नि पवन कर प्रज्वलित जबै । भस्म करै अवनी मैं सबै ॥
इम चिंतवन करतो तिहिवार । भारवाह के चित्त मंझार ।
प्रगटी शल्य महाँ दुखदाय । सर्व अंग सूखो अधिकाय ॥

॥ अडिल्ल ॥

नंदगोप स्वामी को आगम सुनत ही ।
सकल गोप ले सँग सु आयो तुरत ही ॥

कीनो पुनि परणाम कुंवर कूं चाव सूं।
कुंवर कियो सन्मान अपूर्व उछाह सूं॥

* दोहा *

गंधोत्कट कूं आदि दे, सकल बंधु उमगाय।
आये कुमर सहाय कूं, महा प्रीति सरसाय॥
पूर्व किये कितने जु वश, ते आये दरहाल।
धनुषवाण करमें लिये, किधौं भयंकर काल॥
कितने ही राजा बली, जीवंधर की पक्ष।
चतुरँग सेना कूं लिये, आवत भये सु दक्ष॥
भारवाह के पक्षकूं कितने इक भूपाल।
आये बल चतुरंग ले, कोप धरे जिमि काल॥
कोई रहे मध्यस्थ है, नृप नन्दन गुणवंत।
कर्म योग तें होत हैं, कई दुष्ट कई संत॥

॥ अडिल्ल ॥

आज्ञा पाय कुमार तनी पद्मास्य ने।
लीने भ्राता सँग सकल तिन आपने॥
अरि के सन्मुख गयो वेग हर्षाय के।
करत भयो भयकार युद्ध कूं पाय के॥
दंती सूं दंती जु युद्ध करते भये।
मद समूह करमत्त सुभट तिन बैठिये॥

अंजन गिरि सम रूप अधिक छवि छाज ही ।
करत महा जु विकार किधौं घन गाज ही ॥
चंचल तुरँग अतीव खनत भू खुरन सों ।
लड़ें परस्पर शूर चढ़ें निज अरिन सों ॥
स्यंदन सों स्यंदन सु भिड़े शोभा धरें ।
तिनपै बैठे सुभट भयंकर रण करें ॥
खड्ग खड्ग लें लड़े परस्पर दाव सों ।
कुंत कुंत सों सुभट भिड़ावत चाव सों ॥
गदा गदा ले भिरत दोउधा ज़ोर सों ।
करत महा सँग्राम बड़े इक शोर सों ॥
करत परस्पर युद्ध तरुण सों ज़ोर तें ।
लाठी सों लाठी जु फिरावत शोर तें ॥
मुंचत आपस माँहि केस गह नर तबै ।
दोऊ ओर सों बरसावत सोंटा जबै ॥
माटी के गोला जु धार गोफन विषै ।
फेंकत आपस माँहि कूर बाणी अखैं ॥
तीक्षण धार त्रिशूल शीश को छेदई ।
करतें सेल भिराय हियो पुनि भेदई ॥
खैंच कान परजंत वीर को दंड कूं ।
छेदत तीक्षण बाण थकी भुजदंड कूं ॥

कर सूं चक्र फिराय फेंकते अग्नि पै।
तिनके कटके शीस परत हैं धरणि पै॥

✽ भुजंगी छन्द ✽

कई सूर बांके बड़े ज़ोर संती। कहैं क्रूर वाणी बड़े शोर संती।
कई दौरके खड्गसों सीस काटैं। कई आवते सूर कूं वेग डाटैं॥
बजें बीन वंशी बड़े ढ़ोल गाजे। सुनै तिनको बांके लरे बीर ठाड़े।
बजें भेरि कंशाल करनाल गाढ़ी। कहैं दोय राहू खड़े सूर ठांही॥
बजें घोर संती निसान जुनीके। खड़े सूर बांके जु गाढ़े सुजी के।
कई शंख पूरैं बड़े ज़ोर संती। सुनैंनाँहि कानैं बड़ी घोरसंती॥

॥ चौपाई ॥

बड़ो मान धारैं सर्वंग। रिपु समूह परवत अति तुंग।
बाण वज्र करिके तत्काल। भंग किये कर लोचन लाल॥

✽ अडिल्ल ✽

ऐसे कहत पुकार शक्ति जो है अबै।
तो तिष्ठो हम अग्र सूर निहचल तबै॥
शर विद्या के माँहि शक्ति कैसी धरो।
हम देखें परतक्ष वीर परगट करो॥
किते बाण कर भिदे तजो हित जानसो।
रहे कंठगति प्राण तजो नहिं मानसो॥
किते सूर भूपरे सु मांगें नीर को।
किते शूरमा खड़े सु धारैं धीर को॥

गज घोटक भू मांहि परे छिद छिद जबै ।
चरन धरन को ठौर रही नांही तबै ॥
लख प्रताप पञ्चास्य तनो परगट जहाँ ।
भारवाह की सेन भई कायर तहां ॥

॥ लीलावती छन्द ॥

माते गयंद चढ़ नृपति नंद उर धर अनंद सब अग्र पिले ।
कर धनुषबाण लेकर कृपाण धर बड़ो मान बल माँहि मिले ॥

॥ छप्पय ॥

रण भू गगन मँझार सेन गोविन्द लसे घन ।
होत चाप टंकोर शब्द सोई जु गरज घन ॥
झमकत असितँह भूमि बिजली खिवत किधोंवर ।
पहिरे भूषण बसन वीर सो इन्द्र चाप वर ॥
सित ध्वज समूह फरकें जु अति वक पंकति सोई ठई ।
सर गदा कुंत जलधार कर रिपु सु अग्नि उपशम भई ॥

❀ अड़िल्ल ❀

शस्त्र घात करके जु शीस भू पर ठये ।
खड्ग हाथ धरिके कबंध नाचत भये ॥
अरि के सन्मुख जाय घात घाले सही ।
फेर मूर्च्छा पाय परे छिनमें तहीं ॥
रण की रज असराल गगन माँही छई ।
निर्मल रवि कर मंद होय निशि सम भई ॥

ता करि निज पर सेन लखी नहिं जात है।
वीर हिये अकुलाय तहां भरमात है॥
किते तृषा करि वीर भये पीड़ित घने।
ता करि लोचन भ्रमत वचन नाहीं भने॥
मांग तृषारत कर जु नीर भूमें परे।
लागे गात में घाव रुधिर सेती भरे॥
दंतन सों असिथंभ पकर गज सूंड कूं।
चढ़ गज को असवार हनो तिस मूंड कूं॥
ताही गज असवार होय स्वामी बने।
आवत भयो शिताब हरष उरमें ठने॥
गज आरूढ़ सुभट वानन के घात तें।
बहुत रुधिर परवाह शिथिल भये गात तें॥
फूले किधों पलाश अचल के शिखर पर।
ऐसी शोभा सुभट धरत हैं गजन पर॥
हते गयंद अपार रुधिर तिनको झरे।
सरिता सम विस्तार रक्त शोणित धरे॥
परे गजन के चरण खंड ह्वै के जहाँ।
सोई मगर महान भ्रमत हैंगे तहाँ॥
तहाँ गजन की सूंड परी जु अपार है।
बड़े मच्छ की शोभ धरे निरधार है॥
तामें सुभटन के जु शीस अति ही तिरें।

कच्छप की मानो जु शोभ तेई धरें ॥
तहाँ गीध बहु काक श्वान गन फिरत हैं।
भूत पिशाचन की जु जहाँ नहिं गिनत है ॥
पल भक्षी इन आदि जीव विचरत ठये।
आमिष भक्षण कर सु महा तिरपत भये ॥

॥ भुजंगी छंद ॥

भले दीर्घदंती परे भूमि मांही। मरे वायु वाजी डरे सो तहाई।
लरें सूर बांके लिये शैल भूरा। कहे क्रूर वाणी बड़े ढीठ सूरा ॥
खड़े धीर सेती अरी को पछारें। गदा धार हाथै महा शत्रु मारे।
किते वीर धीरा लिये दंड मारे। अरी शीस देके जू भूमें पछारे॥
किते खडगले के अरी शीस नासा। लियेहाथ ताकूंगये नाथपासा
खुशी होय स्वामी दिये वित्तभारे। कहैं "शाबाश शाबाश" सारे
किते सूर नाचें लिये खड्ग हाथे। धरे दाव सेती अरीके जुमाथे
गदा हाथ लेके किते धाय वीरा। हने वेग सेती अरी जाय धीरा

॥ अडिल्ल ॥

गोविन्द नृप की सेन युद्ध करके जबै।
भारवाह की सेन भजाय दई सबै ॥
जैसे नभ के माँहि मेघ माला लसे।
चले पवन परचंड छिनक माँही नसै ॥
निज सेना लख भंग लाल लोचन किये।
भारवाह नृप उठो कोप करके हिये ॥

उद्धत होय शिताव चढ़ो गजके विषैं ।
ले ले सुभट सु शस्त्र धरैं अपने नखैं ॥
भारवाह नृप संपूर्ण सेना जबै ।
क्रोध थकी बानन करि छाय दई तबै ॥
क्रूर बचन पंकति जु खिरावत बदन तैं ।
भ्रमत चक्रवत सेन त्रिषेवर जतन तैं ॥
हते शूरमा बाण थकी कितने मही ।
किते परे असि घाव खाय करके मही ॥
घने गदा तैं हने जु काष्ठांगार ने ।
परे धरा में वीर सु लगे पुकारने ॥

॥ सोरठा ॥

जीवंधर की सेन बानन तैं जरजर भई ।
पावत भई अचैन भारवाह बानन थकी ॥

* दोहा *

कुमर अपनी सेन कूं, डिगत लखी तिहथान ।
कोप धार उरके विषै, उठत भयो मतिवान ॥

* छप्पय *

हिनहिनाय हय करत दशों दिश बधिर करतवर ।
उन्मत गज गरजंत कहत मुखतैं निषाद सर ॥
खड्ग खेट को दंड गदा मुद्गर करमें धर ।
आयुध कुंत त्रिशूल आदि सब धरैं वीर नर ॥

अरि सेना त्रासित करी विविध शस्त्र निज कर गहिय ।
अब भारवाह कित जायगो कहत वचन रण भूमिलिय ॥

॥ अडिल्ल ॥

बजत निशान रण तूर भेरि पटहा जहाँ ।
सिंह नाद करनाल गजत तुरही तहाँ ॥
बीना ताल सितार बाँसुरी धुनि करे ।
तिनको सुर सुन वीर धीर उरमें धरे ॥
ज्यों ज्यों बजत प्रचंड तूर घनघोर तें ।
त्यों त्यों नचत सुवीर हर्ष धर जोर तें ॥
कहैं वचन अति क्रूर बान छांड़ें जबै ।
भारवाह की सेन छाय दीनी सबै ॥
जीवंधर सुकुमार जु काष्ठांगार कूं ।
सन्मुख लियो बुलाय आपनी रार कूं ॥
सकल धरा कंपाई तबै सुकुमार ने ।
कोप कियो परचंड अरी कूं मारने ॥
उठो जु काष्ठांगार वेग रण करन कूं ।
कंपावत अति कोप थकी सब धरनि कूं ॥
लोचन कर अति लाल भयंकर वदन तें ।
इह विधि वचन समूह कहे तब कुमर तें ॥
हे जीवंधर बाल अबै दरहाल ही ।
मो आगे तें व्यर्थ मरै मत हाल ही ॥

गर वे पुरुषन कं जु शस्त्र भयकार जू ।
शिशु कं ऊपर परे नहीं निरधार जू ॥
अरे वणिक तुव जनक पास तें बांध कें ।
लायो मेरे पास तोहि अति त्रास तें ॥
नहीं नृपन को योग्य युद्ध अब बाल सों ।
सिंह जोर किमि करे जायके श्याल सों ॥
आवत गर्भ मँझार पिता तो क्षय भयो ।
प्रगट प्रजा को नाश राज छिनमें गयो ॥
अपनो पुण्य विचारत है अब ही नहीं ।
रार किये निरधार मिले नाहीं मही ॥
तू मत होय कृतघ्नी रे जीवक अबै ।
एक बार में छोड़ दियो ताकूं अबै ॥
अब हूँ तोकों तजों दया उर लाय के ।
मो आगे तें जाहु मरे मति चाय कें ॥

* कवित्त *

अरे बालक मतिहीन बड़ो मेरो जु शूरतन ।
प्रबल पुन्य परभाव फेर मेरो सु धीर तन ॥
तू जानत नहीं कहा बाल अपने मन माँही ।
कौन कौन मैं काज किये परगट भू मांही ॥
गंधोत्कट मुझ सेठ प्रगट जगमें सब जाने ।
पोषो ताकूं पुत्र बुद्धि करिके अब ताने ॥

याही तैं तो विषै भई है दया हमारे ।
रे मूरख तोहि सेठ पुत्र लखि के नहिं मारे ॥

॥ अडिल्ल ॥

हे सुन्दर सुकुमार वृथा निज प्राण कूं ।
छांडो मति निरधार धार बहु मान कूं ॥
कौरव इम सुन बैन कोप धार के जबै ।
लोचन कर अति लाल प्रगट बोलो तबै ॥
काष्ठ भार धर शीस प्रघट पुरके विषै ।
बेंचत फिरतो प्रथम तोहि सब जन अखै ।
सत्यंधर ने तोहि सचिव को पद दियो ॥
तूं कह जानत नाँहि अबै हमरो कियो ।
हे पापी दुर्बुद्धि हनो सु नरेश को ।
सबको उपकारी जु करत शुभ देश को ॥
याही तैं जु कृतघ्नी तूं जगके विषै ।
राज देव गुरु घाती तोहिं सबही अखै ॥
अरे नीच निर्लज्ज दुष्ट तू है महा ।
स्वामी को कर घात दिखावत मुख कहा ॥
भूल सबै उपकार कुधी अवरन विषै ।
करन लगो तूं युद्ध आय मो सन्मुखे ॥
तैसे ही तू बेच काठ के भार कूं ।
जाय अबै निरधार पोष परिवार कूं ॥

अरे काष्ठअंगार तजे मति प्राण कूं ।
मो आगे तूं जाव जाव तज मान कूं ॥
तो समान नर दुष्ट न मैं देखो मही ।
तेरी रक्षा जगत विषै नांही कही ॥
कीनो कारज तैंने जो जग के विषै ।
तैसो ही फल देहों अब तेरे नखै ॥
सुनकर बचन कठोर कोप करिके जबै ।
लियो हाथ को दंड भारवाह को तबै ॥
छोड़त भयो प्रचंड शरन को घोर तैं ।
छाय दियो आकाश भुजन के ज़ोर तैं ॥

॥ चौपाई ॥

क्रोध चित्त में धरि सु महान । मर्म विदारक तीक्षण बाण ।
सत्यंधर सुत छोड़त भयो । रिपु के गज ऊपर झुम गयो ॥
अर्ध चंद्र सर करके जबै । रिपु के सहायक छेदे सबै ।
भारवाह को गज तत्काल । जीवक ने कीनो बेहाल ॥

* अडिल्ल *

दोऊ भूप उदार शस्त्र करमें गहे ।
घात बचावन की प्रवीणता उर लहे ॥
अंग मर्म रक्षा करनं युग वीर जू ।
करत भये चिरकाल युद्ध अति धीर जू ॥
शक्ति और त्रिशूल बाण छोड़त घना ।

कुंत चक्र असि घात करत मन शंकना ॥
भिंडमाल पुनि गदा शस्त्र बहु तज ही ।
महा युद्ध दोउ मिलके इम सज्जन सही ॥
करत भये ते युद्ध परस्पर घोर तें ।
जीवक को ध्वज दंड हनो शर जोर तें ॥
तब जीवक सुकुमार कोप धरिके मनाँ ।
शर पंकति कूं छोड़ छत्र छिनमें हना ॥
भारवाह ने कोप महा करके जबै ।
हतो कुमार को पीलवान छिनमें तबै ॥
लिये खड़ग तत्काल कुंवर सु उठाय के ।
भारवाह को शीस हतो तिन धाय के ॥
मो भगिनी विजया को सुत महावीर है ।
लक्ष्मी मती सुता को पति रणधीर है ॥
इह विधि भूप तनो जु महाँ सुख पाय के ।
कहत भयो गोविन्द भूप हर्षाय के ॥

॥ पद्धडी छंद ॥

तब सकल भूप बहु भेंट लाय । जीवक कूं दीनी शीश नाय ।
सब वीरन में भयो मुख्य वीर । सेवत जु भये सब नृपति धीर ॥

॥ सवैया ३१ ॥

पाछे तब जीवक कुमार चढ़ गज सार,
लेके जु नृपति लार, चले उमगाय के ।

धरें शीस छत्र सित, हरत शशी की द्युति,
दुरत चमर सित, नमे भूप धायके ॥
बाजत निशान भेरि, गावत सुजस टेरि,
तिनको जु वित्त ढेर, देत हर्षाय के ।
ऐसी विधि मोद करे, इन्द्र कैसी शोभा धरे,
पुरमें प्रवेश कियो, महा सुख पाय के ॥

॥ सोरठा ॥

पुरकी शोभा सार, गोविन्द मामा जुत तबै ।
देखत जात कुमार, महा प्रीति उर धारके ॥

* दोहा *

प्रथम गयो जिन धाम में, श्री जिन पूजन हेत ।
ता करिके सबही सुफल कारज होय सुचेत ॥

॥ पद्धड़ी छन्द ॥

कर न्हवन प्रभू को हर्ष लाय । वसु द्रव्य थकी पूजा रचाय ।
पुनि पाठ कियो रुचिसों उदार । नवकार मंत्र पुनि जपो सार ॥
ता औसर जीवक पै सुआय । यक्षेन्द्र श्वानचर तुरत आय ।
सज्जन शुभ तरु सम जग मझार । शुभही फल देहि सदा उदार ॥
छिन एक तहां थित होय संत । यक्षेन्द्र सहित पुनि उठि तुरंत ।
शुभ विभव सहित वर राजधाम । चक्री सम तहं आयो ललाम ॥
शुभ लख मुहूर्त गोविन्द महीश । पुनि हर्षधार के यक्ष ईश ।
शुभ नीर लाय जीवक विशेष । सिंहासन थाप कियो ऽभिषेक ॥

॥ चौपाई ॥

राज सु पद जीवक को सार। देत भये सब मिल भूपाल।
तीन लोक में जे शुभ वस्तु। मिलें धर्म करते जु समस्त॥
पुनि गोविन्द नृपति निज सुता। दूजी गुणमाला गुण युता।
जीवक को दीनी परनाय। महा प्रीति उरमें सरसाय॥
गोविन्द आदिक सकल नरेश। तिनकूं भूषण वसन अशेष।
दे करिके जीवक मतिवान। विदा किये करि सब सन्मान॥
फेर सुदर्शन यक्ष महान। रचो महां सुंदर सु विमान।
तामें बैठायो पदमास्य। तासों कहत भयो गुणराश॥
जे जीवक ने परणी नार। तिनकूं ल्यावो जाय अवार।
सुन नरेश के वच सुख मान। हर्ष सहित तब चलो सुजान॥
क्षेमापुरी जु गयो तुरंत। ताके भूपति सों मिल संत।
क्षेम श्री लीनी मनुहार। बैठ विमान चलो तिहवार॥

॥ दोहा ॥

सखियन युत पद्मावती, भूषण कर शुभ सन्त।
लेकर के क्षेमापुरी, आवत भयो तुरंत॥
दृढ सुमित्र आदिक तहां, कीनो अति सन्मान।
जीवक को विरतंत, सब पूंछत भये सुजान॥

॥ चौपाई ॥

कंचन माला तबै तुरंत। विदा करी दृढ मित्र महंत।
युवती जन की जगत मंझार। शोभा हेत सुसुर घर सार॥

तिनको सब पद्माख्य कुमार। लायो राजपुरी तत्काल।
ते सबही निरखत गुणमाल। दरशावत पुर सौम्य विशाल॥
तिनको लख जीवक भूपाल। उरमें हर्षित भयो विशाल।
आदर सहित कियो सन्मान। मंदिर आदिक दिये महान॥
भारवाह के कुलकूं जबै। महा कष्ट उपजायो तबै।
काढ़ दियो पुरतें तत्काल। रिपु को नाश करो भूपाल॥

* अडिल्ल *

हरो शोक सब जाय आय निज मात को।
दान मान सन्मान कियो बहु भांति को॥
जन्म तनी दातार मात कूं जान कै।
करै न को सन्मान हिये सुख मान कै॥

॥ सोरठा ॥

ता पीछे मतिवंत गंधोत्कट निज तात कूं।
थापत भयो तुरंत महा सु क्षत्रिय पद विषै॥

॥ दोहा ॥

अपनो उदय भयो सुधी पिता तनो सन्मान।
करै कौन नहिं जगत में, महा प्रीति उर आन॥

* चौपाई *

नंद भ्रात को कर सन्मान। दियो सु युव राजा पद मान।
सब क्षत्रिन के अग्र मझार। करत भयो उत्साह उदार॥

* दोहा *

मंत्री पद पद्मास्य कूं, दियो महा हित लाय।
यथा योग्य सब भ्रात कूं, शुभ पद दिये बिठाय॥
और नियोगी जनन कूं, यथा योग्य पद थाप।
चक्रवर्ति सम राज्य कूं, भयो भोगतो आप॥

॥ चौपाई ॥

पीड़ित लख निज प्रजा नरेश। काष्ठाँगार करके सु अशेष।
उर माँही तब दया विचार। अति उदार मन रहित विकार॥
तबही द्वादश वर्ष पर्यन्त। पृथ्वी अकर करी नृप संत।
जोतें धरा करें व्यापार। हासिल भाग लगे न लगार॥
या प्रकार जगसाता रूप। करत भयो जीवक वर भूप।
चन्द्र करे तब अति उद्योत। शीतल भवन कहा नहिं होत॥
पाछें यक्ष सुदर्शन नाम। जीवक कूं करके परणाम।
सीख माँग निज थानक गयो। उर माँही अति हर्षित भयो॥
अनुक्रम तें सिंहासन सार। चलो जु आवत हो निरधार।
तापै थिति करके नर राय। तृप्त किये सब जन सुखदाय॥

* दोहा *

बंदी खाने के विषै, जितने थे जो जीव।
तिनकूं छोड़ दिये तबै, हर्षित होय अतीव॥

॥ चौपाई ॥

कहाँ भूप सुत सुंदर काय। प्रेत सु बनमें जन्म लहाय।
कहां राज को लाभ महान। बैरी नृप मानत हैं आन॥
देखो अचरज को करतार। विधि विचित्रता जगत मँझार।
कर्म नचावे त्यों ही जीव। विधि वशतें जग भ्रमें सदीव॥

॥ छप्पय ॥

कहाँ सत्यँधर नृपति भूप सेवैं जु तास पद।
कहां काष्ठांगार हनो स्वामी जु धार मद॥
कहाँ कुमर जीवंधर प्रेत बन लियो जन्म जिन।
कहां रायगोविंद मिले सुखदायक अति तिन॥
कहाँ स्वान भयो यक्ष सुर प्रत्युपकार प्रगट कियो।
देखो विचित्रता कर्म की आप राज अपनो लियो॥

॥ चौपाई ॥

जगत विषै भावी अनुसार। होय काज संशय न लगार।
भावी काहू पास न मिटे। ऐसे श्री जिनवाणी रटे॥
क्षण एक को उपकार महान। यक्षराय उर सुमर सुजान।
जीवंधर के निकट सु आय। कियो प्रणाम शीस निज नाय॥
भारवाह पुनि लहि के राज। हयगय रथ पायक जुत साज।
बहुत कृतघ्नी ने नृप हतो। दुष्ट भाव अति हिरदे रत्यो॥

॥ अडिल्ल ॥

जग को एह स्वभाव सनातन जान के।
करो धर्म सूं प्रीति सुधी हित ठान के॥
पर दुख देवे ते भयभीत अहो सदा।
पर उपकार करो स्वार्थ तजि के मुदा॥

* छप्पय *

जीवंधर कूं जिनधर्म राज संपति को दायक।
पुनि निर्मल जिनधर्म नाक संपदा विधायक॥
हित करता वर मित्र धर्म है अष्ट सिद्धि कर।
शिव सुखदायक धर्म मूल है दया जासवर॥
इह जान भविक जिनधर्मसों निशिदिन प्रीति करो सदा।
मानुष भव लाहो कठिन नहीं प्रमाद धारो कदा॥

इति जीवंधर राज्य लाभ वर्णनो नाम

१२वां परिच्छेद

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

॥ चौपाई ॥

नृप वसु पूज्यनंद सुखदाय। वासु पूज्य वंदों शिरनाय।
विमल २ गुण कलित शरीर। विमल धर्म उपदेशक धीर॥
श्री अनंत जिनवर जगदीश। वंदों मुकति वधू के ईश।
धरम धरम तीरथ करतार। परमधर्म उपदेशी सार॥

शांति जिनेश शाँति करतार । भववारिधि तैं तारन हार ।
कुंथु आदि जीवन रक्षपाल । कुंथनाथ सुमरों गुणमाल ।।
अरह जिनेन्द्र परम सुख कंद । सुर नर नेत्र चकोर सुचंद ।
बंदों मल्लिनाथ भगवंत । मोह मल्ल को कीनों अंत ।।
मुनिसुव्रत सुव्रत दातार । करुणा सागर गुण भंडार ।
नमि जिनवर गुण रतन करंड । भवदधि तारन सु तरंड ।।
तजिकै राजुल राजकुमार । नेमि जिनेन्द्रवरी शिव नारि ।
फन फन मंडिप मंडित देह । पार्श्व जिनेन्द्र नमों गुण गेह ।।

।। दोहा ।।

बाक़ी तीर्थंकरन कूं, कर प्रणाम शिर नाय ।
आगे कथन कहूँ, अबै सुनो भव्य मन लाय ।।

।। चौपाई ।।

जीवंधर ले राज उदार । शोभित भयो सकल गुणधार ।
हार विषै मन शोभा धरे । गुणगण कांचन उपमा वरे ।।
भाव सहित पात्रन को दान । चार प्रकार देत मतिवान ।
सात क्षेत्र में निज संपदा । जीवंधर खरचे बहु मुदा ।।
नाना विधि प्रसाद अनूप । करवाये बहु कौरव भूप ।
कनक रतन पाषान मँगाय । बिंब अनेक कराये राय ।।
महा उछाह सहित नरपाल । बिम्ब प्रतिष्ठा करी विशाल ।
महा तेजधारी गुणवंत । कीरति विचरत तास दिगंत ।।
अवनी रक्षा करते ताहि । अरि को दुख कोई न लहाय ।

ईति भिति व्यापे नहिं कोय। सुखसूं प्रजा बसैं सब लोय॥
सात चांग की शास्त्र मझार। देश रीति में नांहि लगार।
अनावृष्टि आदिक जे ईत। ताके राज विषै नहिं भीत॥
ईश्वर ता कर शक्ति महान। दिन कर सम सु प्रताप महान।
धनिंद समान धरे संपदा। दुखित जननकूं पोषै सदा॥
उदधि समान महा गंभीर। कंचन गिरि सम उन्नत धीर।
शशि सम सौम्य वदन अमलान। इन आदिक गुण धरत प्रमान
इह विधि कौरव राज करंत। महिमा को अति उदय धरंत
विजया माता विरक्ति चित्त। भई जान संसार अनित्य॥
तात सुपद में सुत कूं देख। अति संतुष्ट भई जु विशेष।
जो मैं संयम गहूँ अंबार। सफल जन्म धारूँ निरधार॥

॥ अडिल्ल ॥

तब सुत कूं विजया सुंदरी बुलाय के।
इह विधि भाषत भई वचन हर्षाय के॥
तेरो राज उदय सुत मैं अब देख के।
मोद सहित चित हर्षित भई विशेष कें॥

॥ दोहा ॥

पाप पुण्य को फल लखो, मैं इस ही भव माँहि।
शास्त्र ज्ञान बिन कर्म को, नाश होत सुत नाँहि॥

॥ चौपाई ॥

सुख दुखके फल विविध प्रकार। मैं भुगते संसार मँझार।
भवकारन तजके अब नेह। तप करिहों मैं तजिके गेह॥
तो वियोग तें आकुल तबै। यही प्रतिज्ञा कीनी अबै।
सुत को राज देख निरधार। मैं करिहों व्रत अंगीकार॥
यातें मैं घरमें नहिं रहों। हे सुत निश्चय अब तप गहों।
तू अब धरा पाल चिरकाल। चिर जीवो सुत बुद्ध विशाल॥

॥ दोहा ॥

जननी के इम बचन सुन, मूर्छित होय कुमार।
गिरो भूमि में तुरत ही, सुनें गये न लगार॥
पुनि शीतल उपचार तें, होय सचेतन सोय।
जननी सूं ऐसे बचन, कहत भयो दुख भोय॥
तो वियोग तें दुखित, अति भयो पूर्व मन मांहि।
हे जननी मोकूं अबै, तू क्या जानत नाहिं॥

* चौपाई *

जन्म दिवस सेती विधि योग। भयो मात तुमसूं जु वियोग।
महा कष्ट तें भयो मिलाप। सो अब खंड करत हो आप॥
इम सुन विजया बोली तबै। बहुत बचन भाखो मत अबै।
हे सुत मैं घर में नहिं रहों। निश्चय अब ही दीक्षा गहों॥

* अडिल्ल *

विजया को वैराग्य भाव इम देख के।
भई सुनंदा विरकत चित्त विशेष के॥
जीवन कूं चिरकाल भ्रमत या जगत में।
पुण्य पाप को उदय होत हैं पलक में॥
महा कष्ट तें दोऊ सुत हि निवार के।
गई सुदीक्षा हेत हर्ष उर धार के॥
पद्मा नामा अर्जिका के ढिग जाय के।
शिव दाता दीक्षा जाची शिर नाय के॥
साड़ी श्वेत जु राख परिग्रह तज सबै।
केश लोंचकर तप को ग्रहण कियो तबै॥
जीवक जिन पूजा करि चरणन को नमों।
जननी के पुनि निकट जायके नृप ठयो॥

॥ चौपाई ॥

जननी के युग वंदे पाय। बैठो तास निकट नरराय।
उदयमान देखी तिह ठाम। तपकर भूषित शुभगुण धाम॥
युग नैननि सें आँसू झरे। विह्वल गद गद बच उच्चरे।
पद्मा जीवक नृप कूं देख। ताकूं संबोधो सु विशेष॥
दीक्षा भाव जगत के माँहि। नृप जीवक के उपजत नाँहि।
जो कदाच दीक्षा मन धरे। तो अनेक विकलप फिर करे॥
जिनदीक्षा निषेध तें राय। बांधे कर्म जीव अंतराय।

तातैं होय भ्रमण भव सदा। यातैं शोक न कीजे कदा॥
जिनदीक्षा निषेध बुधवान। करनो योग्य नहीं अघखान।
रत्न वृष्टि नभ सेती परे। तास निषेध कौन नर करे॥
दीक्षा ग्रहण करो नृप संत। यह विचार उर माँहि करंत।
मणि को हार भस्म के हेत। जारत सो नर मूढ़ अचेत॥
व्रत तप ध्यान और पुनिदान। पूजा आदिक धर्म विधान।
इनकूं करते वरजे नहीं। भवदुख तैं डरपे जे सही॥
जननी इम व्रत वांछे राय। जननी को प्रणमो शिरनाय।
जीवक अपने मंदिर गयो। धर्म विषै चित धारत भयो॥

॥ अडिल्ल ॥

पुण्यवंत जीवक को चित निरमल सदा।
धारत नाँहि विकार भाव उरमें कदा॥
भूमि विषै चिरकाल रत्न तिष्ठे सही।
धारत नांहि विकार भाव तनमें कही॥

॥ चौपाई ॥

नाना धर्म विषै रत सदा। करतो सकल प्रजा को मुदा।
निज बलकर जीते अरि भूप। रति पति सम धारत वर रूप॥
अब गंधर्व जु सेना नार। सत्यंधर नामा सुत सार।
अरिगण जेता तनो महान। सत्यधर्म युत व्रत अमलान॥
गुण पालन को महाँ प्रवीन। नाम जास गुणपाल अदीन।
नाना गुणकर भरो अनूप। गुणमाला जायो वर रूप॥

पद्मा के पुनि उपज्यो नंद । नाम चंद्र शेखर कुल चंद ।
शुभ लक्षण भूषित गुणवंत । सकल कलाको विद चित संत ॥
सर्वक्षेम कर जग विख्यात । क्षेमानन्द नाम अवदात ।
क्षेमश्री जीवक की भयो । नाना विधि गुण भूषित थयो ॥
कनक समान तास तन रँग । कँचन प्रिय गुण धरत उतँग ।
कनकपाल सुत महाँ उदार । भयो कनकमाला के सार ॥
विमला के उपजो पुनिनंद । विमल नाम निर्मल गुणकंद ।
निर्मल मति धारत विख्यात । ज्ञानवान शशि सम अवदात ॥
देवमंजरी के सुत भयो । देवपाल नामा वरणयो ।
रूपवान सज्जन गुणवान । देव कुंवर सम शोभित आन ॥
लक्ष्मी मती भूप की भाम । लक्ष्मीपाल पुत्र अभिराम ।
नारायण सम जाको रूप । करत प्रीति जीवक अति भूप ॥

* दोहा *

इन आठों पुत्रन सहित, शोभित भूपति एम ।
अष्ट सुदिग्गज गिरिन कर, धरत मेरु छवि जेम ॥
और बहुत जे नारि हैं, तिनके पुत्र अनेक ।
कौरव भूपति के भये, धारत रूप विवेक ॥

॥ चौपाई ॥

ताके भई जिनमती सुता । दूजी सुमती गुण गण युता ।
इन आदिक पुनि कन्या भई । रूप शील गुण भूषित भई ॥
हयगज रथ पायक घर मांहि । तिनकीतो कछु सँख्या नांहि ।

नभ में नखतन को परमान। करन जु समरथ को बुधवान॥
इह विधि राज करत भूपाल। धारत क्षत्रिय धर्म विशाल।
देव समान शर्म भोगंत। तीस वर्ष बीते गुणवंत॥
ऐसो राज करत नरनाथ। आई ऋतु बसंत सुखदाय।
बन क्रीड़ा को उत्सव सार। करत भयो भूपति निरधार॥
आठों बनिता ले निज साथ। गज ऊपर चढ़के नरनाथ।
नरनारी पुरजन ले सँग। चलो भूप उर धार उमंग॥
हलत पवन कर वज्रो जहाँ। कोकिल शब्द करे वर तहाँ।
ऐसो बन देखो नर राय। मानो नृत्य करे हर्षाय॥
शुकध्वनि वीणा वचन विशाल। कीचक रव सोई बरताल।
बनकी वेल जु सोई नार। पान केश धारें विस्तार॥
भ्रमर समूह गीत गावंत। कोकिल गानहु लज्जावंत।
फूलन कूं धारे सु वसंत। पीत वरन फल कुच शोभंत॥
सारस हँस जहां सोवहीं। फूलन की जु हार छाज ही।
नृत्य धरावन अति अवदात। पवन नंग चारन विख्यात॥

॥ दोहा॥

नृप को आगम देख के, वेल नार हर्षाय।
मानूं नृत्य करत भई, कामीजन सुखदाय॥

॥ चौपाई॥

कहीं दाख मंडफ वलछाय। कहीं चमेली वन सुखदाय।
कहीं पकदाड़िम कहीयक आम। कहीयक चंपक शोभे धाम॥

कहीं कामनी गावें गीत। नाचत कहीं मोर धर प्रीति।
लता अग्र धर कर अभिराम। निजकूं दरशावें वरभाम॥

दंडक—छन्द

किती तिया उमंग तें, सुगंध लेप अंग तें,
चली सखीन संग तें, प्रमोद को बढ़ाय के।
किती वधू सुगावती, सखीन को बुलावती,
प्रसून को सुंघावती, सु प्रीति कों उपाय कें।
कितेक नारि तूत को, सु देत तोड़ पूत को,
सुचोंट हैं तूत को, खुवात तिसे बुलाय के।
किती अनूप अंगना, लसें जिसी सुरंगना,
दिखात अंग नेकना सु लाजकों धराय कें॥

* कवित्त *

प्रेम सहित उर कोप धरें कहीयक निजनारी।
ताहि मनावत कंत बचन कह कह हितकारी॥
कहीयक पुनि पुनि हरित घास जुत अवनी सोहे।
ताहि देख जीवक नरेश मनमें अति मोहे॥

॥ चौपाई ॥

चंदन चंद्रक घस वरवास। गीत नृत्य अरहास बिलास।
इनकर निज सुतियन जुत भूप। रमत भयो बनमें सुख रूप॥
कनक समान धरे वर देह। ऐसी जे वनिता गुणगेह।
तिन्हें सुरति रसकर भूपाल। करत भयो तृप्ति दरहाल॥

॥ दोहा ॥

बहुरि सुरति संभूति श्रम, नास हेत नर राय ।
जल क्रीड़ा करतो भयो, त्रियगण युत हर्षाय ॥

॥ चौपाई ॥

जल क्रीड़ा करके चिरकाल । पुनि बाहर निकसो दरहाल ।
कठहर को बन अधिक अनूप । देखन गयो सखा युत भूप ॥
कठहर को बन देखो सार । अति रमणीक सुफल सुखकार ।
जीवंधर अति हर्षित भयो । कछुयक काल तहाँ थिति ठयो ॥
तहाँ एक बानर भयकार । सकल बानरन में सरदार ।
धारत पूंछ बड़ी मतिहीन । और बानरी सों चित लीन ॥

* दोहा *

एक दिवस ताकी प्रिया, तासूं करत विलास ।
देख रमैं तासूं नहीं, अरु बैठे नहिं पास ॥

* चौपाई *

तब सो कपि करि विविध उपाय । क्रोध सहित निजनार कुभाय ।
ताहि प्रसन्न करन को जबै । भयो समर्थ नहीं सो तबै ॥
तासु विरह कर पीड़ित होय । परो भूमि में बानर सोय ।
मानूं मरण अवस्था लही । तन मनकी सुधि नाँहिं रही ॥
तब सो मूर्छित कपि को देख । मनमें विहल भई विशेष ।
कपि के निकट गई दरहाल । सावधान कीनो तत्काल ॥
उठके कपि पुनि ताके सँग । रमत भयो कर प्रीति अभँग ।

रूसी तिय सन्मुख अवलोय । हर्षित चित्त कौन नहिं होय ॥
वानर के उर आनन्द बढ़ो । कटहर के इक द्रुम पै चढ़ो ।
तहां थकी सुंदर फल लाय । निज नारी कूं दीनो आय ॥
तौलों तहें आयो बनपाल । लीनो फल छिनाय दरहाल ।
दीन मर्कटी कूं पुनि सोय । ताड़त भयो क्रोध वश होय ॥
यह चरित्र सब देख नरेश । भयो भाव वैराग्य विशेष ।
काल लब्धि संयोग वशाय । कारन सन्मुख आयो धाय ॥
जैसे भारवाह को राज । मैं लीनो बलकर युत साज ।
तैसे मर्कट को फलसार । बनपाली लीनो निरधार ॥

॥ दोहा ॥

वानर काष्ठाँगार है, मैं बनपाली समान ।
फलसम राज सुजान के, तजूं महा दुख खान ॥

॥ चौपाई ॥

तब विरक्त चित है नरराय । अनुप्रेक्षा द्वादश शिवदाय ।
शुभ वैराग्य सिद्धि के हेत । भावत भावना भूप सुचेत ॥
यह शरीर चंचल निरधार । तरु छाया सम जान असार ।
जल बुद बुद सम जीवन जान । सुपना वत सब वस्तु समान ॥
मानुष को जीवो जग माँहि । छण भंगुर है संशय नाँहि ।
बादलवत है विनशत सोय । तामें थिर मति कैसे होय ॥
चक्री नृप के विषय अनूप । तोभी विनश जाय दुख रूप ।
औरन की कहिये काकथा । शिव निमित्त तजिये सर्वथा ॥

विनाशीक यह देह असार। ताकर शुद्ध पुरुष निरधार।
अविनश्वर पद साधन करे। तेई नर भवसागर तरे॥
नहीं शाश्वती जगत मंझार। कोई वस्तु यहां निरधार।
गगन इन्द्र धनु तुल्य सदीव। देखत ही प्रिय लगे अतीव॥
भरत आदि चक्री जग माँहि। कोऊ बचा काल तें नांहि।
ता निमित्त तूं दुख क्यों सहे। सफल समय कर अपनो यहे॥

* रोला—छन्द *

गगन नगर सम तूल सँगवल्लभ जन केरो।
जलद पटल के तुल्य रूप जोबन धन तेरो॥
स्वजन पुत्र तन आदि बीजरी सम चमकारा।
छिन भंगुर संसार इति सब है निरधारा॥

इति अनित्यानु प्रेक्षा

॥ चौपाई ॥

शरण रहित बनमें मृगराय। मृग के शिशु कूं दावे आय।
रक्षा तास होय नहिं यथा। यमप्राणी कूं दावे तथा॥

॥ अडिल्ल ॥

सुभट वीर बहु जतन करे आयुध धरे।
भारी हय दन्ती बैठे रक्षा करे॥
यमराजा प्राणी को पकड़े आय के।
ज्यों मूसे को ग्रहे बिलाव सुधाय के॥

॥ चौपाई ॥

मंत्र जंत्र आदिक जे सबै । शरण जीव कूं नाही कबै ।
श्रीजिन भाषित धर्म प्रधान । सोई शरण जगत में जान ॥
निज देवी कूं चलती वार । रक्षा करन हेत निरधार ।
मघवा भी समर्थ नहिं होय । औरन कूं किम राखे सोय ॥

❀ कवित्त ❀

काल अगम्य विनाश रहित निर्भय अविकारी ।
ऐसो जो चिद्रूप शुद्ध निर्मल गुणधारी ॥
जगजीवन कूं शरण तास बिन अपर जु नाँही ।
मोह करम कर सहित चित्त जिनको जगमाँही ॥

इति अशरण भावना

* दोहा *

भ्रमत चतुर्गति में सदा, यह संसारी जीव ।
सुख पायो कभी नहिं, फंदे पड़ो सदीव ॥
सर्व जघन्य शरीर रख, क्रम २ मूरत द्रव्य ।
अपना कर पूरण कियो, द्रव्य परावर्त लव्व ॥
लोक मध्य में उपज के, लोकाकाश प्रमाण ।
निज शरीर अपना इयो, क्षेत्र परावर्त जान ॥
उत्सर्पिणि अवसर्पिणी, जन्म काल में लेय ।
समयाधिक अपनाय कर, कल्पकाल इमि देय ॥
सर्व जघन्य स्थिति धर, समयाधिक से जान ।

चारों गति की पर अपर, ग्रैवेयक लों मान ॥
स्थिति योग कषाय के, गुणित असंख्याते जान।
थान तिन्हें अपनाय कर, पूरे किये सुजान ॥
द्रव्य क्षेत्र अरु काल भव, भाव क्रम के थान।
तिनकी गणना ना करो, भासे वेद पुराण ॥
काल अनंता यों विता, दुखमें जग का जीव।
पार कठिनता से लहे, जग दुख पूर्ण अतीव ॥

* चौपाई *

जगमें भ्रमत जीव यह एक। जन्म मरण दुख लहे अनेक।
सुत बंधव दारा परिवार। संगी एक नाँहि निरधार ॥
कर्मन कूं करता तू सही। तिनको फलत् भोगे सही।
तन ममत्व तजि शिव सुख हेत। जतन करत क्यों नांहि अचेत ॥
कर्म नोकर्म रहत अनूप। रूपातीत शुद्ध चिद्रूप।
ताही में थिरता कर अबै। और विभाव त्याग कर सबै ॥

एकत्वानुप्रेक्षा

॥ अडिल ॥

कर्म भिन्न अरु क्रिया भिन्न पर मानिये।
भिन्न आपते देह सदा पुनि जानिये ॥
विषय इन्द्रियादिक एमी पर हैं सदा।
दारा सुत आदिक अपने नाँहीं कदा ॥

* चौपाई *

देहमई मैं हूँ सर्वथा । ऐसी मति धारो मत वृथा ।
वसन समान देह में जीव । तिष्ठत है दुख सहत अतीव ॥
तूं सब सेती भिन्न प्रधान । दर्शन ज्ञान चरित मय जान ।
कर्म रहित पुनि शिव आकार । निराकार गुणगण आगार ॥

अन्यत्व्यनुप्रेक्षा

* अडिल्ल *

मांस रुधिर अरु अस्थि मई यह देह है ।
स्रवत तास नवद्वार अशुचि को गेह है ॥
चर्म लपेटी दीसत है सुंदर महाँ ।
तासों रे मन प्रीति वृथा ठानत कहा ॥

* चौपाई *

जा शरीर को लह संयोग । चंदन आदिक द्रव्य मनोज्ञ ।
अति सुगंध सुखदायक जेह । घिन उपजावत है पुनि तेह ॥
शुक्र रुधिर तें उत्पति जास । कामसर्प को जामे वास ।
तासूं प्रीति कहा तूं करे । कछू विवेक न हिरदे धरे ॥
सर्व अशुचि कर हित प्रमान । सर्व देह वर्जित गुणवान ।
निराकार पुनि ज्ञान स्वरूप । भज तूं जीव सदा चिद्रूप ॥

इति अशुचि अनुप्रेक्षा

॥ चौपाई ॥

छिद्र सहित नौका में वारि । जैसे आवे उदधि मँझार ।
तैसे ही भवसागर माँहि । कर्म नीर आवे शक नांहि ॥

॥ दोहा ॥

पंचभेद मिथ्यात है, बारह अव्रत जान ।
भेद पचीस कषाय के, पंद्रा योग प्रमान ॥

॥ सोरठा ॥

ये सत्तावन भेद आश्रव के भाषै सबै ।
उपजावत हैं खेद चहुँ गति में भरमाय के ॥

॥ अडिल्ल ॥

आश्रव तें प्रानी संसार विषै भ्रमे ।
उदधि विषै जिमि काठ नाँहि थिरता पमे ॥
या तें आश्रव सकल पूर तज दीजिये ।
अविनाशी चिद्‌रूप ताहि भज लीजिये ॥

इति आश्रवानुप्रेक्षा

॥ चौपाई ॥

आश्रव को निरोध जो होय । संवर नाम कहावे सोय ।
दश विधि धर्म गुप्ति पुनि तीन । पंचप्रकार समिति अघ हीन ॥

* अडिल्ल *

अनुप्रेक्षा के बारह भेद सु जानिये।
पुनि दुद्धर बाईस परीषह मानिये॥
चारित्र पंच प्रकार सुधी जानो सही।
संवर के ये भेद कहे संशय नहीं॥

॥ चौपाई ॥

संवर तें भव उदधि मझार। पड़े नहीं जु जीव निरधार।
इष्ट सु पदकूं पावे सोय। यामें संशय नांही कोय॥
दुख सुख जन्म मरणतें हीन। शुद्ध आत्मा सदा अदीन।
ताही में निज मन अवधार। भ्रम बुद्धि को कर परिहार॥

इति संवरानुप्रेक्षा

॥ अडिल्ल ॥

रत्नत्रयरूपी पावक सेती सही।
पूरब बाँधे कर्म गलें संशय नहीं॥
जैसे पावक पवन लगे प्रजलै महाँ।
तैसे व्रत दर्शन आदिक कहनो कहा॥

॥ कवित्त ॥

प्रथम नाम सविपाक अवर अविपाक प्रमानो।
दोय भेद निर्जरा सुधी जन उरमें जानो॥
आदि निर्जरा सब जीव के जग के मांही।
दुतिय मुनिन के होय व्रतादिक तें शक नांही॥

इति निर्जरानुप्रेक्षा

॥ चौपाई ॥

है आकार अनंत प्रदेश । गोचर श्री सर्वज्ञ जिनेश ।
मध्य माँगला के निरधार । लोकाकाश तीन प्रकार ॥
असंख्यात परदेशी सोय । बात तीन कर बेढ़ित सोय ।
शोभित नभ में नखत समान । षट् द्रव्य निकट भरो प्रमान ॥
लोक तने बाहिर निरधार । द्रव्य रहित शाश्वतो विचार ।
कहो अलोका लोक अनंत । जानत श्री सर्वज्ञ महंत ॥
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर थोक । काहू ने कीनो नाँही लोक ।
ना इस करता हरता धनी । स्वयं सिद्ध रचना यह बनी ॥
त्वचा वृक्ष के ऊपर जेम । बात तीन कर बेढित तेमि ।
सदा शाश्वतो लोक प्रमान । नानाकार त्रिविधि संठान ॥
आकृति डेढ़ मृदंग समान । जामें इतनो अंतर जान ।
जैसे इनको है आकार । तैसो लोक स्वरूप विचार ॥
आकृति डेढ़ मृदंग समान । जामें इतनो अंतर जान ।
जैसे इनको है आकार । तैसो लोक स्वरूप विचार ॥
आकृति डेढ़ मृदंग समान । जामें इतनो अंतर जान ।
सूरज गोल आकार बखान । चौखटो है लोक प्रमान ॥

॥ दोहा ॥

अथवा पांव पसार कर, करि ऊपर कर धार ।
उन्नत ठाढ़े पुरुष को, ऐसो है आकार ॥

तैसो ही आकार है, लोक तनो निरधार।
थिति उत्पत्ति विनाश युत, संशय नांहि लगार॥

❋ अडिल्ल ❋

ऐसो बहु विधि रूप लोक कूं जान के।
निज कारज कूं करो नहीं हित ठान के॥
तो परिवर्तन भ्रम हो है के अति दुखी।
तातैं शांतभाव धर अब हूजे सुखी॥

इति लोकानु प्रेक्षा

॥ अडिल्ल ॥

एक निगोद जीव के अंग विषै सही।
सिद्धन तैं अनंतगुण जीव बसै तहीं॥
ऐसे ही सब लोक थावरन कर सदा।
भरो निरंतर तैं संशय नाँही कदा॥

॥ सोरठा ॥

निकस निगोद निरधार त्रस होनो दुर्लभ महा।
जैसे उदधि मझार रतन गिरो नहिं पाइये॥

❋ दोहा ❋

त्रस पर्याय विषै बहुरि, हैं विकलत्रय जीव।
पंचेन्द्रिय होना बहुरि, दुर्लभ है सु अतीव॥

॥ चौपाई ॥

पंचेन्द्री में भी पुनि जान । मृग पंछी अहि आदि प्रधान ।
वरतें जीव अनेक प्रकार । जिनके नांहि विवेक लगार ॥

॥ अडिल्ल ॥

पंचेन्द्रिय तिर्यंच थकी पुनि जानिये ।
मनुष जन्म लहिवो अति कठिन प्रमानिये ॥
मानुष भव हू पाय गयो पुनि जे सही ।
फेर मनुष होनो दुर्लभ शंशय नहीं ॥

॥ चौपाई ॥

जैसे वृक्ष महाँ सुखदाय । भस्म हेत दीनो सुजराय ।
ताही भस्म थकी पुनि सोय । चाहे पुनिसो किमि कर होय ॥
मनुष्य जन्म पायो सो कदा । दुर्लभ आर्य क्षेत्र पुनि तदा ।
उत्तम क्षेत्र लहो जो सही । उत्तम कुल दुर्लभ शक नहीं ॥
उत्तम कुल भी पायो जबै । इन्द्रिय पूरण दुर्लभ तबै ।
इन्द्रिय जो परि पूरन होय । तो संपदा लहे न कोय ॥
यदि घरमें जु होय संपदा । रोग रहित तन दुर्लभ तदा ।
एक एक ये दुर्लभ महाँ । सकल मिले तब कहनो कहा ॥
इह विधि सब सामग्री पाय । धर्म विषै जो मति नहिं थाय ।
मनुष जनम तो अफल असार । लोचन बिन मुखसम निरधार ॥
श्रावक मुनि को धर्म प्रधान । जगत विषै अति दुर्लभ जान ।
मुनि को धर्म पाय भी सही । आतम ज्ञान दुर्लभ शक नहीं ॥

॥ अडिल्ल ॥

आत्म लाभ तें परम ज्ञान दूजो नहीं।
आत्म लाभ सम उत्तम सुख नाँही कहीं॥
आत्म लाभ तें और ध्यान नहिं जानिये।
आत्म लाभ अपर न पद परमानिये॥
जो बुधिवंत निज आतम ज्ञान सु पाय के।
और ठौर अब बुद्धि करे मति चाय के॥
चिन्तामनि वर रत्न हाथ आवे जबै।
काँच बिषै पुनि प्रीति कहा करि है तबै॥

इति बोधि दुर्लभ अनुप्रेक्षा

❈ कवित्त ❈

श्री जिन भाषित धर्म सदा सेवो सुखकारी।
जा प्रसाद तें श्वान भयो सुख सु ऋद्धि धारी॥
तीन लोक को नाथ हेत पुनि धर्म हि सेती।
ऐसो धर्म पुनीत सदा करिये हित सेती॥

* चौपाई *

सो दश भेद धर्म पुनि जान। दुर्लभ मुनि गोचर अमलान।
तेरह भेद सहित सो सही। शिव पथ दायक संशय नहीं॥

* दोहा *

भव दुख सेती काढिके, धरे सु शिव पद माँहि।
सोई उत्तम धर्म है, यामें मिथ्या नाँहि॥

* अडिल्ल *

मोह कर्म तैं जे विकलप उपजैं सबै।
मन वच तनकर त्याग कीजिये तिन तबै॥
शुद्ध आत्मा विषै जु बुद्धि लगाइये।
धर्म नाम जो संत नरन कर गाइये॥

॥ चौपाई ॥

आत्म ध्यान धर्म उत्कृष्ट। आत्म ध्यान तप परम गरिष्ट।
यातैं और सकल तज नेह। निज स्वरूप ही चित को देह॥

इति धर्मानुप्रेक्षा

॥ दोहा ॥

इह विधि बारह भावना, भाई जीवक राय।
भवतन भोग विरक्त पुनि, चित्त भयो अधिकाय॥

॥ चौपाई ॥

राज्य रमा ग्रह आदिक सबै। जीरण तृण सम जानो तबै।
हाथ विषै जब अमृत होय। विष सेवन बाँछे नर कोय॥
सहस कूट जिन गेह विशाल। तहां गयो जीवक भूपाल।
वसु विधि पूजा करी बनाय। पुनि पुनि प्रणमो शीस नवाय॥
तहाँ दोय चारण मुनिराय। तिनके पद वंदे हर्षाय।
धर्म वृद्धि आशीष अनूप। देत भयो नृप को मुनि भूप॥
धर्म भेद नृप पूंछो जबै। ज्येष्ठ मुनीश्वर बोले तबै।
दर्शन ज्ञान चरण अमलान। उत्तम धर्म भूप सो जान॥

* अडिल्ल *

कर्म महा शत्रू के आगे जानिये।
दर्शन आदिक सो या भेद पर मानिये॥
आठ प्रकार कर्म के भेद जु हैं सही।
सुधी पुरुष अरि सम जीतें संशय नहीं॥

* चौपाई *

ज्ञानावरणी कर्म प्रधान। रोके ज्ञान शक्ति बलवान।
पंचभेद ताके दुखदाय। आगम में भाषं जिनराय॥
कोड़ा कोड़ी सागर तीस। थिति उत्कृष्ट कही जगदीश।
कर्म दर्शनावरणी अबै। प्रकृति पंच चउ जानो सबै॥
ज्ञानावरणी सम थिति तास। दर्शन को नहिं करे प्रकाश।
कर्म वेदनी दोय प्रकार। सुख दुखको दायक निरधार॥
ज्ञानावरणी कर्म समान। कर्म वेदनी की थिति जान।
मदिरावत जीवन कूं जोय। मोहित करे मोहनी सोय॥

॥ दोहा ॥

सत्तर कोड़ा कोडि मिति, सागर की थिति जान।
बीस आठ पुनि प्रकृति हैं, भाषी श्री भगवान॥

॥ चौपाई ॥

तीस तीन सागर परजंत। आयु कर्म थिति जानो संत।
चार भेद सो धारे सही। बेडी सम है संशय नहीं॥

नाना नाम कर्म के दक्ष। प्रकृति तेरानवे जास प्रदक्ष।
कोड़ा कोड़ी बीस प्रमान। थिति युत नाम कर्मसो जान॥

॥ अडिल्ल ॥

नाम कर्म सम जो थिति अप अनुपरत हैं।
कुंभकार सम पुनि स्वभाव भी धरत हैं॥
ऊंच नीच युग गोत्र करन कूं जो सदा।
है समरथ सो गोत्र कर्म जानो तदा॥

॥ चौपाई ॥

ज्ञानावरणी सम थिति ज्ञास। अंतराय पुनि भेद प्रकाश।
भंडारी सम जानो संत। करत जीव को विघन अतंत॥
कर्मन करिके बंधो जु सदा। मोक्ष जान समरथ नहीं कदा।
वैरिन कर बाँध्यो नर कोय! ज्ञान समर्थ कहां सूं होय॥
तिन कर्मन के नाश निमित्त। धारैं धर्म सुधी नर चित्त।
तातैं जीवंधर निरधार। करो धर्म को अंगीकार॥

॥ दोहा ॥

मुनि मुखतैं इम धर्म सुन, जीवंधर नर राय।
मुनि सों पुनि पूछत भये, विनय सहित हर्षाय॥

॥ चौपाई ॥

हे मुनीश तुम दया निधान। बिन कारन तुम बंधु महान।
मेरे पूरव भवजे सबै। कृपा सिंधु तुम भाषो अबै॥
भूपति के इम सुनके वैन। कहत भये श्री मुनि वच एन।

हे नृप तुम भव को चिरतंन । कहूँ सुनो चित थिरकर संत ॥
द्वीप धातुकी खंड मझार । पूर्व मेरु जानो निरधार ।
पूर्व विदेह तास अभिराम । पुष्कलावती देश ललाम ॥
तामधि पुंडरीकनी पुरी । तिहि सुवर्ण परजा कर भरी ।
पुरुष शला का उपजे तहाँ । अंतर तहां होत नहिं कदा ॥
तहाँ जयंधर नामा भूप । धर्म धुरंधर काम स्वरूप ।
जयावती रानी नृप गेह । रूपवान कंचन सम देह ॥
तिनके सु दिव्र पुत्र वर भयो । नाम जाय जयरथ नृप दयो ।
पुत्र पाँचसौ और अनूप । होत भये नृप के वर रूप ॥
गहन मनोहर में एकदा । क्रीड़ा करन गये सब मुदा ।
तिन पुत्रन कर सोहत भूप । उडु गनमें जिमि चंद्र अनूप ॥
तहाँ सरोवर एक अनूप । फूले कमल तहां वर रूप ।
राजकुमार सबै हर्षाय । सखर के तट उतरे जाय ॥
तहां सकल ते राजकुमार । क्रीड़ा कीनी विवध प्रकार ।
एक हँस को बाल अनूप । उज्ञवल वरन महा शुभ रूप ॥
तेरे संग के सेवक सबै । पकरो हँस बाल सो तबै ।
जयरथ को दीनो तिन ल्याय । हँस हंसनी अति दुख पाय ॥
शोक वसाय गगन में शोर । करत भये द्विज चारों ओर ।
तेरे सेवक दुष्ट सुभाय । वाय खेंचकर बांन चलाय ॥
जाय हँस के लागो तीर । धरनी विषै परो सह पीर ।
हँस मृतक लख ताकी माय । निज मनमें दुखी अधिकाय ॥

* अडिल्ल *

जायावती सेवक न थकी पूंछत भई ।
महां निन्द्य यह काज कियो क्यों अघमई ॥
कटुक वचन कहिके खेतल डाटे सबै ।
और पुत्र को भी निन्द्यो बहु विधि तबै ॥

* छप्पय छन्द *

ऐसो हिंसा कर्म नहीं है सुत तो लायक ।
जा संती अघ होय महाँ नारक गति दायक ॥
जातें ऐसो कर्म भूलिके भी नहिं करिये ।
धर्म अहिंसा रूप सदा निज उरमें धरिये ॥
ऐसे जननी के वचन सुनि कहत भयो पुनि नंद तब ।
मैं बिना विचारो काज यह कियो मात क्षमिये सु अब ॥
षोड़स दिन परजंत हँस राख्यो अति हित कर ।
बहुरि हँसनी सों मिलाय दीनो करुणा धरि ॥
जैसे अलि को कमल थकी जु मिलाय देत रवि ।
तैसे दियो मिलाय हँस बालक सुन्दर छवि ॥
जयरथ कुमार पुनि तात ढिग क्रीड़ा करत रहे सुखित ।
पुनि पाय तात पद नीति युत राज करत तिष्ठै विदित ॥

* अडिल्ल *

राज करत कछु काल वितीत भयो जबै ।
काल लब्धि तें कारन आप मिलो तबै ॥

भ्रात पंचशत सहित सु बनमें जाय के।
जात रूप जिन दीक्षा लीनी चाय के॥

॥ चौपाई ॥

दुद्धर तप बारह विधि करे। धर्म ध्यान नित हिरदे धरे।
सकल जीव की रक्षा सदा। करे प्रमाद धरे नहिं कदा॥
ग्रीषम काल बसै गिरि शीष। वर्षा में तरु तल गुण ईश।
शीत माँहि तरनी तट रहे। ध्यान अग्नि तें कर्मन दहे॥

* दोहा *

अंत समय सन्यास युत, प्राण किये निज त्याग।
पंचम स्वर्ग विषै भयो, मघवा अति बड़भाग॥
भ्रात पंचशत मरण कर, तिसही स्वर्ग मंझार।
होत भये सुर सो सबै, अणिमादिक ऋधि धार॥

॥ चौपाई ॥

अवसो हरि उपजो तिहि ठाम। कोमल सेज विषै गुण धाम।
अवधि जोड़ सब जानो एम। व्रत फलकूं पूरव भव जेम॥
जिन शासन सेवो बहु भाय। धर्म विषै दृढ़ता मन ल्याय।
सदा शास्वते श्री जिन धाम। पूजा करी तहां अभिराम॥
महाँ मेरु नदीश्वर आदि। पूज तहां जिन बिम्ब अनादि।
कल्याणक पूजा विस्तरे। पुण्य भंडार देव यों भरे॥
सागर थिति दस जास प्रवान। पाँच हाथ तन उन्नत मान।
दश हज़ार वर्ष जब जाँहि। अशन चाह उपजे उर माँहि॥

अनुपम अमृत सम आहार। मनसे भुंजे इन्द्र उदार।
पांच मास पुनि बीते तबै। लेत सुगंध श्वास तो तबै॥
अवधि तृतीय नरक परजंत। यही विक्रया बल विरतंत।
अवधि क्षेत्र जावत जो पान। होत विक्रया तावत मान॥

* दोहा *

सुनत गीत संगीत धुनि, निरखत नृत्य साल।
सुख सागर में मगन रह, जात न जाने काल।

॥ चौपाई ॥

जयरथ चर हरि चय इत आय। उपजे तुम जीवंधर राय।
पुन्यवान सज्जन बलवंत। सकल कला को पायो अंत॥
ताहर की देवी पुन चई। पटरानी तेरी शुभ भई।
गंधर्वदत्ता आदिक नाम। धरे नेह रूप अभिराम॥
राजपुत्र चर पनशत एव। दुद्धर तपकर उपजे देव।
ते सब स्वर्ग लोक तें चये। पद्मास्यादिक भ्राता भये॥
हत्यो तीर सेती जुमराल। भवबन माँहि भ्रम्यो चिरकाल।
दैव योग तें काष्ठाँगार। होत भयो जानो निरधार॥

॥ सोरठा ॥

भारवाह अति दुष्ट, पूरव भव के वैर तें।
होय महां अति रुष्ट, सत्यंधर भूपति हत्यो॥

* अडिल्ल *

कियो विछोहो भूप हँस को तात सूं।
तातें भयो वियोग तात अरु मात सूं ॥
सोलह दिन बंधन में राखो पुन सही।
तातें बंधन काट लहो संशय नहीं ॥

॥ चौपाई ॥

तातें बुद्धीवंत जे जीव । काहू को न विरोधे सदीव ।
दुष्ट कर्म थोरे भी भूप । परभव में दुख देंहि विरूप ॥
तथा वैर काहू सों सदा । सुधी पुरुष करि हैं नहिं कदा ।
बहुत वैर कोई भव माँहि । ले प्रति वैर जु संशय नांहि ॥
ऐसे सुनि नृप हर्षित भयो । भव दुखतें अति विरकत ठयो ।
श्री मुनि युग कूं कर सुप्रणाम । परिजन सहित गयो निजधाम ॥
गंधर्वदत्ता को वर नंद । सत्यंधर नामा गुण वृन्द ।
राज देन को जाहि बुलाय । इह विधि वचन कहे नरराय ॥
भो सुत मैं जिन दीक्षा सार । अंगीकार करो निरधार ।
तातें राजभार तुम लेव । सब जन को प्रतिपाल करेव ॥

* अडिल्ल *

पुनि सुत को सिंहासन पर बैठाय के ।
सब भूपन के आगे हर्ष बढ़ाय के ॥
विधि पूर्वक अभिषेक कियो नृपको जबै ।
निज पद विषै जु थाप निशल्य भयो तबै ॥

* चौपाई *

सब परिवार सहित नर राय। चल्यो ग्रेह तें अति हर्षाय।
समव शरण में जाय तुरंत। देखे महावीर भगवंत ॥
तीन प्रदक्षिणा दे शिरनाय। चरण कमल युग वंदे राय।
अष्ट प्रकारी पूजा करी। भवसागर तरिवे कूं तरी ॥
भक्ति भाव जीवक नर राय। करत भयो इम थुति गुणगाय।
जिन पुंगव सर्वज्ञ महाँन। सकल कर्म वर्जित भगवान ॥

॥ अडिल्ल ॥

स्वामी मैं भवरोग थकी पीड़ित अबै।
ताके ज्वर तें काँपत है यह तन सबै ॥
बिन कारण तुम वैद्य जगत के हो सही।
तातें तुमरो शरण लहो संशय नहीं ॥

* कवित्त *

पीड़ा जो उत्पन्न भई मेरे अति भारी।
तुम समर्थ है क्षमा करोगे किम दुख हारी ॥
जो नर आवे शरण पाय कर कष्ट अपारा।
पुरुष महंत विचार करे नाँही निरधारा ॥
तुम सब कारज करन विषै समरथ हो स्वामी।
सकल पदार्थन को ज्ञाता होगे जग नामी ॥
दयावंत लख शरण नाथ मैं आय गहो है।
कर्मन को भय देख मोह कछु नाँहि रहो है ॥

धारा धर सब विद्यमान तुम हो जगनायक।
भव बनमें इम मोह अनल जारत दुख दायक॥
ता करि मेरो अंग जरत है भव भव मांही।
ताहि बुझावन को समर्थ तुम हो शक नाँही॥
यह संसार असार विषम विष साखी जानो।
दाता सब आपदा रूप फल को उर आनो॥
राग रूप अंकूर जास अति ही दुखदाई।
सो अब जग तैं दूर करो मेरे जगराई॥
भवसागर में भ्रमण करत आयो चिर सेती।
अब मैं ज्ञान जहाज़ लहो अति ही दुख सेती॥
मोक्ष द्वीप के लाभ हेत मैं शरण गही है।
करुणाधार तुम होहु नाथ मो अरज़ यही है॥
कर्म रहित पुनि निराकार तुम नाथ निरंतरातर।
शब्द रहित सुख सहित ज्ञानमय सदा स्वतंतर॥
इन्द्रिय करके गम्य नहीं तुम जगत मँझारा।
ऐसो जो तुव रूप ताहि बंदो निरधारा॥
सब दुख शांति निमित्त शरण में गही जु तेरी।
तुम बिन कौन समर्थ मिटावे जो भव फेरी॥
धारा धर बिन और नहीं दीसे जग मांही।
ताप निवारन हार तुम्हीं संशय कछु नांही॥

❀ अडिल्ल ❀

पुरुष श्रेष्ठ तुम होय प्रसन्न दया करो।
भव दुखतैं भयभीत मोहि अब उद्धरो॥
शिव थानक में पहुँचावो अब ही सही।
ध्यान सिद्धि पुनि करो अरज मेरी यही॥

॥ चौपाई ॥

ऐसी थुति करके नरराय। पुनि प्रणाम कीनो शिरनाय
गौतम आदिक गणधर सबै। तिनको नमत भयो नृप तबै॥
मित्र पँचशत सहित नरेश। लहो ज्ञान को उदय विशेष।
पुनि कर जोड़ प्रार्थना करी। जिनदीक्षा दीजे इस घरी॥
पुनि जिनवरको आश्रय लियो। दीक्षा को तब उद्यत भयो।
बाह्य परिग्रह दश विधि जेह। वसनादिक त्यागे नृप तेह॥
पुनि मिथ्यात आदि दश चार। अभ्यंतर परिग्रह निरधार।
तिनि सबको भी कीनो त्याग। जात रूप धारो बड़भाग॥

॥ सवैया ॥

पंच महाव्रत समिति पंच पुनि, पन इन्द्री निरधार।
षट् आवश्य क्रिया नित पालें, सोवत प्रासुक भूमि मंझार॥
मंजन करें नहीं कचलुंचे, तन वस्तर त्यागी अविकार।
करें दंत धावन नहिं ठाढ़े, लघु भोजन ठानें इक बार॥

* दोहा *

बीस आठ ए मूलगुण, उत्तर गुणन समेत ।
जीवक पुनि धारत भयो, कर्म खपाने हेत ॥

॥ चौपाई ॥

पद्मास्यादिक पनशत भ्रात । भव दुखतें विरक्त अवदात ।
तबही जीवंधर के सँग । जिन दीक्षा लीनी सु अभंग ॥
तथा और पुनि राजकुमार । सँख्या पंचशतक निरधार ।
तजिके परिग्रह दुविधि अशेष । जिनदीक्षा लीनी सु विशेष ॥

* अडिल्ल *

नारी गंधर्वदत्ता आदिक जे सबै ।
वीर जिनेश समीप विरक्त भई तबै ॥
साड़ीश्वेत बिना परिग्रह सब छोड़ के ।
लियो चंदना के ढिग तप कर जोड़ के ॥

॥ चौपाई ॥

अब जीवंधर मुनि योगीश । ध्यान विषै मन महाँ सुधीश ।
सरिता बन गिरि गुफा मंझार । ध्यान धार निवसे अविकार ॥

॥ सोरठा ॥

अब जीवक नर संत, आज्ञा लेय जिनेश की ।
एकाकी विचरंत, सोई कथन कहूँ अबै ॥

* चंचरी—छन्द *

अनशन अवमोदर्य सु तप करि अंग सर्व बहु शिथिल भयो है।
शमदम अमृत पान जु करके उरमें अति संतोष लयो है॥
कंकर तपत चुभत कंटक पग दिनकर अंबर मध्यठयो है।
तिह अवसर जीवक चर्या दुख रहित नेक चित नाहिं नयो है॥
चलत पंथ रवि अस्त होत जंह अंधकार फैलत सब ठाँही।
कायोत्सर्ग ध्यान वर धरिके रजनी तहाँ व्यतीत कराही॥
अमर आय जो ताहि चलावें तोभी चलत तहाँ ते नाँही।
ऐसे श्री जीवंधर मुनि कूं हाथ जोड़ हम शीस नवाहीं॥
चमकत बीज गरज घन बरसत कायरजन नहिं धीर धरे हैं।
सिंह स्याल बन माँहि पुकारत पवन प्रबल कर वृक्ष हले हैं॥
वर्षा होत भयंकर अह निशि नदी सरोवर ताल भरे हैं।
मुनि जीवक तरु नीचे बैठे पावस रैन व्यतीत करे हैं॥
मकर राशि जब सूरज आवत परत शीत दाहत बनराई।
झंझा वायु बहै हिम वर्षे नदी ताल सरवर जम जाई॥
तन अडोल निशि वसत चौहट्टे तटनी तट भय नाँहि धराई।
वसन हुताशन चाह रहित मुनि तास चरण बंदों शिर नाई॥
शैल शिला धरनी दिनकर के किरनन करिके तप्त भई है।
होत पवन संचार नेक नहिं वापी सरिता सूख गई है॥
दिनकर गगन मध्य पुनि आयो ता कर गर्मी अधिक थयी है।
तिहि अवसर जीवक मुनि ठाड़े गिरि ऊपर हम धोक दई है॥

* चौपाई *

पाख मास आदिक उपवास । करत भयो तजके तन आस ।
दुद्धर तप धारत बहु भाय । अमर समूह नमत शिरनाय ॥
यथा योग्य आगम अनुसार । तन थिति हेत करत आहार ।
धरत देह तप वर्द्धन हेत । शिव निमित्त तप करत सुचेत ॥
परिग्रह वर्जित पवन समान । रत्नत्रय धारत अमलान ।
बारह विधि तप पालन सदा । पुनि प्रमाद धारैं नहिं कदा ॥
एक दिवस जीवक मुनि संत । कर्म नाश के हेत तुरंत ।
निर्मल प्रासुक विपन मँझार । तिष्ठो शिव वांछा उर धार ॥
अनंतानुवंधी की चार । तीन मिथ्यात पृकृति अविकार
ये सातों चौथे गुणठान । पहिले नाश करी परवान ॥

॥ अडिल्ल ॥

अब पुनि धर्म ध्यान बल सेती जानिये ।
बिना जतन ही तीनों पृकृति मानिये ॥
नारक तिर्यंच देव आयु जानो सही ।
सप्तम गुण ठानें जीती संशय नहीं ॥

॥ चौपाई ॥

पुनि अष्टम गुण ठान मझार । करण तीन करके निरधार ।
प्रथम शुक्ल बल सेती धीर । क्षपक श्रेणि चढ़के वरवीर ॥
अब नवमें गुणथानक आय । भाव जु नव कीने तिहठाय ।
पृकृति छत्तीस तहां क्षयकरी । तिनके नाम सुनो उर धरी ॥

॥ पद्धड़ी छंद ॥

साधारण आतप पृकृति जान। एकेन्द्री बेइन्द्री पुमान।
तेइन्द्री चौइन्द्री गनेहु। ए चारि जाति की पृकृति लेहु॥

॥ अडिल्ल ॥

निद्रा तीन प्रकार सुधीजानो सही।
बहुरि नर्क गति नर्क आनुपूर्वी कही॥
थावर सूक्ष्म पृकृति दोय ए जानिये।
तिर्यंचगति अरु आनुपूर्वी मानिये॥

॥ सोरठा ॥

पृकृति उद्योत विचार, ए नवमें गुण थान में।
पहिले भाग मंझार, नाश करी संशय नहीं॥

॥ चौपाई ॥

बहुरि अप्रत्याख्यान विचार। प्रत्याख्यान चार निरधार।
ये आठों कषाय बलवान। हती भाग दूजे में जान॥

॥ अडिल्ल ॥

तीजे भाग नपुंसक वेद पुमानिये।
वनिता वेद भाग चौथे में जानिये॥
हास्यादिक षट् पंचम भाग विषै सही।
छठे भाग पुनि पुरुष वेद संशय नहीं॥

* कवित्त *

क्रोध संज्वलन मान भाग सातवें मंझारा।
मान आठवें भाग विषै जानो निरधारा॥
माया नवमें भाग ध्यान वल जीत सुतीनी।
पृकृति छत्तीस नवें गुण थानक इम क्षय कीनी॥

* दोहा *

दशवें गुण थानक विषैं, सूक्षम लोभ खपाय।
आगे और कथन अबै, सुनो संत मन लाय॥
एकादशम उलंघ पद चढ़े बारवें थान।
कर्म पृकृति सोलह तहाँ नाश करी अवसान॥

॥ चौपाई ॥

निद्रा प्रचला दोऊ जान। दर्शन चक्षु अचक्षु प्रमान।
अवधि-दर्शनावरणी कही। पुनि केवल आवरणी सही॥
मति श्रुत अवधि ज्ञान परधान। मनपर्यय पुनि केवल ज्ञान।
इनके पंच आवरण जेह। नाश कियो पुनि छिनमें तेह॥
दान सु लाभ भोग उपभोग। पुनि वीर्यान्तराय अमनोग।
अंतराय की पृकृति जु एह। पांचों नाश करी दुख गेह॥
इह विधि त्रेसठ पृकृति निवार। घाते कर्म घातिया चार।
तवही उपजो केवल ज्ञान। लोकालोक प्रकाशन भान॥
तेरहवें गुण ठान मंझार। ठये अनंत चतुष्टय धार।
जीवंधर जिन शोभित भये। गुण अनंत कर पूरन थये॥

चतुर निकाय सकल सुर आय। गंधकुटी शुभ रची बनाय।
तास मध्य जीवक भगवंत। सिंहासन ऊपर शोभंत॥
देवन सहित तबै सुर राय। करत भये प्रणाम शिरनाय।
उत्तम आठों द्रव्य चढ़ाय। पूजा कीनी भक्ति बढ़ाय॥

॥ दोहा ॥

गणधर मुनि नृप सुर सबैं, कर स्तुति बारंबार।
यथा योग्य थानक विषै, बैठे सब निरधार॥
विकसित मुख सुरनर सकल, जिन सन्मुख कर जोर।
निवसे वाणी सुनन कूं, ज्यूं चातक घनघोर॥
तब श्रीमुख वाणी विमल, बिन अक्षर गंभीर।
महा मेघ की गरज सम, खिरी हरन जग पीर॥

॥ चौपाई ॥

लोका लोक अनंत महान। प्रथम कहो ताको व्याख्यान।
जीव द्रव्य के भेद अनंत। ताको कथन कहो अब तंत॥
कर्म भेद पुनि अष्ट प्रकार। ताको कहो सकल विस्तार।
श्रावक को पुनि धर्म अनूप। भाषो ग्यारह प्रतिमा रूप॥
तेरह विधि श्रीमुनि को धर्म। कहो लहैं जासों शिव शर्म।
ज्ञान भेद पुनि आठ प्रकार। पंच भेद संसार विचार॥
सप्त तत्व पंचास्ति जु काय। षट द्रव्यन को भेद बताय।
पुनि दश धर्म तनो व्याख्यान। भिन्न भिन्न भाषो भगवान॥

तीर्थंकर चक्री बलदेव । वासुदेव प्रति हरि पुनि एव ।
ये सब त्रेसठ पुरुष प्रधान । तिनको भाषो कथन महान ॥

॥ दोहा ॥

इम वाणी सुन सकल जन, लह्यो अधिक आनन्द ।
जैसें दिन कर उदय तें, विकसें वारिज नंद ॥
अब जीवंधर केवली, जिन जिन देश मँझार ।
विहरो जीवन तारतो, भव शोभा निरधार ॥

* चौपाई *

द्रोण देश कश्मीर कलिंग । चीन भोट बाल्हीक तिलंग ।
मालव देश और गुजरात । अंगदेश सोरठ विख्यात ॥
कर्णाहक द्राविड़ पंचाल । काशी कौशल देश विशाल ।
मगध अवंती अति अभिराम । इत्यादिक देशन के नाम ॥
इन सब देशन में निरधार । इच्छा बिन जिन कियो बिहार ।
धर्म रूप धन जल वर्षाय । सब जन सुखित किये अधिकाय
पुनि संयोग तजिके स्वयमेव । आये फिर अयोगि पद देव ।
अक्षर पँच लघू थिति जहां । चतुर्थ शुक्ल ध्यान बल तहां ॥
दोय चार समये परमान । शेष कर्म क्षय उद्यत जान ।
प्रकृति बहत्तर तेरह हनी । तिनके नाम कहूं सो गनी ॥

॥ कवित्त ॥

गंध दोय रस वर्ण देह संघात जु बंधन ।
पंच पंच प्रत्येक सुधी जन इतीं लेय गण ॥

संस्थान संहनन उभय षट् षट् जु गनिज्जे ।
तथा देवगति देव आनुपूर्वी जु भनिज्जे ॥

* चौपाई *

पुनि विहाय गति दोय प्रमान । अरु परघात कर्म पुनि जान ।
तथा अगुरु लघु पृकृति उच्छ्वास । पुनि अपघातअजस दुखरास
अनादेय शुभ जुग सुर दोय । थिर युग फरस आठ विधि होय
पुनि निर्माण पृकृति जानिये । अंगोपाँग तीन मानिये ॥

* दोहा *

अपर्याप्ति दुर्भग पृकृति, पुनि प्रत्येक शरीर ।
नीच गोत्र अरु वेदनी, जान असाता वीर ॥

॥ चौपाई ॥

समुच्छिन्न किरिया निवृत्त । शुक्ल ध्यान बलतें जु विदित्त ।
पहिले समय विषैं निरधार । पृकृति बहत्तर करकें छार ॥
पीछे पुनि जीवक भगवान । शेष कर्म हन उद्यम ठान ।
प्रथम पृकृति आदेय प्रमान । नरगति नर आयु पुनि जान ॥
पुनि पंचेन्द्री जाति गनेहु । यश परजापति पृकृति भनेहु ।
त्रस बादर दोउ जानेहु । इह विधि ही श्रद्धा करि वेहु ॥
उच्च गोत्र साता वेदनी । पृकृति तीर्थंकर नाम जु हनी ।
तेरह पृकृतिन को समुदाय । चरम समय में नाश कराय ॥
एक समय ही में निर्वाण । पहुँचे जीवंधर भगवान ।
पूरव चरम देह तें लेश । भये हीन आतम परदेश ॥

अष्टगुना तम नय व्यवहार । निहचे गुण अनंत आधार ।
परम सुखालय वासो लियो । आवागमन जलाँजलि दियो ॥

॥ दोहा ॥

जाके नाम प्रभाव नर, होय भव दिधि पार ।
ध्यान धरें जे मन विषै, ते पावें शिव सार ॥

॥ चौपाई ॥

ऐसे जीवंधर मुनि राय । तिनकूं मैं वंदों शिरनाय ।
कर्म दावानल नाशन हेत । देहु भक्ति जल दया समेत ॥
विहित पद्म आदिक अनगार । दुर्धर तप बारह विधि धार ।
शुद्धभाँव से जुत तप करें । रागद्वेष मनमें नहिं धरें ॥
वर्षा काल वृक्ष तल धीर । शीतकाल सरिता के तीर ।
गरमी में गिरि शिखर मंझार । ध्यानधारि तिष्ठें अविकार ॥
अंत समय सुधार सन्यास । आराधन भाई तज आश ।
यथा योग्य निज तप अनुसार । भये देव सब स्वर्ग मंझार ॥
नृप जीवक की नारी सबै । कर चिरकाल महाँ तप तबै ।
युत समाधि तन तज दुख मई । यथा योग्य स्वर्गन में गई ॥

❀ कवित्त ❀

नृप जीवक दर्शन व्रत धारक जाको यश विख्यात अपार ।
मंद बुधि ताको चरित्र में किंचित् कीनो मति अनुसार ॥
स्वर्ग मोक्ष सुखके अर्थी जे पढ़ें सुनें चितकर अविकार ।
ते जगमें बहु विधि सुख पावें सत्य पुरुष जानो निरधार ॥

* सवैया *

मूल संघ सरस्वती गच्छ बलात्कार गण।
धारत विशाल मति विदित भुवन में॥
आचारज शुभ चंद्र नाम गुण को निधान।
वादी गज पंचानन गाढ़ो निज पन में॥
कर्त्ता पुराणन को वक्ता जिन ग्रंथन को।
अच्छन को जेता जाके माया नहीं मनमें॥
जीवंधर भूप को चरित्र यह कीनो सार।
रहो जयवंतो रवि शशि लों गगन में॥

* छप्पय *

आचारज शुभचन्द्र महां पंडित विशाल मति।
कियो संस्कृत पाठ ताहि समझे न तुच्छ मति॥
ताही के अनुसार अर्थ जो मनमें आयो।
निज परहित सु बिचार किमपि भाषा करि गायो॥
जो छंद अर्थ अनमिल कहीं वरनो होय अजान कें।
लीनो समार बुधिजन सकल यह बिनती उर आनिकें॥

॥ गीतिका छन्द ॥

अपनी बड़ाई के निमित्त सु ग्रंथ यह नाही रचो।
ऐसो न कोई भाष है अभिमान से भी नहिं रचो॥
धर्म में नित प्रीति जिनके ते गृहस्थ वखानिये।
तिनको जु हित दायक सु अरु निज पुण्य हेत ममाणिये॥

॥ चौपाई ॥

नगर आगरो परम पुनीत । साधर्मी जहां बसें विनीत ।
जहाँ कमल शाह सेठ सुजान । गुणगण मंडित पुण्य निधान ॥
ताके तनुज दोय गुणवान । निज कुल कमल प्रकाशन भान ।
जेठो शोभाचन्द्र उदार । लघुसुत गोकुलचन्द विचार ॥
बंश खंडेलवाल अवदात । गोत बिलाला जग विख्यात ।
अन्नोदक को कारण पाय । बसे भरतपुर में पुनि आय ॥

॥ दोहा ॥

नन्दन शोभा चंद्र को, नथमल निपट अयान ।
शब्द कोश पिंगल तनो, ज्ञान अंश नहिं जान ॥

॥ चौपाई ॥

संघी चाँद बड़े प्रसिद्ध । केशोदास धरत बहु रिद्धि ।
मयाराम ताको सुत सही । ये उदार जानें सब मही ॥
मायाराम ने हेत कर राखे अपने पास ।
काम खज़ाने को दयो नथमल कूं सुख राश ॥
पुनि भाषा रचना विषे धारो हम उपयोग ।
पै सहाय बिन होय नहिं तबहिं मिल्यो इक योग ॥
नगर करोरी के विषे श्री जिन गेह मझार ।
लालचंद पंडित रहें विद्यावान उदार ॥
नथमल ने चंदलाल सों कही प्रीति सरसाय ।
मूल ग्रंथ को अर्थ तुम मोकूं देउ बताय ॥

मूल ग्रंथ बहु कठिन है सुनें जु पंडित होय।
भाषा रचना होय तो पढ़ें सुधी सब लोय॥
अर्थ समझ कुछ लाल सों जीवक चरित्र उदार।
नथमल ने भाषा रची निज मति के अनुसार॥
जिन शासन अनुसार सब कथन आदि अरु अंत।
निज कपोल कल्पित कहों समझो मत मतिवंत॥
एक वरस कछु अधिक दिन लागे करन निवेर।
बुधि थोरी थिरता अलप तातें लगी अवेर॥

॥ छप्पय ॥

नमों देव अरहंत सकल तत्वारथ भाषी।
नमों देव भगवान ज्ञान मूरति अविनाशी॥
नमों सिद्ध निर ग्रंथ दुविधि परिग्रह परित्यागी।
जात रूप जिन लिंग धार बन बसे विरागी॥
बंदों जिनेश भाषित धरम देय सर्व सुख संपदा।
ऐ उत्तम हैं तिहुँ लोक में करो क्षेम मंगल सदा॥

* चौपाई *

संवत् अष्टादश शत जान। अधिक और पैंतीस प्रमान।
कातिक सुदि नौमी गुरुवार। ग्रंथ समापति कीनो सार॥

आचार्य शुभचन्द्र कृत संस्कृ जीवंधर चरित्र की नथमल बिलाला कृत भाषा टीका में जीवंधर मोक्ष।

गमन वर्णन नाम १३वां सर्ग

गन्धर्वदत्ता द्वारा वीणा में गाया हुआ पद्य

जिनस्य लोकत्रय वन्दितस्य
प्रक्षालयेत्पाद सरोज युग्मम्
नख प्रभा दिव्य सरित्प्रवाहैः
संसार पंकं मयि गाढ़ लग्नम्।

अर्थ—तीन लोक द्वारा वंदनीक जिन भगवान के चरण कमल अपनी नाखूनों की प्रभा रूपी पवित्र नदी के प्रवाह द्वार मेरे अन्दर लगे हुये सँसार कीचड़ को दूर करें।

जीवंधर स्वामी द्वारा किसान को दिया हुआ सच्चे धर्म का उपदेश

षट्कर्मोपस्थितं स्वास्थ्यं तृष्णाबीजं विनश्वरम्।
पापहेतुः परापेक्षि दुरन्तं दुःख मिश्रितम्॥

अर्थ—असि मसि कृषि विद्या शिल्प वाणिज्य इन छह कर्मों से उत्पन्न सुख तृष्णा का कारण, नाशवान् पापहेतु दूसरों की अपेक्षा रखनेवाला, अन्त में दुखदाई और दुख से मिला हुआ है।

आत्मोत्थ मात्मनासाध्य मव्याबाधमनुत्तरम्।
अनन्तं स्वास्थ्य मानन्द मतृष्ण मपवर्गजम्॥

अर्थः—अपनी आत्मा मात्र से उत्पन्न हुआ सुख, आत्मा के द्वारा साध्य बाधारहित, सर्वोत्कृष्ट, अनंत आनंदमय, तृष्णारहित और मोक्ष स्वरूप है।

अंतिम वक्तव्य

कविवर नथमल जी विलाला कृत भाषाछन्दबद्ध जीवंधर चरित में दंडकवन में तापसियों के साथ जीवंधर जी का विवाद तथा पँचपरावर्त्तनों का बहुत ज्यादा विस्तार से वर्णन किया गया है. सर्वसाधारण को इन दोनों प्रकरणों के समझने में कठिनता अनुभव होती है तथा इन प्रकरणों से कथा का रस इतना नहीं रहता, साधारण पाठक इनसे ऊब कर कथा का भी रस नहीं लेते इसलिये हमने इन दोनों प्रकरणों का विशेष स्वरूप नहीं प्रगट किया है जिज्ञासु पाठकों को मूल ग्रंथ से अथवा अन्य शास्त्रान्तरों से जान लेना चाहिये।

प्रकाशकः—